# चौथी दुनिया

हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

www.chauthiduniya.com

मूल्य 5 रुपये

दिल्ली, 1 फरवरी–7 फरवरी 2010



**उफ, यह महंगाई!**

पेज 5

**अल्फांजो आम का भविष्य अधर में है**

पेज 7

**नक्सलवाद के विरुद्ध अहिंसा ही एकमात्र अस्त्र**

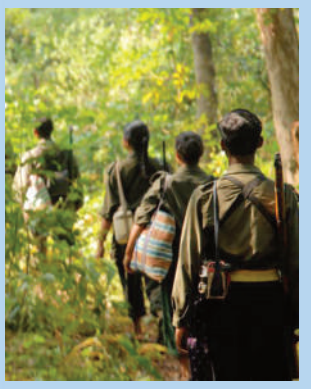

पेज 9

**साई धर्म और मज़हब से परे हैं**

पेज 12

# लालू-कांग्रेस आमने-सामने

**बिहार में विधानसभा चुनाव दरवाज़े पर दस्तक देने लगी है. नीतीश कुमार अलग अलग इलाक़ों में जाकर जनसमर्थन जुटा रहे हैं, तो कांग्रेस भी उत्तरप्रदेश की तर्ज पर, बिहार में संगठन मज़बूत करने और अपनी खोई हुई ज़मीन वापस जीतने की जुगत में लगी है. भारतीय जनता पार्टी और संघ ने भी अपनी पूरी ताक़त बिहार में झोंक दी है. इस बीच लालू यादव ने एक मास्टर स्ट्रोक खेला है. यादव और मुसलमानों को फिर से एकजुट करने की एक ज़ोरदार योजना लालू प्रसाद यादव ने बनाई है. यह चाल एक मिलिट्री कमांडर की चाल जैसी है, जो दुश्मन को शिक़स्त देने के लिए लड़ाई के मैदान से दूर एक दूसरा मोर्चा खोल देता है.**

सभी फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

मनीष कुमार


बिहार में 2010 का विधानसभा चुनाव ऐतिहासिक साबित होगा. राजनीति के बड़े बड़े धुरंधर अपनी ज़मीन तैयार करने में जुटे हैं. बिहार में राहुल गांधी की योजना सबके सामने है, लेकिन पंद्रह सालों तक बिहार में सरकार चलाने वाली पार्टी आरजेडी का प्लान क्या है, इसका ख़ुलासा इस रिपोर्ट से होगा. लालू प्रसाद यादव ने अपनी खोई सियासी ज़मीन वापस जीतने की क्या योजना बनाई है. उनके दोस्त कौन हैं. दुश्मन नंबर वन कौन है. सामने वह कौन सा राजनीतिक दल होगा जिससे लालू सबसे पहले दो दो हाथ करने जा रहे हैं. उनके निशाने पर कॉलेज के जमाने के साथी नीतीश कुमार हैं या फिर कोई और. भारतीय जनता पार्टी को अलग–थलग करने वाले लालू क्या फिर से कोई ऐसी चाल चलने वाले हैं, जिससे उनका खोया हुआ मुस्लिम समर्थन वापस लौट आए. ऐसे कई सवाल हैं जिसका जवाब हम इस रिपोर्ट में देने की कोशिश कर रहे हैं.

राष्ट्रीय जनता दल के अध्यक्ष लालू प्रसाद यादव ने विधानसभा चुनाव के लिए जो रणनीति तैयार की है, उसे सुनकर कई राजनीतिक विश्लेषक हैरान रह जाएंगे. लालू अपनी योजना में सफल होंगे या असफल, यह तो वक़्त ही बताएगा, फ़िलहाल इतना ज़रूर कहा जा सकता है कि उनकी योजना ऐसी है जिसका असर केंद्र की राजनीति पर भी पड़ने वाला है. लालू प्रसाद यादव बिहार में कांग्रेस बेनक़ाब आंदोलन शुरू करने वाले हैं. यह आंदोलन अगले सप्ताह से बिहार के हर ज़िले और कस्बे में शुरू होने जा रहा है. राष्ट्रीय जनता दल के ज़िला स्तरीय पदाधिकारियों को संदेश दिया गया है कि नीतीश कुमार से निपटने से पहले कांग्रेस से निपटना ज़रूरी है. उन्हें समझाया गया है कि बिहार की गद्दी का रास्ता कांग्रेस के घर के सामने से होकर गुज़रता है.

कांग्रेस बेनक़ाब आंदोलन, एक बार फिर से मुसलमानों के समर्थन प्राप्त करने के लिए किया जा रहा है. इस दौरान लालू प्रसाद यादव अल्पसंख्यकों को यह बताएंगे कि बाबरी मस्जिद गिराने वालों का साथ सिर्फ़ कांग्रेस ने दिया है. मुसलमानों को 1991 की कांग्रेस सरकार के करतूतों से वाक़िफ़ कराया जाएगा. दरअसल राष्ट्रीय जनता दल बिहार में सक्रिय मुस्लिम संगठनों का विश्वास जीतने की कोशिश कर रही है. कांग्रेस बेनक़ाब आंदोलन के दौरान यह ख़ुलासा किया जाएगा कि किस तरह से कांग्रेस की सरकार ने बाबरी मस्जिद को गिराने में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की मदद की. राष्ट्रीय जनता दल का यह आरोप है कि लिब्रहान कमीशन की रिपोर्ट के बाद कांग्रेस ने नरसिम्हा राव की सरकार का बचाव क्यों किया. कांग्रेस सरकार ने बाबरी मस्जिद के गुनहगारों को क्यों छोड़ दिया. बाबरी मस्जिद विध्वंस मामले में कांग्रेस की भूमिका को बेनक़ाब करने के लिए आरजेडी पूरी तैयारी कर रही है. अख़बार और किताबों में छपी उन सभी रिपोर्टों और दस्तावेज़ों को इकट्ठा करके आरजेडी यह साबित करने वाला है कि बाबरी मस्जिद विध्वंस के लिए संघ और भाजपा के साथ–साथ कांग्रेस भी बराबर की ज़िम्मेदार है. लालू यादव और आरजेडी के कार्यकर्ता बिहार के मुसलमानों तक यह बात पहुंचाना चाहते हैं कि जब भी सांप्रदायिक शक्तियों से लड़ने की बात होती है तो कांग्रेस पार्टी मैदान छोड़ देती है.

कांग्रेस बेनक़ाब आंदोलन से जुडा एक और पहलू है. लालू बिहार के मुसलमानों को यह बताएंगे कि किस तरह कांग्रेस ने आज़ादी के बाद से ही उन्हें एक वोट बैंक की तरह इस्तेमाल किया. वह इस दौरान रंगनाथ मिश्र कमीशन रिपोर्ट और सच्चर कमेटी की रिपोर्ट के मुद्दे को भी हवा देने वाले हैं. कांग्रेस पर वह आरोप लगाते रहे हैं कि सच्चर कमेटी ने जब यह साबित कर दिया है कि सरकारी संस्थानों और उपक्रमों में मुसलमानों की हिस्सेदारी बहुत कम है और जब रंगनाथ मिश्र कमीशन रिपोर्ट ने मुसलमानों के आरक्षण को हरी झंडी दे दी तो फिर सोनिया गांधी और राहुल गांधी इसे लागू क्यों नहीं कर रहे. मुसलमानों को आरक्षण से वंचित रखने की आख़िर वजह क्या है.

अब सवाल यह है कि लालू यादव ने कांग्रेस को निशाने पर क्यों लिया है, जबकि, चुनाव में उनकी सीधी लड़ाई नीतीश कुमार की जदयू और भारतीय जनता पार्टी से है? अब तक मिल रहे संकेतों से साफ़ है कि विधानसभा चुनावों में नीतीश कुमार अपने कामों पर जनता से समर्थन मांगने जा रहे हैं. उन्होंने विकास का काम किया है. बिहार की सड़कें पहले से काफ़ी बेहतर हो गई हैं. अपराध में कमी आई है. उन्होंने प्रशासनहीनता की स्थिति से बिहार को बाहर निकाला है और सरकारी तंत्र के प्रति लोगों के खोए विश्वास को फिर से जगाया है. उन पर किसी घोटाले या बेइमानी का कोई आरोप नहीं है. बिहार में अल्पसंख्यक हों या दलित, सभी इस बात को मानते हैं कि नीतीश कुमार एक अच्छी सरकार देने में कामयाब हुए हैं. नीतीश कुमार को लगता है कि उन्होंने जो काम किए हैं, वह जनता के सामने है और विकास के नारे पर वह आसानी से चुनाव जीत जाएंगे. लालू यादव ज़मीन से जुड़े और अनुभवी राजनेता हैं. वह बिहार की जनता की नब्ज़ भी अच्छी तरह से पहचानते हैं. वह यह भी जानते हैं कि बिहार में अच्छी सरकार देने के बावजूद चुनाव में जीत सुनिश्चित नहीं की जा सकती है. बिहार में चुनाव जीतने के लिए विकास कार्यों से ज़्यादा अहमियत समीकरण रखता है. वह इस बात को भी जानते हैं कि अगर उन्हें बिहार में फिर से अपनी सरकार बनानी है तो उन्हें मुसलमानों और यादवों के समर्थन की ज़रूरत पड़ेगी. जहां तक बात यादवों की है तो बीजेपी और जेडीयू में पिछले पांच सालों में कोई भी ऐसा यादव नेता नहीं उभरा है जो लालू यादव को चुनौती दे सके . साथ ही, बिहार की जातिगत राजनीति का मिजाज़ ही कुछ ऐसा है कि यादव मतदाता ख़ुद–ब–ख़ुद आरजेडी के समर्थक बन जाएंगे. बिहार की इस हक़ीक़त को सभी जानते हैं. लालू यादव अगर बिहार के मुसलमानों का वोट बटोरने में असफल हो गए तो उनका चुनाव जीतना मुश्किल ही नहीं, नामुमकिन होगा. पिछली बार लालू यादव ने लाल कृष्ण आडवाणी के रथ को रोककर और उन्हें गिरफ़्तार कर मुसलमानों के दिल में अपनी जगह बनाई थी. इस बार लालू यादव फिर से दिल को जीतने के लिए कांग्रेस बेनक़ाब आंदोलन शुरू कर तुरुप का इक्का चलने वाले हैं. लालू यादव को लगता है कि मुसलामानों को अपने पक्ष में करने के लिए कांग्रेस पर हमला करना ज़रूरी है.

बिहार विधानसभा चुनाव में नए दोस्तों, नए गठबंधनों और पार्टियों की अंदरूनी कलह भी खुलकर आमने आएगी. लालू यादव केंद्र की राजनीति में कांग्रेस के साथ पिछली यूपीए सरकार में मंत्री रहे. वर्तमान यूपीए सरकार को समर्थन दे रहे हैं. चुनावी राजनीति की मजबूरियां भी अजीब होती हैं. लालू अब तक जिसके साथ थे, उसी कांग्रेस के ख़िलाफ़ उन्होंने आग उगलने की योजना बनाई है. कांग्रेस बेनक़ाब आंदोलन की वजह पूर्वी उत्तर प्रदेश के लोकसभा चुनावों के परिणामों में मिलती है. यहां मुसलमानों ने समाजवादी पार्टी को छोड़कर कांग्रेस का साथ दिया. मुसलमानों के वोटों की बदौलत कांग्रेस एक मज़बूत पार्टी बनकर उभरी और छह सीटें जीतने में कामयाब हुई. जबसे कांग्रेस ने बिहार में अपने मंसूबे आम किए, राहुल गांधी के साथ–साथ केंद्र के कई नेताओं ने पटना पहुंच कर कांग्रेस को मज़बूत करने का ऐलान किया, राहुल गांधी ने बिहार में युवाओं और अल्पसंख्यकों को लुभाने का कार्यक्रम चलाया, तबसे बिहार की सेक्युलर पार्टियों के चेहरों पर हवाइयां उड़ने लगी हैं. लालू यादव को इस बात का डर है कि अगर बिहार में कांग्रेस का प्रदर्शन पूर्वी उत्तर प्रदेश की तरह रहा तो उनकी पार्टी कहीं की नहीं रहेगी. चुनाव जीतना तो दूर, विधानसभा में राजद की सीटें कम होने का ख़तरा पैदा हो जाएगा. राष्ट्रीय जनता दल के नेता भी इस बात को समझते हैं कि नीतीश कुमार से बड़ा ख़तरा उनके लिए कांग्रेस पार्टी है.

लालू यादव के कांग्रेस बेनक़ाब आंदोलन का असर केंद्र की राजनीति पर भी होने वाला है. भाजपा के कमज़ोर होने के बाद नए समीकरण उभरने तय हैं. देश में एक बार फिर से कांग्रेस विरोध की लहर चलने वाली है. हमें यह भी याद रखना चाहिए कि यूपीए को समर्थन देने वाले ज़्यादातर राजनीतिक दल और नेता कांग्रेस विरोध की वजह से अपने–अपने राज्यों में मज़बूत हुए हैं. यही वजह है कि लालू यादव के इस आंदोलन को कई पार्टियों का साथ भी मिलने वाला है. इस आंदोलन में लालू यादव का साथ उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव देंगे. उत्तर प्रदेश में जिस तरह अल्पसंख्यकों ने समाजवादी पार्टी का साथ छोड़ा है, वैसा ही बिहार में राष्ट्रीय जनता दल के साथ हो रहा है. कांग्रेस जिस तरह से बिहार में आक्रामक प्रचार और संगठन को मज़बूत करने में जुटी है, उससे तो यही लगता है कि कांग्रेस की इस मुहिम का सीधा असर राष्ट्रीय जनता दल पर होने वाला है. कांग्रेस की नज़र बिहार के दलित मतदाताओं पर भी है, इसलिए उसकी मुहिम का असर रामविलास पासवान पर भी होने वाला है. लालू यादव के कांग्रेस बेनक़ाब आंदोलन को रामविलास पासवान का भी साथ मिलने वाला है. साथ ही वाममोर्चा भी लालू यादव के साथ खड़ा नज़र आ रहा है. इसका मतलब यह है कि लोकसभा चुनाव के दौरान बना चौथा मोर्चा बिहार में एकजुट होकर नीतीश कुमार और कांग्रेस के ख़िलाफ़ चुनाव लड़ने वाला है.

लालू यादव द्वारा कांग्रेस को निशाने पर लेने की एक और वजह भी है, जो राजनीतिक होने के साथ–साथ व्यक्तिगत भी है. लालू यादव के साले साधू यादव अपने समर्थकों के साथ कांग्रेस में आ चुके हैं, जिससे वह अच्छे–ख़ासे नाराज़ हैं. इसे वह ख़ुद पर हमला मानते हैं.

बिहार के चुनाव में देश के बड़े–बड़े नेताओं की प्रतिष्ठा दांव पर लगी है. बिहार का चुनाव किसी भी पार्टी के लिए आसान नहीं होगा. चुनौतियां सबके सामने हैं. नीतीश कुमार की चुनौती यह है कि वह पांच साल के अपने कार्यकाल में हुए विकास को जनता के सामने किस तरह से पेश करें, जो कि वह वोट में तब्दील हो जाए. भारतीय जनता पार्टी के सामने दूसरी चुनौती है. उसकी समस्या यह है कि सरकार के अच्छे कामों का श्रेय नीतीश कुमार को मिलता है, लेकिन जो बुराइयां हैं, वे भाजपा के गले लग जाती हैं. भारतीय जनता पार्टी को बिहार में अपनी साख बनाने की चुनौती है. चुनाव से पहले संगठन को मज़बूत करना कांग्रेस की चुनौती है तो लालू प्रसाद यादव के सामने यह चुनाव अस्तित्व का सवाल लेकर खड़ा है. रामविलास पासवान पिछले विधानसभा चुनाव से पहले मुख्यमंत्री बनने की रेस में थे, लेकिन आज स्थिति यह है कि वह ख़ुद लोकसभा चुनाव हार चुके हैं. कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि हर बड़ी पार्टी और नेता के सामने बिहार का चुनाव एक कठिन चुनौती है.


manish@chauthiduniya.com


**कांग्रेस बेनक़ाब आंदोलन, एक बार फिर से मुसलमानों के समर्थन प्राप्त करने के लिए किया जा रहा है. इस दौरान लालू प्रसाद यादव अल्पसंख्यकों को यह बताएंगे कि बाबरी मस्जिद गिराने वालों का साथ सिर्फ़ कांग्रेस ने दिया है. मुसलमानों को 1991 की कांग्रेस सरकार के करतूतों से वाक़िफ़ कराया जाएगा. दरअसल राष्ट्रीय जनता दल बिहार में सक्रिय मुस्लिम संगठनों का विश्वास जीतने की कोशिश कर रही है. कांग्रेस बेनक़ाब आंदोलन के दौरान यह खुलासा किया जाएगा कि किस तरह से कांग्रेस की सरकार ने बाबरी मस्जिद गिराने में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की मदद की.**

सिद्धार्थ नगर के बढ़नी, खुनुवा, अलीगढ़वा, ककरहवा, कोटिया एवं ठोठरी आदि कस्बे खाद्यान्न तस्करी के अड्डे हैं.



## दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

# अटकलों का दौर जारी

राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार के प्रभावशाली पद से एम के नारायणन को सीधे पश्चिम बंगाल का राज्यपाल बनाए जाने के बाद से अटकलबाज़ियों का दौर थमने का नाम नहीं ले रहा. इससे पहले भी कई बार यह चर्चा का विषय बनता रहा है. नारायणन प्रधानमंत्री जी के प्रभावशाली सलाहकार रहे हैं. कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो इस बात को लेकर चिंता जताते हैं कि इस बदलाव से सबसे शक्तिशाली समझे जाने वाले कार्यालय का बेहद संतुलित स्वरूप प्रभावित होगा. वे पूछते हैं कि क्या इससे प्रधानमंत्री कार्यालय को नुक़सान उठाना पड़ेगा?

26/11 के बाद से ही छिपे हमले की आशंका व्यक्त की जा रही है. किसी को भी इस अटकलबाज़ी पर भरोसा नहीं है. लेकिन ऐसे भी लोग हैं, जो इस बात में ज़्यादा यक़ीन रखते हैं कि गृहमंत्री पी चिदंबरम अंततः मज़बूत होकर उभरे हैं. नारायणन के कार्यकाल ने संवेदनशील मुद्दों पर निगरानी रखने के काम को पुनर्स्थापित किया. प्रधानमंत्री कार्यालय ने अपनी योग्यता के अनुकूल इसे अपने पास ही रखा था. संकेत इस बात का है कि नारायणन की नई भूमिका एक विस्तारित वैश्विक सुरक्षा जनादेश के साथ केवल आंतरिक पर्यवेक्षक की होगी.

लेकिन वहीं, दिल्ली में सत्ता के गलियारों की ख़बर रखने वाले अभी भी इस बारे में अटकलें लगा रहे हैं कि कहीं नारायणन की राज्यपाल के रूप में नियुक्ति इस बात का कोई पूर्व संकेत तो नहीं है कि निकट भविष्य में पश्चिम बंगाल में चुनाव होने वाले हैं और राहुल पूरी सक्रियता के साथ वहां चुनाव अभियान में हिस्सा लेने की तैयारी कर रहे हैं. हालांकि राजनीतिक रूप से यह निष्कर्ष बीते दिनों की बात हो चुका है कि इस बार चुनाव में ममता बनर्जी निर्णायक बढ़त बना पाने की स्थिति में होंगी. राहुल का तो पक्का विश्वास है कि पश्चिम बंगाल में कांग्रेस की बुनियाद खड़ा करने के लिए अभी से बेहतर समय हो ही नहीं सकता. सुरक्षा व्यवस्था को पुख्ता रखने में नारायणन की क़ाबिलियत का भरोसा कुछ ऐसा है, जो सोनिया गांधी को बेफ़िक्र और सुकून से भरा रखता है कि राहुल गांधी राज्य में निर्भीक होकर चुनाव अभियान में हिस्सा ले सकेंगे. उत्तर प्रदेश में चुनाव अभियान की योजना बनने से ठीक पहले राज्यपाल के रूप में राजेश्वर की नियुक्ति की बात याद कीजिए. उस समय भी उनकी नियुक्ति को लेकर वहां ऐसी ही अटकलें लगाई जा रही थीं.

नारायणन के निकलने के बाद चिदंबरम ने यह महसूस किया कि उन्हें इस बात को स्पष्ट करना चाहिए था कि रिसर्च एंड एनालिसिस विंग (आरएडब्ल्यू) को नेशनल काउंटर टेररिज़्म सेंटर नामक उस नई एजेंसी, जिसकी वह योजना बना रहे थे, के अधीन लाने का उनका कोई विचार नहीं था. कुछ लोगों को इस बात पर हैरानी हो रही है कि कहीं यह तनातनी ख़त्म होने का संकेत तो नहीं.

तत्कालीन राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार ने जो बयान दिए थे, उनसे निश्चित तौर पर कोई मदद नहीं मिली, बल्कि उन्होंने उनकी विरासत संभालने वालों को परेशान ज़रूर कर दिया. चीनियों की दख़ल प्रधानमंत्री कार्यालय तक होने की आशंका व्यक्त की जा रही है. दिल्ली में जिस तरह का सुरक्षा माहौल है, उसे देखकर राष्ट्रमंडल खेलों को लेकर भय व्यक्त किया जा रहा है. ऐसा लगता है कि सारा ध्यान विभागीय खींचतान, उत्तराधिकार की लड़ाई और व्यक्ति विशेष के भविष्य पर केंद्रित है. देश के लिए यह अजीब बात है कि वह बाहरी और अंदरूनी दोनों चुनौतियों से जूझ रहा है.

# ग़रीबों के निवाले माफियाओं के हवाले

सुरेंद्र अग्निहोत्री

सभी को भोजन और शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराने के लिए सरकार की ओर से चलाए जा रहे कार्यक्रमों का लाभ क्रियान्वयन की ख़ामियों के कारण नहीं मिल पा रहा है. मानवाधिकार संगठन फियान ने अपनी एक रिपोर्ट में कहा है कि सरकारी खाद्यान्न आपूर्ति व्यवस्था पूरी तरह ठप्प हो गई है. कोटेदार ग़रीबों को मिलने वाला सस्ता राशन खुले बाज़ार में बेच रहे हैं. यही नहीं, सरकार की ओर से ग़रीबों के लिए उपलब्ध कराया गया खाद्यान्न अब कालाबाज़ारी के ज़रिये नेपाल तक भेजा जा रहा है. नेपाल और चीन की सीमा से लगे सिद्धार्थ नगर, बहराइच और गोरखपुर में खाद्य माफ़ियाओं का राज है.

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ से लगे अर्जुनगंज में गरीबों के लिए भेजा जा रहा राशन और मिट्टी का तेल कोटेदार हड़प रहे हैं. अर्जुनगंज स्थित घुसवलकलां ग्रामसभा के कोटेदार ने कई ग्रामीणों के राशनकार्ड पिछले तीन महीनों से अपने पास दबाकर रखे हैं. ग्रामीणों को मिट्टी का तेल देते समय कोटेदार उस पर राशन देना भी दर्ज़ कर देता है. उक्त कोटेदार एक इंदिरा आवास में अपनी दुकान चला रहा है, जिसे किसी महिला के नाम आवंटित किया गया था, लेकिन वह क़ब्ज़ा नहीं पा सकी. तीन हज़ार की आबादी वाले ग्राम घुसवल कलां में सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान जगमोहन के नाम आवंटित है. उसके पिता मेवालाल को भी एक दुकान पहले से आवंटित है. गांव के इंदल, नंदकिशोर, गंगासागर, सरवन, गजेंद्र आदि का आरोप है कि जगमोहन के भाई अयोध्या प्रसाद ने तीन माह पहले उन समेत कई लोगों के राशनकार्ड अपने पास रख लिए. तेल और राशन की कालाबाज़ारी करके उनके राशनकार्डों पर फ़र्ज़ी प्रविष्टि भी कर दी गई. हुबलाल, लवकुश और भगवानदीन का आरोप है कि ग़रीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले ग्रामीणों को भी राशन नहीं दिया जाता. संतराम, रामसेवक, शिवकुमार और अनिल ने बताया कि कोटेदार रोस्टर के मुताबिक़ राशन नहीं बांटता है. गुपचुप तरीक़े से राशन और मिट्टी के तेल की कालाबाज़ारी कर दी जाती है. तेल बांटते समय ही कार्ड जमा कर उसमें राशन दिया जाना भी चढ़ा दिया जाता है.

सिद्धार्थ नगर जनपद की भारत–नेपाल की खुली सरहद राशन माफ़ियाओं के लिए मुफ़ीद है. वे इसका उपयोग खाद्यान्न तस्करी के लिए कर रहे हैं. खाद्यान्न नेपाल के रास्ते चीन तक पहुंचाया जा रहा है. निगरानी एजेंसियां भी उसे रोकने में विफल साबित हो रही हैं. तस्कर नेपाल सीमा से सटे भारतीय गांवों–कस्बों में चावल, गेहूं, चीनी डंप करते हैं और रात में उसे नेपाली गांवों में पहुंचा देते हैं. इसके बाद नेपाल की निकटतम कस्टम चौकी पर भंसार (टैक्स) बनाकर उन्हें नंबर में बदल दिया जाता है. फिर उक्त खाद्यान्न वैध काग़ज़ातों के आधार पर काठमांडू पहुंच जाता है, जहां से उसे ख़ासा (तिब्बत) चेक पोस्ट से चीन भेज दिया जाता है. बताया जाता है कि 18 सौ रुपये में बिकने वाला ज़िले का संभा चावल चीन में 4500 रुपये क्विंटल बिकता है. जानकारों के अनुसार, भारत–नेपाल सीमा पर प्रतिदिन पांच हज़ार मीट्रिक टन चावल एवं चीनी की तस्करी हो रही है. इसका साठ प्रतिशत हिस्सा बीपीएल का चावल है.

सिद्धार्थ नगर के बढ़नी, खुनुवा, अलीगढ़वा, ककरहवा, कोटिया एवं ठोठरी आदि कस्बे खाद्यान्न तस्करी के अड्डे हैं. ज़िला पूर्ति अधिकारी नसीम अहमद हाशमी के अनुसार, अंतरराष्ट्रीय तस्करों पर नज़र रखी जा रही है. 35 राशन तस्करों को चिन्हित भी किया जा चुका है. श्रावस्ती जनपद में स्थिति और भी ख़राब है. ज़िले के सैकड़ों कोटेदारों को आवंटित होने वाले खाद्यान्न के उठान की धनराशि गल्ला माफ़ियाओं द्वारा भरी जाती है. गोदाम प्रभारी पैसा लेकर हज़ारों क्विंटल खाद्यान्न सीधे उनके हवाले कर देते हैं. जनपद में ग़रीब–असहाय कार्डधारकों की संख्या 61044 है. अंत्योदय योजना के कार्डधारकों की संख्या 37872 है. हरिहरपुर रानी, गिलौला, जमुनहा, उकौना व नगर क्षेत्र के अधिकांश कोटेदारों के खाद्यान्न उठान की धनराशि माफ़ियाओं द्वारा जमा कर दी जाती है. कोटेदारों को उनका हिस्सा देने के बाद वे गोदाम प्रभारियों से साठगांठ कर खाद्यान्न अपने क़ब्ज़े में कर लेते हैं, जिसे खुले बाज़ारों में बेच दिया जाता है. ज़िले के कई खाद्यान्न माफ़ियाओं की पैठ ऊपर तक है.

भदोही जनपद भी खाद्यान्न माफ़िया की गिरफ़्त में है. बेरोकटोक जारी इस कालाबाज़ारी पर जिला प्रशासन की नजर नहीं है. जिले में कुल पांच हाट विपणन केंद्र स्थापित हैं. सबसे अधिक कालाबाज़ारी एक केंद्र से हो रही है. इस केंद्र पर लंबे समय से खाद्यान्न माफिया हावी हैं. इस केंद्र पर प्रत्येक माह की 16 तारीख़ से अंतिम तारीख़ तक कोटेदारों का जमावड़ा होता है. हुकुम चलता है खाद्यान्न माफ़ियाओं का. कोटेदारों को खाद्यान्न की धनराशि जमा करने के लिए ब्याज पर नहीं, बल्कि खाद्यान्न के हिसाब से रुपये दिए जाते हैं. इस केंद्र पर तीन बार पड़े छापों में भारी मात्रा में खाद्यान्न भी पकड़ा जा चुका है. यहां हर माह ग़रीबों के निवालों पर डाका डाला जाता है. खाद्यान्न लदे वाहन सीधे पहुंच जाते हैं खुले बाज़ारों में ऊंची क़ीमत पर बिकने के लिए. इस काम में खाद्यान्न माफ़ियाओं, कई व्यापारियों एवं कोटेदारों के नाम सामने आए हैं.

अब प्रदेश की मायावती सरकार सार्वजनिक वितरण प्रणाली को दुरुस्त करने के लिए डोर स्टेप डिलीवरी योजना लागू कर रही है. इस योजना के तहत राशन सामग्री कोटेदारों के पास पहुंचने पर उसकी सूचना संबंधित क्षेत्र के लोगों को दी जाएगी. लेकिन यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि उक्त सामग्री का वितरण पारदर्शी तरीक़े से हो. विधायक विशंभर प्रसाद निषाद कहते हैं कि राज्य सरकार डोर स्टेप डिलीवरी योजना में खाद्यान्न और मिट्टी के तेल की गोदाम से आपूर्ति की निगरानी के लिए भी कोई कारगर व्यवस्था करे. उधर, राजधानी से सटे निगोहा में सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान पर राशन लेने गए वृद्ध रमाशंकर को कोटेदार के गुर्गों द्वारा बुरी तरह पीटे जाने की ख़बर भी सामने आई है.

बीते दिनों सुप्रीमकोर्ट के अवकाशप्राप्त न्यायाधीश डी पी वाधवा लखनऊ में केंद्र सरकार की पहल पर हो रही बैठक में गए. उन्होंने वहां मौजूद सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) से जुड़े अधिकारियों, कोटेदारों और अन्य लोगों से पूछा कि क्या और कैसे किया जाना चाहिए, जिससे इस प्रणाली से भ्रष्टाचार ख़त्म हो. तयशुदा कार्यक्रम के तहत बातचीत चल रही थी और राज्य सरकार के अधिकारियों द्वारा केंद्रीय समिति को यह संदेश देने का प्रयास किया जा रहा था कि यहां सब ठीक है. इसी बीच राजधानी के एक कोटेदार आशीष सिंह खड़े हुए और यह कहकर उन्होंने सनसनी फैला दी कि हां साहब..., मैं चोर हूं. आशीष ने आगे कहा, दुनिया की कोई ताक़त नहीं, जो इस व्यवस्था में बगैर चोरी के राशन की दुकान चला सके. इस पर न्यायमूर्ति वाधवा ने पूछा, आप यह कैसे कह रहे हैं? तो आशीष ने सीए से तैयार कराई गई रिपोर्ट पेश कर दी. रिपोर्ट बताती है कि यदि शासन की ओर से तय कमीशन और ख़र्चों के आधार पर राशन की कोई दुकान संचालित की जाए तो हर महीने कम से कम 5000 रुपये का नुकसान तय है. आशीष ने उन्हें बताया कि कोटेदार के लिए प्रतिकार्ड यह नुक़सान 7.25 रुपये है और जितने कार्ड होंगे, यह नुक़सान भी उसी अनुपात में बढ़ेगा. इसी नुक़सान की भरपाई के लिए कोटेदार अनियमितता कर रहे हैं. वाधवा ने बाद में आशीष को अलग से बातचीत के लिए बुलाया और सारी जानकारी ली.

राशन विक्रेता बताते हैं कि उन्हें अपनी बचत से दोगुनी रक़म तो सिर्फ़ सामान की ढुलाई पर ही ख़र्च करनी पड़ जाती है. प्रत्येक राशन दुकान में औसतन मिट्टी के तेल के 10 ड्रमों का कोटा है. उस पर उन्हें 24 रुपये प्रति ड्रम कमीशन मिलता है और ढुलाई अपने पास से देनी होती है, जो क़रीब 50 रुपये प्रति ड्रम है. ग्रामीण क्षेत्र की राशन दुकानों में ढुलाई का यही खर्च लगभग 100 रुपये प्रति ड्रम है. यही हाल गेहूं और अन्य सामानों का है.

feedback@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
देश का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 1 अंक 47,
दिल्ली, 1 फरवरी–7 फरवरी 2010

संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210–211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के– 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय

के–2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग
कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ–2, सेक्टर –11, नोएडा
गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश–201301

फोन न.
संपादकीय 0120–47839990/11–23418962
विज्ञापन + 91 9873575318
प्रसार + 91 9810017924
फैक्स न. 0120–4783950

पृष्ठ–16 (+4 बिहार व झारखंड)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनः प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

राज्य में कांग्रेस और भारतीय जनता पार्टी, दो बड़े राजनैतिक दल हैं और दोनों ही दलों का दावा है कि पूरे प्रदेश में उनका संगठन मज़बूत है और मतदान केंद्र स्तर तक इन दलों के कार्यकर्ताओं की समितियां कार्यरत हैं.

नरेंद्र सिंह तोमर (भाजपा अध्यक्ष)

# राजनीतिक दलों के दावों की पोल खुली

## पंचायत चुनावों में एक लाख पदों के लिए चुनाव नहीं

सुरेश पचौरी (कांग्रेस अध्यक्ष)

संध्या पाण्डे

देश के विभिन्न राजनीतिक दल गांव–गांव तक अपनी पहुंच बताते हैं. इस आधार पर पार्टी का व्यापक जनाधार होने की बात करते हैं. लेकिन, क्या यह हक़ीक़त है? सच कहें तो उनके दावों को पूरी तरह से सही नहीं ठहराया जा सकता. मध्य प्रदेश में त्रिस्तरीय पंचायतीराज संस्थाओं के लिए चुनाव शुरू हो गए हैं. इन चुनावों के लिए दाख़िल नामांकन पत्रों का विश्लेषण करने से राज्य में राजनीतिक दलों के संगठनात्मक आधार की पोल खुल गई है. उनके सदस्यता संबंधी दावे इन चुनावों के दौरान खोखले साबित हुए हैं. कांग्रेस और भाजपा दोनों ही दलों की ग्रामीण स्तर पर संगठन की उपस्थिति का दावा सही नहीं है.

मध्य प्रदेश में कुल 3 लाख 63 हजार 337 ग्रामपंचों, 22 हज़ार 795 सरपंचों, 6816 जनपद सदस्यों और 843 ज़िला पंचायत सदस्यों के लिए सीधे चुनाव कराए जा रहे हैं. नामांकन पत्र दाख़िल करने की प्रक्रिया पूरी हो चुकी है, लेकिन सूत्रों से मिली जानकारी के अनुसार, जनपद सदस्यों के 21, ग्राम सरपंचों के 365 और पंचों के 11,623 पदों के लिए एक भी नामांकन पत्र दाख़िल नहीं हुआ है. इसके अलावा 23 ज़िलों से मिली जानकारी के अनुसार, 182 सरपंच, तीन जनपद सदस्य और 88 हज़ार पंच निर्विरोध चुन लिए गए हैं. अभी और भी ज़िलों से जानकारी मिलनी शेष है. कुल मिलाकर 12 हज़ार पदों के लिए एक भी उम्मीदवार नहीं है और लगभग 90 हज़ार पदों पर चुनाव निर्विरोध हो गए हैं. इस प्रकार लगभग एक लाख पदों के लिए चुनाव में राजनीतिक दलों की उदासीनता साफ़ नज़र आती है. राज्य में कांग्रेस और भारतीय जनता पार्टी, दो बड़े राजनीतिक दल हैं. दोनों ही दलों का दावा है कि पूरे प्रदेश में उनका संगठन मज़बूत है और मतदान केंद्र स्तर तक उनकी समितियां कार्यरत हैं. लेकिन दोनों ही दलों के दावे खोखले और काग़ज़ी साबित हो गए हैं, क्योंकि 12 हज़ार पदों के लिए किसी दल के पास कोई उम्मीदवार ही नहीं था और 90 हज़ार पदों के लिए चुनावी संघर्ष ही नहीं हो पाया. कहने को तो पंचायत चुनाव दलीय आधार पर नहीं कराए जा रहे हैं, लेकिन जैसे ही चुनाव के लिए राज्य निर्वाचन आयोग की अधिसूचना जारी हुई, कांग्रेस और भाजपा दोनों ने ही अपने–अपने संगठन के पदाधिकारियों को ज़िला और ब्लाक स्तर पर इन चुनावों की तैयारी में जुट जाने के निर्देश दे दिए थे. इसके अलावा दोनों दलों ने अपने विधायकों और सांसदों को भी पंचायत चुनाव में अपने समर्थक उम्मीदवारों की जीत सुनिश्चित कराने को कहा था, लेकिन गांव स्तर तक संगठनात्मक आधार के अभाव के चलते लगभग एक लाख पदों के लिए चुनाव न होने से राज्य में दोनों बड़े राजनीतिक दलों की मज़बूती की पोल खुल गई है. इस वर्ष कांग्रेस और भाजपा दोनों ही दलों के संगठनात्मक चुनाव होने हैं. भाजपा के संगठनात्मक चुनाव फरवरी और कांग्रेस के चुनाव जून माह में होने हैं. चुनाव के लिए दोनों ही दलों ने सदस्यता अभियान चला रखा है. दोनों का दावा है कि गांव–गांव में उनका सदस्यता अभियान ज़ोर शोर से चल रहा है और पार्टी से लाखों की संख्या में नए सदस्य जुड़ रहे हैं. यदि इन दावों में ज़रा भी सच्चाई होती तो पंचायत चुनाव में इन दलों की ग्राम स्तर तक उपस्थिति और सक्रियता ज़रूर दिखाई देती. जानकारों का कहना है कि भाजपा और कांग्रेस के शीर्ष नेता अपने संगठन की हक़ीक़त जानते हैं, इसीलिए राज्य में शुरू से ही पंचायत चुनाव दलीय आधार पर न लड़ने का फ़ैसला दोनों दलों के शीर्ष नेताओं ने मिलजुल कर लिया था. राज्य सरकार ने तो अपने संगठन की लाज रखने के लिए पंचायतों में निर्विरोध चुनाव कराने को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से घोषणा कर दी थी कि जिन पंचायतों में निर्विरोध चुनाव होंगे, वहां ग्राम विकास के लिए पांच लाख रुपये की राशि दी जाएगी. इस घोषणा से अधिकारी और कर्मचारी वर्ग प्रोत्साहित हुए. राजनीतिक दलों का संगठनात्मक ढांचा कमज़ोर होने का लाभ उठाकर उन्होंने निर्विरोध चुनाव संपन्न कराने में ज़्यादा रुचि ली. इसका कहीं कोई विरोध भी नहीं हुआ, क्योंकि विरोध करने वाला कोई था ही नहीं. ज़िलों से प्राप्त समाचारों के अनुसार, कई पंचायतों में तो नामांकन पत्र भरने के अंतिम दिन सरकारी कर्मचारियों ने ही उम्मीदवार तलाश कर नामांकन पत्र दाख़िल कराए और फिर उन्हें निर्विरोध निर्वाचित भी घोषित कर दिया. इसका कारण यह था कि कई गांवों में पंचायत चुनाव में राजनीतिक दलों ने कोई रुचि और सक्रियता ही नहीं दिखाई. जब गांवों में राजनीतिक दलों का संगठनात्मक आधार ही न हो तो यही एक उपाय बचता है. विधानसभा और लोकसभा के चुनाव तो प्रचार से माहौल बनाकर लड़े जाते हैं. गांव के मतदान केंद्रों पर जब राजनीतिक दलों के उम्मीदवारों के पास पोलिंग एजेंट और कार्यकर्ता नहीं होते हैं तो शहरों या आसपास के गांवों से कार्यकर्ता थोड़े समय के लिए वहां भेज दिए जाते हैं. इसके बाद गांव में संगठन बनाने की ज़रूरत को पार्टियां भूल जाती हैं. मध्य प्रदेश में कुल 52 हज़ार आबाद गांव हैं, लेकिन कोई भी दल सप्रमाण दावे से यह नहीं कह सकता कि उसका संगठन राज्य के हर गांव में है.

> **गांव के मतदान केंद्रों पर जब राजनैतिक दलों के उम्मीदवारों के पास पोलिंग एजेंट और कार्यकर्ता नहीं होते हैं तो शहरों से या आसपास के गांवों से कार्यकर्ता थोड़े समय के लिए भेज दिए जाते हैं. इसके बाद गांव में संगठन बनाने की ज़रूरत को पार्टियां भूल जाती हैं.**

उल्लेखनीय है कि कांग्रेस और भाजपा के राष्ट्रीय नेता इन दिनों सदस्यता अभियान को लेकर काफ़ी चिंतित हैं. यह माना जाता है कि राजनीतिक दल जितने लोगों के सदस्य होने का दावा करते हैं, उसका केवल 55 प्रतिशत ही दल का वास्तविक सदस्य होता है. इस वर्ष भी इन दोनों दलों ने 25 लाख से ज़्यादा लोगों को पार्टी का सदस्य बनाने का दावा किया है. कांग्रेस के राष्ट्रीय महासचिव एवं युवा नेता राहुल गांधी ने सदस्यता अभियान को गंभीरता के साथ लिया था. इसी तरह भारतीय जनता पार्टी के नए नेतृत्व ने भी सदस्यता अभियान की गंभीरता को स्वीकार करते हुए प्रादेशिक इकाई को कई निर्देश जारी किए हैं. राहुल गांधी ने राष्ट्रीय स्तर पर युवाओं को राजनीति से जुड़ने का संदेश देकर कांग्रेस की सदस्यता को गांव–गांव तक पहुंचाने का संकल्प लिया है. अलग–अलग जगहों पर अपने प्रवास के दौरान वह स्वयं कांग्रेस के सदस्यता अभियान की निगरानी करते हैं. इसके बावजूद वर्तमान पंचायत चुनाव ने दोनों दलों को यह स्पष्ट संकेत दे दिया है कि उनके निर्देशों को मध्य प्रदेश राज्य गंभीरता से नहीं लेता. संभवत: यही कारण है कि ज़मीनी स्तर तक पकड़ रखने का दावा रखने वाले दोनों ही राष्ट्रीय दल मध्य प्रदेश में पंचायत चुनाव के दौरान एक लाख से अधिक पदों के लिए अपने सदस्यों को प्रत्याशी नहीं बना सके. उपरोक्त जानकारी अभी केवल 23 जिलों से प्राप्त हुई हैं. शेष 17 ज़िलों से जानकारी मिलना शेष है. राजनीतिक दल इस कथन के साथ कि पंचायत चुनाव दलीय आधार पर नहीं हो रहे हैं, अपना पल्ला झाड़ने की कोशिश कर सकते हैं, परंतु दलीय आधार पर चुनाव न होने के बावजूद दोनों ही राष्ट्रीय दलों के सदस्य अपनी–अपनी पार्टियों का समर्थन लेकर इन चुनावों में दावेदारी प्रस्तुत कर रहे हैं. राजनीतिक क्षेत्रों में ज़मीनी स्तर पर पार्टी सदस्यों की अनुपलब्धता को छिपाने के लिए ही संभवत: पंचायत चुनाव को ग़ैरदलीय आधार पर कराने संबंधी निर्णय दोनों दलों की सहमति से लिया गया था. राष्ट्रीय स्तर पर ज़मीन से जुड़ी राजनीति के पक्षधर नेताओं को इस सूचना से गहरा आघात लगना स्वाभाविक है. लेकिन, यह भी सत्य है कि राजनीति में झूठे दस्तावेज़ों और बोगस आंकड़ों के साथ एक लंबी राजनीतिक पारी नहीं खेली जा सकती है.

feedback@chauthiduniya.com

# मध्य प्रदेश: बिजली की बर्बादी में चौथा स्थान

राज्य में पिछले एक दशक से गंभीर बिजली संकट चल रहा है. बिजली के झटकों से भारतीय जनता पार्टी ने 2003 में कांग्रेस की सरकार तो गिरा दी, लेकिन पूरे पांच साल तक राज्य में बिजली का संकट बना रहा. फिर 2008 के चुनाव में भाजपा ने बिजली संकट के लिए केंद्र की कांग्रेस नेतृत्व वाली यूपीए सरकार को बदनाम करके एक बार फिर सरकार पर क़ब्ज़ा जमा लिया. कुल मिलाकर भाजपा के लिए राज्य का बिजली संकट एक भड़काऊ और कमाऊ मुद्दा है. उसे बिजली संकट हल करने की कोई चिंता नहीं है.

बिजली संकट के इस दौर में भी मध्य प्रदेश बिजली चोरी और वितरण में धांधली के चलते बिजली बर्बाद करने वाले देश के चार प्रमुख राज्यों में शामिल है. बिहार, झारखंड और जम्मू–कश्मीर के बाद मध्य प्रदेश में ही सबसे ज़्यादा बिजली की बर्बादी होती है. कुल उत्पादित बिजली का 42 प्रतिशत हिस्सा बिहार में बर्बाद होता है. झारखंड और जम्मू–कश्मीर में 40 प्रतिशत तथा मध्य प्रदेश में 39 प्रतिशत बिजली बर्बाद होती है. यानी प्रति 100 मेगावाट में से 39 मेगावाट बिजली तो पारेषण क्षय की तकनीकी ख़ामियों और बिजली चोरी के कारण बर्बाद हो जाती है. केंद्रीय विद्युत नियामक आयोग ने राज्य सरकार को यह बर्बादी रोकने के लिए कारगर क़दम उठाने के निर्देश दिए हैं.

## 2220 करोड़ रुपये की वसूली नहीं

एक ओर उत्पादित बिजली बर्बाद की जाती है तो दूसरी ओर विद्युत मंडल उपभोक्ताओं से बिजली आपूर्ति की पूरी क़ीमत वसूल नहीं कर पाता है. सितंबर 2009 की स्थिति के अनुसार, राज्य में उच्च दाब वाले बड़े उपभोक्ताओं पर 2220 करोड़ 50 लाख रुपये का बकाया एकाउंट बुक में तो दर्ज़ है, लेकिन उसकी वसूली के लिए कोई कार्यवाही नहीं की गई. करोड़ों का बकाया होने के बाद भी इन उपभोक्ताओं को बिजली की आपूर्ति जारी है, जबकि छोटे–छोटे घरेलू उपभोक्ताओं पर दो माह का बिल बकाया हो जाने पर उन्हें बिजली से वंचित कर दिया जाता है. विद्युत विभाग का डंडा आम आदमी पर ही पड़ता है. अमीरों, राजनीतिज्ञों–प्रशासन के नज़दीकी लोगों और बाहुबलियों पर विद्युत मंडल कहीं कोई कार्यवाही नहीं कर पाता.

सूत्रों से मिली जानकारी के अनुसार, सबसे अधिक 429 करोड़ रुपये छतरपुर, 269 करोड़ रुपये नीमच, 229 करोड़ रुपये सतना, 223 करोड़ रुपये खरगौन, 197 करोड़ रुपये रीवा, 194 करोड़ रुपये खंडवा–बुरहानपुर, 116 करोड़ रुपये बैतूल, 93 करोड़ रुपये सीधी, 90 करोड़ रुपये उज्जैन और 77 करोड़ रुपये इंदौर ज़िले के बड़े उपभोक्ताओं पर बकाया हैं. इसके अलावा ग्वालियर में 52 करोड़, सागर में 44 करोड़, शाजापुर में 43 करोड़, भोपाल में 30.6 करोड़, रायसेन में 25.67 करोड़ रुपये बकाया हैं. अन्य ज़िलों में 10 करोड़ रुपये या उससे कम राशि बकाया मद में दर्ज़ है.

एक ओर मध्य प्रदेश विद्युत मंडल को करोड़ों रुपये अपने उपभोक्ताओं से वसूल करने है, दूसरी ओर उसकी वित्तीय स्थिति इतनी जर्जर हो गई है कि पिछले एक वर्ष में मंडल के कई कार्यालयों में कर्मचारियों को समय पर वेतन नहीं मिल पाया. इसके अलावा विभिन्न कंपनियों से खरीदे जाने वाले कोयले के मूल्य का भी समय पर भुगतान नहीं हो पाया. प्रतिमाह 200 से 250 करोड़ रुपये मूल्य का कोयला उधारी में ख़रीदा जाता है और उसका भुगतान दो माह बाद किया जाता है. कभी–कभी ज़्यादा उधारी हो जाने पर कंपनियां कोयला देने से इंकार कर देती हैं. कोयले की कमी का असर बिजली उत्पादन पर पड़ता है. ऐसे में राज्य के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान केंद्र सरकार पर भाजपा शासित राज्यों से भेदभाव का आरोप लगाना शुरू कर देते हैं, लेकिन वह विद्युत मंडल और उसकी सहायक कंपनियों के कामकाज में सुधार लाने की दिशा में खुद कोई प्रयास नहीं करते.

## बिजली संयंत्रों में अराजकता

मध्य प्रदेश विद्युत मंडल एवं उसकी सहायक कंपनियों के संसाधनों और प्रबंधन में ख़ामियों के कारण बिजली उत्पादन करने वाले सभी संयंत्रों में अराजकता की स्थिति बनी हुई है. चूंकि राज्य में बिजली संकट है, इसलिए विद्युत उत्पादन कंपनियों पर हमेशा ज़्यादा उत्पादन करने का दबाव बना रहता है. लगातार उत्पादन के लिए संयंत्रों को चलाते रहने से उनका रखरखाव, मरम्मत और घिसाई रोकने के लिए तेल– ग्रीस डालना आदि काम ठीक से नहीं हो पाते हैं. संयंत्रों को अच्छी हालत में मरम्मत या रखरखाव के लिए बंद करना संभव नहीं होता है. इस कारण जब–तब बिजली संयंत्र बिगड़ जाते हैं और काम करना बंद कर देते हैं. पिछले एक माह में राज्य में 50 बार इन संयंत्रों के एक से चार घंटे तक बंद रहने की घटनाएं हुई हैं.

## मेन पॉवर की भारी कमी

विद्युत संयंत्रों में मेन पॉवर की भारी कमी है. सूत्रों के अनुसार, पॉवर जनरेटिंग कंपनी में कुल स्वीकृत पद 11047 हैं, लेकिन वर्तमान में केवल 6342 कर्मचारी काम कर रहे हैं. इसके अलावा जल्दी ही मालवा में 1200 मेगावाट के नए विद्युत संयंत्र और सारणी में 500 मेगावाट के नए संयंत्र के लिए 1500 अतिरिक्त कर्मचारियों की ज़रूरत होगी. लेकिन, अपनी खस्ता माली हालत के कारण विद्युत मंडल कर्मचारियों की भर्ती नहीं कर रहा है. विद्युत कर्मचारी संघ के अनुसार, अगले तीन माह में लगभग 600 अधिकारी–कर्मचारी सेवानिवृत हो जाएंगे, ऐसी स्थिति में संयंत्रों का सुचारू रूप से चलना कठिन हो जाएगा. लेकिन यह सब कुछ जानते हुए भी विद्युत मंडल नई भर्तियों के लिए कोई कार्यवाही नहीं कर रहा है. इसके पीछे मंडल के शीर्ष अधिकारियों के या तो अपने कोई स्वार्थ हैं या फिर हो सकता है कि राजनेताओं के इशारे पर ऐसा किया गया हो, ताकि आवश्यक कर्मचारियों की पूर्ति के लिए संयंत्रों को ठेके पर दिया जा सके. फ़िलहाल सारणी, अमरकंटक और बिरसिंहपुर में 2500 कर्मचारी अस्थायी रूप से ठेके पर काम कर रहे हैं. यह ध्यान देने योग्य है कि विद्युत मंडल ने कर्मचारियों को सीधे ठेका पद्धति के जरिए भर्ती नहीं किया है, बल्कि उन्हें भर्ती करने और काम पर लगाने का ठेका कुछ ठेकेदारों को दिया गया है. शुरू–शुरू में तो अच्छी कमाई होने से ठेकेदार कर्मचारियों–मजदूरों को संयंत्रों में काम पर लगाते रहे, लेकिन पिछले कुछ महीनों से विद्युत मंडल द्वारा भुगतान न किए जाने के कारण जब ठेके पर लगाए गए कर्मचारियों–मजदूरों को समय पर वेतन मिलना बंद हो गया, तो उन्होंने काम करना बंद कर दिया. इससे भी विद्युत उत्पादन बुरी तरह प्रभावित हुआ. अब तो ठेकेदार भी मजदूरों और कर्मचारियों को काम पर लगाने के ठेके लेने से कतराने लगे हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

सवाल यह है कि अंग्रेजी और बांग्ला के अलावा नेपाली में प्रश्नपत्र देने से अगर गोपनीयता बरक़रार रह पाती है तो हिंदी संस्करण छपते ही यह गोपनीयता कैसे भंग हो जाएगी?

# हिंदी के नन्हें महारथियो, थोड़ा और ज़ोर लगाओ!

**पश्चिम बंगाल में बांग्लाभाषी छात्र छात्राओं के बाद सबसे ज़्यादा संख्या हिंदी भाषियों की है. बावजूद इसके माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक परीक्षाओं में उन्हें हिंदी में प्रश्नपत्र उपलब्ध  नहीं कराए जाते. पश्चिम बंगाल छात्र संघर्ष समिति के बैनर तले छात्रों के संघर्ष को पूरी कामयाबी अभी भी नहीं  मिल पाई है. ऐसे में सवाल यह उठता है कि सरकार किसी भाषाई पूर्वाग्रह से तो ग्रसित नहीं है?**

बिमल राय

जिस दिन देश भर से आए लाखों लोग, बाक़ी तीरथ बार-बार, गंगासागर एक बार का जयकारा लगा रहे थे, उसी दिन कोलकाता में हिंदी के नन्हे महारथी हाथों में बैनर थामे भूगोल के प्रश्नपत्र हिंदी में देने की गुहार लगा रहे थे. आख़िर वे करें भी क्या? हिंदी के मामले में बंगाल सरकार धीरे-धीरे मुट्ठी जो खोल रही है. ठीक उस सयाने अभिभावक की तरह, जो बच्चे को एक चॉकलेट देकर दूसरा सिर्फ़ दिखाकर रख लेता है कि वह फिर मनुहार करेगा. हालांकि हिंदी की जंग एक तरह से जीत ली गई है और इन नन्हें महारथियों को थोड़ा और जोर लगाने की ज़रूरत है. पहले गणित, फिर विज्ञान विषय और अब इतिहास के सवाल हिंदी में छापने का ऐलान हुआ है, पर भूगोल को छोड़ दिया गया है.

पश्चिम बंगाल छात्र संघर्ष समिति के बैनर तले हिंदी स्कूलों के छोटे-छोटे बच्चे अपनी पढ़ाई एवं खेलने के समय में कटौती कर सड़कों पर बैनर थामे आंदोलन करते आ रहे हैं. इस आंदोलन को वर्षों तक अनसुना किया गया. कई बार इन बच्चों पर लाठियां भांजी गईं और हिंदी में प्रश्नपत्र देने से गोपनीयता भंग होगी, कहकर उनके चरित्र पर उंगली उठाई गई. पर, पीछे नहीं हटे हिंदी के नन्हें महारथी. किस्तों में ही सही, उन्हें जीत का स्वाद मिलता रहा. हिंदी में सवाल समझ कर इम्तहान देने के इंतज़ार में एक पूरी पीढ़ी वयस्क हो गई. हर साल माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक परीक्षाओं की मेरिट लिस्ट निकलती है, पर टॉप 10 में भी हिंदीभाषी छात्र नहीं के बराबर होते हैं. हिंदी के नौनिहालों का तर्क होता है कि हम पढ़ते हैं हिंदी माध्यम के स्कूलों में और प्रश्नपत्र आते हैं अंग्रेजी में. आफत शिक्षकों के लिए भी रही है, क्योंकि उन्हें सारे विषयों के सवालों का अंग्रेजी अनुवाद कर छात्रों को समझाना पड़ता है.

माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक परीक्षाओं में हिंदी में प्रश्नपत्र देने की मांग 1994 से हो रही है. दो दशक पहले कोलकाता के एक वकील ने अदालत का दरवाज़ा खटखटाया तो सरकार ने सिर्फ़ एक विषय यानी गणित में हिंदी में पर्चा देने का सिलसिला शुरू किया. उसके बाद से वह जैसे आंदोलन की राह देखती रही. छात्रों ने हस्ताक्षर अभियान चलाया. छिटपुट आंदोलन हर साल होते रहे, पर सरकार के कानों तक आवाज़ नहीं पहुंच रही थी. आख़िर में 1994 में राज्य भर से आए छात्रों, शिक्षकों, बुद्धिजीवियों एवं अभिभावकों ने पश्चिम बंगाल छात्र संघर्ष समिति का गठन किया. 1996 में पूरे राज्य के प्रतिनिधियों को लेकर एक रैली हुई और कमेटी का एक प्रतिनिधिमंडल तत्कालीन गृहमंत्री बुद्धदेव भट्टाचार्य से मिला. हर बार समस्या पर सहानुभूति पूर्वक विचार करने का आश्वासन मिला. जब-जब विधानसभा या लोकसभा चुनाव आए, सरकार के मुखिया और उनके मंत्रियों ने इसी तरह का भरोसा दिलाया. चुनावी भाषणों में मुख्यमंत्री ने इस मांग को जायज़ माना तो चुनाव बीतने के बाद शिक्षा विभाग ने कई तरह की बाधाएं बताकर मांग नामंजूर कर दी. इस दौरान शिक्षा विभाग के लोगों ने ग़लतबयानी भी की. मिसाल के तौर पर विधानसभा की पिटीशन कमेटी के सामने पश्चिम बंगाल माध्यमिक शिक्षा परिषद एवं उच्च माध्यमिक परिषद ने दावा किया कि किसी राज्य में दो से ज़्यादा भाषाओं में प्रश्नपत्र नहीं दिए जाते. जबकि उत्तर प्रदेश और बिहार में तीन-तीन भाषाओं में प्रश्नपत्र दिए जाते हैं. असम में भी असमिया, अंग्रेजी और बांग्ला में पर्चे दिए जाते हैं. वहां के बांग्लाभाषियों ने इसके लिए आंदोलन नहीं किया था, बल्कि यह सरकार के सभी वर्गों का हित सोचने के नज़रिए के कारण हुआ. इसके अलावा महाराष्ट्र और राजस्थान जैसे दूसरे राज्यों में तीन-तीन भाषाओं में प्रश्नपत्र देने की व्यवस्था है.

माध्यमिक शिक्षा परिषद का एक बड़ा बहाना था कि हिंदी में प्रश्नपत्र देने से गोपनीयता भंग होगी. सवाल यह है कि अंग्रेजी और बांग्ला के अलावा नेपाली में प्रश्नपत्र देने से अगर गोपनीयता बरक़रार रह पाती है तो हिंदी संस्करण छपते ही यह गोपनीयता कैसे भंग हो जाएगी? सरकार 1997 की माध्यमिक परीक्षा में भूगोल और गणित के पर्चे लीक होने की उस घटना को भी जानबूझ कर भूलती रही, जिसमें मामले का पर्दाफाश करने के लिए एक आदमी परीक्षा से पहले ही माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के सचिव की मेज पर पर्चा रख गया. इसे लेकर बहुत बवाल हुआ. हिंदी के ख़िलाफ़ चलाए जा रहे कुतर्क की याद दिलाए जाने पर लोग बगले झांकने लगे.

संघर्ष समिति के सचिव जुबेर रब्बानी ने बताया कि परीक्षार्थी सवाल ठीक-ठीक समझ सकें, इसीलिए उनकी मातृभाषा में पर्चे दिए जाते हैं. जहां हज़ारों की संख्या में परीक्षार्थी हों, वहां प्रश्नपत्र उनकी मातृभाषा में ही होने चाहिए. विधानसभा की पिटीशन कमेटी

के सामने वर्ष 2002 में राज्य की माध्यमिक परीक्षा में शामिल हुए छात्रों की संख्या भी बताई गई, जिसके मुताबिक़ बांग्ला के 4,74,788 हिंदी के 44,253 नेपाली के 6,493 और अंग्रेजी माध्यम के 383 परीक्षार्थी थे. हर साल आंकड़े का अनुपात इसी के आसपास रहता है. मतलब बांग्ला माध्यम के छात्रों के बाद सबसे ज़्यादा तादाद हिंदी माध्यम के परीक्षार्थियों की होती है.

विभिन्न हिंदी स्कूलों के 22 छात्रों, ओम प्रकाश जायसवाल और विधायक डॉ. प्रवीण कुमार साव के हस्ताक्षरों से युक्त याचिका पर सुनवाई करने वाली विधानसभा की पिटीशन समिति को स्कूल शिक्षा विभाग ने ढेर सारे तर्क दिए. बताया गया कि बंगाल में दूसरी कक्षा से अंग्रेजी पढ़ाई जाती है और 10वीं तक पहुंच कर अगर छात्र अंग्रेजी में प्रश्नपत्र नहीं समझ पाता है तो यह उसकी समझदारी की सीमा को दर्शाता है. विभाग ने यह भी तर्क दिया कि छात्रों को यह आज़ादी है कि परीक्षा भवन के निरीक्षकों से प्रश्नपत्र समझ सकें, पर उसके अफ़सर यह भूल गए कि इसके लिए निरीक्षकों को भी हिंदी आनी चाहिए. विभाग ने अनुवाद में लगने वाले भारी ख़र्च का भी रोना रोया. आख़िर में समिति ने नियम 13(सी)1 का हवाला देते हुए माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक परीक्षाओं के पर्चे पांच भाषाओं यानी हिंदी, बांग्ला, अंग्रेजी, नेपाली और उर्दू में प्रकाशित करने का सुझाव दिया.

गत 14 जनवरी को भूगोल के पर्चे हिंदी में देने की मांग करते हुए छात्र संघर्ष समिति के बैनर तले स्कूली छात्रों ने जुलूस निकाला और राज्य के माध्यमिक शिक्षा परिषद को ज्ञापन दिया. संघर्ष समिति के संयुक्त सचिव उपेंद्र यादव ने चौथी दुनिया से बातचीत में इतिहास के पर्चे हिंदी में देने के आठ जनवरी के फ़ैसले का स्वागत किया. साथ ही भूगोल के अलावा उच्च माध्यमिक के पर्चे हिंदी में देने की मांग को लेकर आंदोलन जारी रखने का ऐलान भी किया. इसके बाद समिति शिक्षा मंत्री पार्थ डे को भी ज्ञापन देने वाली है. समिति को सुशील कुमार मुखर्जी जैसे बांग्ला बुद्धिजीवियों और हिंदी मीडिया का भरपूर समर्थन मिलता रहा है. इसी के बूते उसे आख़िरी जंग जीतने की उम्मीद है. वैसे भी उम्मीद की जानी चाहिए कि अगर इतिहास ठीक हो गया तो अगले साल तक भूगोल भी सुधर जाएगा, क्योंकि 2011 विधानसभा चुनावों का साल है. कौन जाने सरकार ने तोहफ़े के तौर पर देने के लिए इसे रख लिया हो.

feedback@chauthiduniya.com

# कामरेड, बसु की विरासत संभालिए

उस कामरेड ने अपनी आंखें दान कर दीं और अपना शरीर भी अस्पताल को दे दिया. वे आम कम्युनिस्ट होंगे, जो आख़िरी दम तक रिटायर नहीं होते. लेकिन, ज्योति बसु नाम का कामरेड तो दम निकलने के बाद तक रिटायर नहीं हुआ. विरासत में इतना कुछ दे गया कि मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी अगर अमल करे तो वह मौजूदा संकट से उबर जाएगी और आइंदा फिर इतनी ग़रीब नहीं होगी. बसु के जाने से ऐसा लगता है कि समय के साथ बदलने का संदेश देने वाला आख़िरी कामरेड चला गया.

माकपा में संसदीय लोकतंत्र की जो लौ हरिकिशन सिंह सुरजीत ने जलाई थी, बसु उसकी आख़िरी बड़ी कड़ी थे. 1967 में सबसे पहले उन्होंने संयुक्त सरकार में शिरक़त की और उप मुख्यमंत्री बने. 1977 की जनता लहर में जब उन्होंने बंगाल की कुर्सी संभाली तो 23 साल तक लगातार राज करने का रिकॉर्ड बनाया. 1977 में सत्ता संभालते ही बसु ने ऑपरेशन बर्गा के ज़रिए भूमि सुधारों पर अपनी पूरी ताक़त झोंक दी. पंचायतें मज़बूत हुईं, सत्ता का विकेंद्रीकरण हुआ और पहली बार गांवों के ग़रीब लोगों ने सत्ता में भागीदारी का स्वाद चखा. बंगाल की पंचायती व्यवस्था को देश में मॉडल के रूप में पेश किया जाने लगा. पंचायती व्यवस्था और सांप्रदायिक सौहार्द, इन दोनों ही क्षेत्रों में बसु की उपलब्धियों का लोहा विपक्षी भी मानते हैं. गांव माकपा के गढ़ बन गए. विपक्षी आरोप लगाते रहे कि पंचायतें माकपा की ग्रामीण इकाइयां बन गई हैं, पुलिस का राजनीतिकरण हो गया है, पर हर पांच साल पर चुनाव होते रहे और बसु शपथ लेते रहे. अपना घर ठीक था तो दिल्ली भी बात मानती थी. सुरजीत और बसु की जोड़ी ने केरल लाइन को कभी हावी नहीं होने दिया. सिवाय 1996 के, जब उन्हें प्रधानमंत्री पद का प्रस्ताव दिया गया. पार्टी ने प्रस्ताव ठुकरा दिया, यह कहकर कि हम तब तक सत्ता में भागीदारी नहीं कर सकते, जब तक हमें आख़िरी निर्णय लेने की क्षमता नहीं हासिल हो जाती. इस प्रस्ताव के ख़िलाफ़ वोटिंग में बंगाल के उन कामरेडों ने भी हिस्सा लिया, जो आज बसु के न रहने पर विलाप कर रहे हैं. पत्रकार एम जे अकबर ने ठीक ही कहा है कि बोस (सुभाषचंद्र) और बसु (ज्योति )20वीं सदी के सबसे बड़े हीरो हैं. दोनों प्रधानमंत्री हो सकते थे, पर एक को क़िस्मत ने रोक दिया और दूसरे को उसकी पार्टी ने.

कांग्रेस के संभावित हस्तक्षेप की आशंका से एक बड़ा अवसर पार्टी ने खो दिया. इस अवसर का उपयोग पार्टी पूरे देश में अपने प्रसार के लिए कर सकती थी. बंगाल, केरल और त्रिपुरा से आगे बढ़ने की सीढ़ी पार्टी ने गंवा दी. ख़ैर, एक अनुशासित सिपाही की तरह बसु ने पार्टी का फ़ैसला क़बूल किया, पर बाद में एक इंटरव्यू में उन्होंने जब इसे एक ऐतिहासिक भूल कहा तो पार्टी ने उनका व्यक्तिगत विचार बताकर ख़ारिज़ कर दिया. इसी तरह मनमोहन सिंह के पहले प्रधानमंत्रित्व काल में बसु को भारत रत्न देने का प्रस्ताव आया तो पार्टी राजी नहीं हुई. इसमें भी माकपा ने अपने सिद्धांतों का हवाला दिया. और, एक बार फिर माकपा का उदारवादी खेमा हार गया.

बसु जैसे कामरेड की सबसे बड़ी ख़ासियत यह थी कि वह मार्क्सवाद को भारतीय संदर्भ में प्रासंगिक बनाए रखने के लिए नीतियों में बदलाव के पक्षधर रहे. 1940 में ब्रिटेन से क़ानून की डिग्री लेकर लौटते ही बसु वामपंथी विचारधारा से जुड़े. उस दौर में कामरेड लोग अंग्रेजों के ख़िलाफ़ सशस्त्र संघर्ष करने और इसमें हिटलर एवं मुसोलिनी की मदद लेने के सुभाष चंद्र बोस के प्रस्ताव के साथ थे. वामपंथी कांग्रेस के लिए बनी गांधी जी की नीतियों से भी असहमत थे. वामपंथी चाहते थे कि ज़मींदारों की संपत्ति में से मज़दूरों और किसानों को भी बराबर का हक़ मिले. अपनी इसी असहमति के चलते वामपंथियों ने 1942 में गांधी जी के भारत छोड़ो आंदोलन का भी बहिष्कार किया. 1917 की बोल्शेविक क्रांति की

कामयाबी और रूस में दुनिया की पहली समाजवादी सरकार के गठन से उत्साहित बसु वर्गविहीन समाज के गठन के लिए कुलबुलाने लगे थे. वह ट्रेड यूनियनों में भागीदारी करने लगे. एक कट्टर ट्रेड यूनियन नेता की छवि ने हालांकि बंगाल को औद्योगिक रूप से तबाह कर दिया. बसु के शासनकाल की यह सबसे बड़ी ख़ामी रही. जब चेतना आई, तब तक काफ़ी देर हो चुकी थी. अमेरिका की साम्राज्यवादी नीतियों और पूंजीपतियों को पानी पी-पीकर कोसने वाले ज्योति बसु ने अपनी छवि बदलनी शुरू की. सत्ता संभालने के समय बंगाल देश का तीसरा सबसे बड़ा औद्योगिक राज्य था, पर 1995 तक वह 20वें नंबर पर आ गया. वित्तमंत्री मनमोहन सिंह ने उदारीकरण की जो हवा चलाई तो बसु साथ हो लिए. लाइसेंस राज ख़त्म होने और विश्व व्यापार व्यवस्था के अस्तित्व में आने से देश में देशी-विदेशी पूंजी निवेश की संभावनाएं बढ़ गईं.

अक्टूबर 1994 में बसु ने पोलित ब्यूरो की नाराज़गी की परवाह न करते हुए बंगाल की नई औद्योगिक नीति का ऐलान कर दिया. इसमें उन्हें सुरजीत का पूरा साथ मिला. राज्य की मज़दूर यूनियनें फैक्ट्रियों के बंद पड़े तालों की तरह जंग खाकर पस्त पड़ी थीं, उनकी ओर से भी विरोध नहीं हुआ. जनवरी 1992 में पार्टी की मद्रास कांग्रेस के प्रस्तावों की परवाह न कर आगे बढ़ते रहे बसु. प्रस्ताव में रक्षा सहित कई क्षेत्रों में अमेरिकी मदद को ख़तरनाक माना गया था, पर बसु ने जनवरी 1995 में हल्दिया पेट्रो रसायन परियोजना में अमेरिकी हिस्सेदारी को मंजूरी दे दी. यहां तक कि बोफोर्स घोटाले के कारण बदनाम हो चुके हिंदुजा बंधुओं के निवेश प्रस्ताव को भी बंगाल सरकार ने मान लिया. बसु ने निवेश जुटाने के लिए दनादन विदेशी दौरे किए. जिस पूंजीवाद और साम्राज्यवाद को काले झंडे दिखाए जाते थे, उनके लिए लाल गलीचे बिछाए जाने लगे. इस तरह बसु ने राज्य को बदनामी के दाग से उबारने और निवेश का माहौल बनाने के लिए अपने को पूरी तरह झोंक दिया. पर जैसी की कहावत है, दूध का जला, मट्ठा फूंक-फूंक कर पीता है, पूंजीपति वर्ग सशंकित रहा. निवेश के बहुत कम सहमति पत्र (मेमोरेंडम आफ अंडरस्टैंडिंग) आगे बढ़ पाए. इस संक्रांति काल में ही बुद्धदेव भट्टाचार्य बसु के उत्तराधिकारी बने. बुद्धदेव ने औद्योगिकीकरण की गाड़ी आगे बढ़ाई, पर सरकार के कई फ़ैसलों ने साबित कर दिया कि उनमें पार्टी पर वैसी पकड़ और दूरदर्शिता नहीं है, जो बसु में थी. नतीजे के तौर पर नंदीग्राम फायरिंग और नैनो की विदाई जैसे हादसे सामने आए.

बसु के निधन के बाद थोड़ी राजनीति भी हो रही है. दिवंगत नेता को श्रद्धांजलि देने ममता बनर्जी नहीं आईं तो सीताराम येचुरी को लगा कि उन्होंने बंगाल की जनता का अपमान किया है. इसके जवाब में ममता ने कहा है कि वह माकपा की नौकर नहीं हैं. ममता की बात अगर छोड़ भी दें तो कम से कम कामरेडों को इस तरह के विवादों को तूल नहीं देना चाहिए. ज्योति बसु ऐसे समय में विदा हुए हैं, जब बंगाल नाज़ुक मोड़ पर खड़ा है. कामरेड शोकसभाओं में उनके बताए गए रास्ते पर चलने की कसमें खा रहे हैं. पूरा कोलकाता बसु के पोस्टरों से पट गया है. सहानुभूति लहर एक छोटी सी उम्मीद बना रही है. चलिए, मौत के बाद भी अगर पार्टी उनके बताए रास्ते पर चले तो बेड़ा पार हो सकता है. वैसे कामरेड ने अपनी आंखें दान कर दो लोगों को दृष्टि दी है. ये आंखें अगर 2011 के चुनावों में वामपंथी किला बरक़रार देख लें तो उससे बड़ी श्रद्धांजलि कोई और क्या होगी.

बिमल राय
feedback@chauthiduniya.com

एक शरद पवार क्या, सरकार में किसी से भी पूछो तो यही उत्तर मिलता है कि बढ़ती क़ीमतें तो ग्लोबल फेनामन यानी सारे संसार की समस्या है.



# उफ, यह महंगाई!

फोटो–प्रभात पाण्डेय

जफर आगा

क्या आप जानते हैं कि इस समय दिल्ली के बाज़ारों में घी लगभग 250 रुपये प्रति किलो के भाव बिक रहा है! जी हां, चौंकिए मत, यह देशी घी का भाव नहीं है. यह उसी डालडा घी का भाव है, जिसे हमारे दादा–दादी खाना भी स्वीकार नहीं करते थे. आप सोच रहे होंगे कि घी महंगा हुआ तो क्या, सरसों के तेल में खाना पकाकर काम चला लिया जाएगा. लेकिन, सरसों का तेल भी कोई कौड़ियों के भाव नहीं है. वह भी इस समय 70–75 रुपये प्रति किलो के हिसाब से बिक रहा है.

जाने भी दीजिए घी–तेल! इस देश के आम आदमी को घी–तेल कब चाहिए? वह तो आटा, दाल और चावल से पेट भरकर ख़ुश रहने का आदी हो चुका है. लेकिन अब आटा, दाल एवं चावल भी आम आदमी की पहुंच से बाहर हो रहे हैं. खुले बाज़ार में आटा लगभग 25 रुपये प्रति किलो, थोड़ा ढंग का चावल 40 रुपये प्रति किलो और अरहर जैसी रोज़ पकने वाली दाल 100 रुपये प्रति किलो के भाव है. छोड़िए, हम हिंदुस्तानी ठहरे मलंग. एक प्याला चाय पीकर भी गुज़ारा कर सकते हैं. लेकिन, चाय पर गुज़ारा करने से पहले चीनी के दाम ज़रूर पता कर लीजिएगा. दिल्ली में आजकल चीनी का भाव लगभग 50 रुपये प्रति किलो है. यदि आप 50 रुपये प्रति किलो की चीनी ख़रीद कर खुद को चाय से गर्म नहीं कर सकते हैं तो दिन–प्रतिदिन के बढ़ते भाव से अपना ख़ून खौलाइए और खुद को गर्म रखिए!

हमने ख़ून खौलाना यहां मुहावरे के तौर पर नहीं प्रयोग किया है. वह आम आदमी, जिसका ठेका यूपीए सरकार ने चुनाव में उठाया था, उसका ख़ून अब निस्संदेह खौल रहा है. वह चाहे घी–तेल हो या आटा–दाल या फिर चीनी–चावल, दिन–प्रतिदिन हर सामान आम आदमी की पहुंच से बाहर हो रहा है. हमारी कालोनी के गार्ड सूरज कुमार कहते हैं, साहब, चार हज़ार रुपये हमारा वेतन है. उसमें किराया कैसे दें और पेट कैसे पालें? अब समझ में नहीं आता. गांव से जो दाल–चावल लाए थे, वह भी अब ख़त्म होने वाला है. सूरज जैसे करोड़ों भारतीयों की आज यही चिंता है. वे आसमान छूती क़ीमतों में अपना पेट पालें तो पालें कैसे? सूरज और उनके जैसे करोड़ों लोग भले ही चिंतित हों, परंतु कृषि मंत्री शरद पवार को बढ़ती क़ीमतों की कोई चिंता नहीं है. किसी पत्रकार ने पवार से पूछ लिया कि आख़िर चीनी 50 रुपये प्रति किलो क्यों बिक रही है? इस पर वह बोले कि मायावती ज़िम्मेदार हैं. चीनी दिल्ली, मुंबई, हैदराबाद और चेन्नई में बिके 50 रुपये प्रति किलो और ज़िम्मेदार हैं बेचारी मायावती! यह भी भला कोई बात हुई.

एक शरद पवार क्या, सरकार में किसी से भी पूछो तो यही उत्तर मिलता है कि बढ़ती क़ीमतें तो ग्लोबल फेनामन यानी सारे संसार की समस्या है. ऐसा कौन है, जो यह नहीं जानता कि पिछले साल देश के कुछ भागों में सूखा पड़ा था. अनाज की पैदावार कम हुई थी. फिर सारे संसार में अनाज के भाव बढ़े. इस बात की ख़बर क्या सरकार को नहीं थी. खाद्य–कृषि मंत्रालय और पीएमओ सभी के पास यह आंकड़े थे कि किन भागों में मानसून न आने से देश को कितने खाद्यान की कमी पड़ सकती है. क्या यह समझने के लिए कि जब एक वस्तु की कमी पड़ेगी तो उसके भाव बढ़ेंगे, किसी बड़े विज्ञान का ज्ञान आवश्यक है? वह आम आदमी भी, जिसका डंका पीट कर यह सरकार सत्ता में आई, अच्छी फ़सल न होने पर यह समझ रहा था कि इस बार रोज़मर्रा की चीज़ों के दाम बढ़ेंगे. परंतु, यह बात अर्थशास्त्री एवं देश के प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह को समझ में नहीं आ रही कि बाज़ार का क्या हाल हो रहा है और आम आदमी पर क्या बीत रही है.

कदापि अब यह समझने को कि बाज़ारों में आग क्यों लगी है और आटा–दाल के भाव आसमान क्यों छू रहे हैं, प्रधानमंत्री ने सारे देश के मुख्यमंत्रियों की बैठक दिल्ली में बुलाई है. इसमें जो होगा, हम वह पहले ही बता दें. केंद्र सरकार मुख्यमंत्रियों से कहेगी कि आप क़ीमतों पर रोक लगाइए, जमाख़ोरों के विरुद्ध कड़े क़दम उठाइए, सरकार बाहर से सामान मंगवा रही है. उधर ग़ैर कांग्रेस शासित राज्यों के मुख्यमंत्री केंद्र सरकार को दोषी ठहराएंगे. इस बैठक के बाद भी आटा, दाल, घी और चावल के दाम घटने वाले नहीं हैं. हां, बढ़ती क़ीमतों का राजनीतिकरण ज़रूर हो जाएगा.

चीनी और हरी मटर दिल्ली के बाज़ारों में 50 रुपये प्रति किलो तक बिक जाए और सरकार के कान पर जूं तक न रेंगे. आख़िर इसका क्या कारण है? बात यह है कि खुले बाज़ार की आर्थिक नीति के चलते लोकतंत्र का स्वरूप बदल चुका है. चुनाव आएदिन महंगे होते जा रहे हैं. लोकसभा की एक सीट पर प्रत्येक उम्मीदवार पांच से 10 करोड़ रुपये तक ख़र्च करता है और फिर उनमें से कोई एक चुनाव जीतता है. लोकसभा में करोड़पति सांसदों की संख्या बढ़ रही है. जब चुनाव पर करोड़ों ख़र्च होगा तो वह कहीं से निकलेगा भी तो! ज़ाहिर है कि वह ख़र्चा भी बाज़ार से ही निकलेगा. जिस पार्टी ने बड़े–बड़े पूंजीपतियों से पैसा लेकर चुनाव में पानी की तरह बहाया, वह सत्ता में आने के बाद पूंजीपतियों से तो पैसा नहीं घसीटेगी. आख़िर वह पैसा आम आदमी की जेब काटकर ही निकाला जाएगा.

**जाने भी दीजिए घी–तेल! इस देश के आम आदमी को घी–तेल कब चाहिए? वह तो आटा, दाल और चावल से पेट भरकर ख़ुश रहने का आदी हो चुका है. लेकिन अब आटा, दाल एवं चावल भी आम आदमी की पहुंच से बाहर हो रहे हैं.**

तब ही तो आपकी जेब, आप जब भी बाज़ार जाते हैं तो कट जाती है. यही कारण है कि घी 250 रुपये प्रति किलो, अरहर की दाल 100 रुपये प्रति किलो और चीनी 50 रुपये प्रति किलो है. और, सरकार को कोई चिंता नहीं है. जब चुनाव आएगा तो आम आदमी की चिंता होगी. जब तक चुनाव सिर पर नहीं आते, तब तक पिछले चुनाव ख़र्चे का टैक्स भरते रहिए और खाना खाकर नहीं, मलहार गाकर सोते रहिए.

*(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)*

feedback@chauthiduniya.com

# उत्तर भारतीय, टैक्सियां, कांग्रेस और ठाकरे

शशि शेखर

महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री अशोक राव चह्वाण और उनके मंत्रिमंडल से ऐसी नादानी की उम्मीद किसी को न थी. एक ऐसी नादानी, जो भाषाई सांप्रदायिकता और क्षेत्रवाद को जाने–अनजाने हवा दे गई. इसने पहले से ही मराठी बनाम ग़ैर मराठी की लड़ाई में पिस रही मुंबई, मुंबईकरों और उत्तर भारतीय हिंदीभाषियों के जख्म पर नमक छिड़कने का काम किया है. दरअसल, चह्वाण सरकार के परिवहन मंत्री आर विखे पाटिल ने फ़रमान सुनाया है कि टैक्सी चलाने के नए लाइसेंस अब सिर्फ़ उन्हीं लोगों को मिलेंगे, जो मराठी भाषा अच्छी तरह से लिख–पढ़ सकते हों और पिछले पंद्रह साल से महाराष्ट्र में निवास कर रहे हों. महाराष्ट्र मोटर क़ानून के मुताबिक़, टैक्सी चालक को स्थानीय भाषा की जानकारी होनी चाहिए. शायद राज्य के परिवहन मंत्री को यह इल्म नहीं कि मुंबई की 40 फ़ीसदी जनता हिंदी बोलती है. तो क्या हिंदी मुंबई की स्थानीय भाषा नहीं है?

साफ तौर पर इस फ़ैसले का मक़सद हिंदी प्रदेशों से मुंबई जाकर रोजी–रोटी कमाने वालों को इस पेशे से दूर करना है. यह फ़ैसला इसलिए भी लिया गया, क्योंकि मुंबई के टैक्सी चालकों में एक बहुत बड़ी संख्या हिंदीभाषी लोगों की है. ठाकरे खानदान तो पहले से ही मुंबईकरों की बेरोज़गारी का ठीकरा हिंदीभाषियों के सिर पर फोड़ता रहा है, इस बार यह मौक़ा कांग्रेस के नेतृत्व वाली सरकार ने हथिया लिया. हालांकि, विवाद बढ़ने पर चह्वाण ने सफाई दी कि स्थानीय भाषा के तौर पर गुजराती और हिंदी जानने वाले लोग भी परमिट ले सकते हैं. लेकिन, इस सफाई का अब कोई मतलब नहीं है, क्योंकि इस लड़ाई में हिंदीभाषियों के विरोध के नाम पर जन्मी राज ठाकरे की मनसे, शिवसेना और भाजपा भी कूद चुकी है. राज ठाकरे ने तो धमकाने वाले अंदाज़ में कह दिया है कि मंत्रिमंडल को फ़ैसला वापस नहीं लेने दिया जाएगा.

बहरहाल, इस पूरे प्रकरण में कुछ ऐसे तथ्य भी हैं, जो चह्वाण सरकार के इस फ़ैसले की असल कहानी बयां करते हैं. फ़िलहाल, मुंबई की सड़कों पर 56,000 टैक्सियां चल रही हैं. हालांकि 24 हज़ार परमिट अभी भी इस्तेमाल नहीं हो रहे हैं. अब सरकार इन्हीं 24 हज़ार परमिटों में से चार हज़ार परमिट ऐसी प्राइवेट पार्टी को बेचना चाहती है, जो एसी टैक्सी ला सके. मुंबई में अभी भी आरामदेह एसी टैक्सियों की संख्या नाममात्र की है. ज़ाहिर है, सरकार के इस क़दम से प्रति वर्ष रोज़गार के चार हज़ार नए अवसरों की संभावना बनती दिख रही है. रोज़गार के हिसाब से देखें तो टैक्सी चलाने का कारोबार कुछ कम नहीं है, लेकिन सरकार के भाषा संबंधी फ़ैसले से साधारण टैक्सी चलाने वालों और हिंदी प्रदेशों से आए लोगों के लिए नई मुसीबत खड़ी हो गई है. मुसीबत है, शिवसेना और मनसे की अराजकता. पहले भी मनसे कार्यकर्ता हिंदीभाषी लोगों, गली–मुहल्ले में ठेला लगा कर सब्जी–भाजी बेचने वालों के ख़िलाफ़ मोर्चा खोल चुके हैं. अब इनके निशाने पर टैक्सी चालक होंगे.

मुंबई में लगभग दो लाख टैक्सी चालक हैं, जिनमें ज़्यादातर बिहार और उत्तर प्रदेश से आए लोग हैं. जबकि महाराष्ट्र में हर साल पांच लाख बेरोज़गार नौजवानों की फौज तैयार हो रही है. बेरोज़गारी में वृद्धि दर सात फ़ीसदी तक पहुंच गई है. सरकार के लिए इन लोगों को रोज़गार मुहैया कराना किसी मुसीबत से कम नहीं है. जहां तक मुंबई में टैक्सी सुविधाओं की बात है, तो वह अभी भी अपने काले–पीले चोले से बाहर निकल पाने में असफल साबित हुई है. रेडियो कैबों की संख्या अभी भी वहां बहुत कम है. लेकिन, चह्वाण सरकार के एजेंडे में बेहतर टैक्सी सेवा की कोई जगह नहीं है. उल्टे भाषा के नाम पर राजनीति कर वह ग़ैर मराठियों पर निशाना साध रही है. दूसरी ओर दिल्ली की कांग्रेस सरकार है, जो राष्ट्रमंडल खेलों के बहाने अपने कांस्टेबलों और डीटीसी के बस चालकों को अंग्रेजी सिखाने की कोशिश कर रही है. राहुल गांधी मध्य प्रदेश के कॉलेजों में जाकर छात्रों को अंग्रेजी सीखने की नसीहत देते हैं, लेकिन अशोक राव चह्वाण टैक्सी चालकों के लिए मराठी भाषा की वकालत कर रहे हैं. और, इस तरह से कर रहे हैं कि राज ठाकरे को जबरन इस लड़ाई में आगे आना पड़ रहा है, इस डर से कि कहीं उनके परंपरागत राजनीतिक मुद्दे को अशोक राव चह्वाण न उड़ा ले जाएं. दरअसल, पिछले विधानसभा चुनाव में राज ठाकरे इन्हीं ग़ैर मराठियों का विरोध करके 13 सीटों पर क़ब्ज़ा जमा चुके हैं. 2012 में वृहन्मुंबई महापालिका (बीएमसी) के चुनाव होने हैं. बीएमसी पर अभी शिवसेना का क़ब्ज़ा है. अब शायद अशोक चह्वाण भी राज के नक़्शेक़दम पर चलकर मराठी मानुषों को लुभाना चाहते हैं, ताकि महाराष्ट्र के साथ–साथ मुंबई (बीएमसी) पर भी उनका क़ब्ज़ा हो जाए. टैक्सी को मराठी भाषा से जोड़ने के पीछे उनका मक़सद भी चुनावी राजनीति है. हालांकि ऐसा करके उन्होंने अपनी पार्टी के हितों पर कुठाराघात किया है, जिसका असर बहुत जल्द देखने को मिल सकता है. बिहार में इस साल विधानसभा चुनाव होने हैं. नीतीश कुमार ने महाराष्ट्र सरकार के फ़ैसले पर कड़ी आपत्ति जताई है और प्रधानमंत्री को पत्र लिखने की बात कही है. निश्चित तौर पर बिहार की सभी प्रमुख राजनीतिक पार्टियां चुनाव में इस मुद्दे का इस्तेमाल कांग्रेस के ख़िलाफ़ करेंगी. महाराष्ट्र में भी शिवसेना और मनसे की राजनीतिक कार्यप्रणाली पर उंगली उठाने का नैतिक हक़ कांग्रेस के पास नहीं बचा, क्योंकि सांप्रदायिकता महज़ धार्मिक नहीं होती. यह भाषाई भी होती है और क्षेत्रीय भी. और, चह्वाण सरकार के हालिया फ़ैसले से कम से कम भाषाई और क्षेत्रीय सांप्रदायिकता की बू तो आ ही रही है. अब महाराष्ट्र की राजनीति में कांग्रेस भी उसी रास्ते पर चल पड़ी है, जिस पर चलकर शिवसेना ने सत्ता पाई थी और राज ठाकरे सत्ता सुख भोगना चाहते हैं.

**महाराष्ट्र में शिव सेना और मनसे की राजनैतिक कार्यप्रणाली पर उंगली उठाने का नैतिक हक़ कांग्रेस के पास नहीं बचा. क्योंकि सांप्रदायिकता महज़ धार्मिक नहीं होती. यह भाषाई भी होती है और क्षेत्रीय भी. और चह्वाण सरकार के हालिया फ़ैसले से कम से कम भाषाई और क्षेत्रीय सांप्रदायिकता की बू तो आ ही रही है.**

ज़ाहिर है, चह्वाण सरकार ने ठाकरे खानदान के हाथ में उसकी राजनीति के माकूल एक मुद्दा थमा दिया है. ख़ैर, मनसे और शिवसेना की चाल, चरित्र और चेहरे से तो पूरा देश वाक़िफ़ है, लेकिन टैक्सी चालकों के नाम पर सियासत करके अशोक चह्वाण क्या साबित करना चाहते हैं? क्या वह भूल गए थे कि वह एक ऐसी पार्टी से ताल्लुक रखते हैं, जिसने हमेशा ठाकरे खानदान की राजनीति को सांप्रदायिक कहकर कोसा. क्या उन्हें इस बात का एहसास नहीं था कि इस तरह के फ़ैसले से लोगों के बीच दूरियां घटने की बजाए बढ़ेंगी? फिर भी, अशोक चह्वाण से इतनी उम्मीद तो की ही जा सकती है कि आने वाले दिनों में सरकार कोई ऐसा फ़ैसला नहीं लेगी, जिसके मुताबिक़ मुंबई की टैक्सियों में सफर करने के लिए ग़ैर मराठियों और हिंदीभाषियों को पहले मराठी भाषा सीखनी होगी!

shashishekhar@chauthiduniya.com

आईआईएम लखनऊ ने अपनी स्थापना के मात्र 25 वर्षों के अंदर ही अपना एक महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है. प्रबंध नगर में 185 एकड़ में बसा यह संस्थान खुद में ही एक अलग निराली दुनिया है.



# आईआईएम में पुलिस वाला

अमिताभ ठाकुर

अभियंत्रण के साथ ही देश के समुचित एवं सुचारू विकास के लिए जिस दूसरे आयाम को ज़्यादा आवश्यक समझा जाता रहा है, वह है प्रबंधन अर्थात मैनेजमेंट. बिना उचित प्रबंधन के किसी भी देश की अर्थ व्यवस्था में वांछित वृद्धि एवं संसाधनों के सही उपयोग की बात सोची तक नहीं जा सकती है. इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए हमारे देश में मैनेजमेंट की पढ़ाई पर प्रारंभ से ही ध्यान दिया गया है. इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भारतीय प्रबंध संस्थानों की स्थापना की गई, जिनमें से पहला संस्थान 1961 में कोलकाता और दूसरा भी उसी वर्ष अहमदाबाद में स्थापित हुआ. फिर बंगलुरू और उसके बाद 1984 में आईआईएम लखनऊ की स्थापना हुई. हमारे देश में इन आईआईएम के व्यापक योगदान और महत्व को देखते हुए इसके बाद भी कई आईआईएम खुले और खुलने का क्रम अभी भी ज़ोर–शोर से चल रहा है.

मैं यहां ख़ास तौर पर आईआईएम लखनऊ और उसमें भी एक पुलिस अधिकारी के रूप में स्वयं के अनुभवों के बारे में चर्चा करूंगा. आईआईएम लखनऊ ने अपनी स्थापना के मात्र 25 वर्षों के अंदर ही अपना एक महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है. प्रबंध नगर में 185 एकड़ में बसा यह संस्थान ख़ुद में ही एक अलग निराली दुनिया है. मुख्य द्वार पर रथ पर सवार श्रीकृष्ण और अर्जुन की अद्वितीय प्रतिमा यहां आपका स्वागत करती है. प्रतिमा शायद यह संदेश देना चाहती है कि यहां के प्रत्येक छात्र को अर्जुन के समान यहां के कृष्ण जैसे प्राध्यापकों से प्रबंधन का समस्त ज्ञान हासिल करके देश के अग्रिम विकास एवं उत्थान के लिए उसका उपयोग करना चाहिए. अंदर पूरा का पूरा कैंपस इस क़दर शांत और स्थिर नज़र आता है, मानो कोई कड़ी तपस्या चल रही हो. ख़ैर, तपस्या तो हो ही रही होती है, उन क़रीब साढ़े छह–सात सौ छात्र–छात्राओं की, जो यहां दो वार्षिक सत्रों में अध्ययन के लिए आए होते हैं. जहां आपको देश के तमाम सार्वजनिक स्थानों, जिनमें कुछ शिक्षण संस्थान भी सम्मिलित हैं, में रात–दिन शोरशराबे और उथलपुथल का माहौल दिखाई दे जाएगा, वहीं इस प्रबंध नगर में आने पर कई बार तो ऐसा महसूस होने लगेगा कि यह कोई वीरान सी बस्ती है. न कोई शोरगुल, न कोई हल्ला–गुल्ला और न कहीं कोई चिल्लपों. झगड़ा–लड़ाई, मारपीट और गुंडागर्दी तो बहुत दूर की चीज है. ऐसा नहीं कि ये मरे और बेजान लोग हैं. इसके विपरीत सच्चाई यह है कि यहां के सारे छात्र–छात्राएं ग़ज़ब के उत्साह और ऊर्जा से भरे वे लोग हैं, जो हमेशा कोई नया और नायाब करने की धुन में लगे रहते हैं. पूरे कैंपस में बिजली का प्रवाह सा सतत विद्यमान रहता है. आप यहां रात के तीन बजे आ जाइए, किसी हॉस्टल में निकल जाइए और किसी छात्र के कमरे में जाकर देखिए तो आप पाएंगे कि वहां जमघट सा लगा हुआ है तथा चर्चाएं चल रही हैं. या तो अगली तारीख़ की क्लास के लिए कोई प्रोजेक्ट बन रहा होगा या फिर कोई असाइनमेंट तैयार किया जा रहा होगा अथवा किसी गंभीर अकादमिक विषय पर वाद–विवाद छिड़ा होगा, जिसके मध्य दुनिया भर के गंभीर विचारकों एवं तत्वमर्मज्ञों की बातें प्रस्तुत की जा रही होंगी. लेकिन, इसे देखकर ऐसा समझने की भूल बिल्कुल भी नहीं की जानी चाहिए कि ये लड़के–लड़कियां समय से पहले ही बूढ़े हो गए हैं अथवा इनके जीवन में काम के सिवाय कोई और रस है ही नहीं. सच्चाई ठीक इसके विपरीत है. ये सब भी

आईआईएम लखनऊ के छात्र.

उतनी ही मौज़मस्ती करते हैं, जितनी दूसरे लोग करते होंगे. हंसी–मज़ाक, उठापटक और मस्ती यानी सब कुछ इनके स्वभाव में भी रचा–बसा दिखता है और इनकी हरकतों में भी. लेकिन यह भी सही है कि सारा कुछ क़ायदे और मर्यादाओं की अनकही एवं अलिखित परिधि के अंतर्गत ही होता है. रात और दिन यहां के लड़के एवं लड़कियां एक साथ घूमते या बैठे दिखाई देते हैं, लेकिन मजाल नहीं कि किसी भी स्तर पर अभद्र आचरण की किसी को कोई शिकायत हो.

मैं तो अपने करियर के मध्य में था, जब मुझे यह ख्याल आया कि मैं भी आईआईएम में अध्ययन करूं और यहां से कोई डिग्री हासिल करूं. लेकिन, जिसने भी सुना, उसी ने मुझे यह बात दिल से निकाल देने को कहा. आख़िर अपनी जगह वे लोग भी ठीक ही थे. काफ़ी लंबे समय से पढ़ाई– लिखाई से मेरा जुड़ाव टूटा हुआ सा था. आईआईटी कानपुर से जब मैंने बीटेक किया था तो वह साल था 1989. उसके बाद 1992 से लगभग 17 सालों से भारतीय पुलिस सेवा की नौकरी कर रहा था, जहां आम मान्यता के अनुसार पढ़ाई–लिखाई से बहुत कम ही वास्ता होता है. मतलब होता है तो सिर्फ़ चोरों, बदमाशों और आपराधिक तत्वों से, जिनके मानमर्दन में ही हमारी सारी ऊर्जा लगी रहती है. स्वाभाविक है कि ऐसी स्थितियों में प्रत्येक शुभचिंतक को यही महसूस हो रहा था कि यदि मैं किसी प्रकार से कैट परीक्षा उत्तीर्ण करके आईआईएम चला भी जाऊं तो भी वहां मुझे बड़ी दिक्कत आएगी. पर मैंने भी मन में ठान लिया था कि जीवन के कुछ वर्ष इन मेधावी बच्चों के साथ अवश्य ही गुज़ारूंगा. कैट की परीक्षा दी, इंटरव्यू दिया और चयन होने पर अपनी सेवा से अवकाश लेकर यहां आ गया हूं. लगभग सात महीने से यहां हूं. परिवार भी यहीं साथ रहता है और मुझे यह कहने में कोई हिचक नहीं है कि यहां मैं जो समय बिता रहा हूं, उसे अपने जीवन के सबसे अच्छे समय का हिस्सा मान रहा हूं.

यहां की जो बात मुझे सबसे अच्छी दिखती है, वह है प्रत्येक व्यक्ति की अपने कार्य के प्रति पूर्ण समर्पण की भावना. प्रोफेसर की डेढ़ घंटे की क्लास होगी तो वह दिन भर इस काम के लिए लगा रहेगा. मन में यह भाव ज़रा भी नहीं होगा कि किसी तरह जाकर समय निकाल देना है और कच्चा– पक्का बोलकर चले आना है. उन डेढ़ घंटों में उनकी यह कोशिश होगी कि वे सारी बातें जो वे जानते हैं, अपने छात्रों को बता दें. और, सिर्फ़ बता ही न दें, समझा भी दें. उसे पूरी तरह से आत्मसात करा दें. दूसरी महत्वपूर्ण बात यहां व्यवस्था की पारदर्शिता है. प्रत्येक छात्र को मालूम होगा कि उसके कितने अंक आए और क्यों आए. उन्हें कौन सा ग्रेड आएगा और आएगा तो उसके पीछे कारण क्या है. मैंने इतने समय में लड़कों को गाहे–बगाहे शिकायतें करते अथवा अपना कोई मलाल या गुबार निकालते तो देखा है, लेकिन अब तक यह सुनने को मेरे कान तरस रहे हैं कि कोई यह कहे कि टीचर ने उसे अंक देने में बेईमानी की है. मैं समझता हूं कि यदि यही स्थिति हमारी प्रत्येक राजकीय संस्थाओं में हो जाए और इसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति का इन संस्थाओं के प्रति अक्षुण्ण विश्वास बन जाए तो यह हमारे देश के लिए सबसे बड़ी उपलब्धि होगी.

वर्तमान समय में मैं इन नौजवान और होनहार लोगों के बीच स्वयं को पाकर और इनका हिस्सा बनकर फूला नहीं समाता हूं. लेकिन, इससे भी बढ़कर यह सोचता हूं कि जब ये छात्र–छात्राएं यहां से उत्तीर्ण होकर बाहर निकलते हैं और कहीं कार्य शुरू करते हैं तो इनके कार्य की प्रकृति ऐसी हो, जिससे इनके स्वयं के लाभ एवं करियर के विकास के साथ देश–समाज को भी इनकी क्षमताओं और बुद्धि–ज्ञान का पूरा लाभ मिल सके. तभी तो किसी भी संस्थान की उपयोगिता सच्ची और सिद्ध मानी जाएगी.

***(लेखक भारतीय पुलिस सेवा में हैं)***

feedback@chauthiduniya.com

## मेरी दुनिया.... पाकिस्तानी हल्ला!! ...धीर

आम की खेती करने वाले किसान अपनी बात लेकर दिल्ली स्थित राष्ट्रीय पर्यावरण अपील प्राधिकरण (एनईएए) के पास गए. यहां कोई भी पीड़ित व्यक्ति पर्यावरण के आधार पर उद्योग या किसी परियोजना को लगाने की अनुमति को चुनौती दे सकता है.



# अल्फांजो आम का भविष्य अधर में है

कांची कोहली

अल्फांजो आम किसी परिचय का मोहताज नहीं है. भारतीय खेती में इसकी ख़ास अहमियत मानी जाती है. यह आमदनी का एक बड़ा ज़रिया भी है. दशकों से इसने दुनिया के खाने की थाली में अपनी एक अलग पहचान बनाई है. भारत में अल्फांजो को हापूस के नाम से भी जाना जाता है. और, कई लोग तो इसकी कहानियां सुनकर ही बड़े हुए हैं. लेकिन, यही आम भारतीय आम आदमी के लिए उपलब्ध नहीं हो पाता है. इसकी वजह यह है कि इस आम के निर्यात से काफ़ी अधिक राजस्व मिलता है. इसके कई दूसरे रोचक पहलू भी हैं.

पिछले दो वर्षों में अल्फांजों ने अलग-अलग वजहों से सुर्खियां बनाई हैं. यह सारा मसला उस समय शुरू हुआ, जब जेएसडब्ल्यू एनर्जी (रत्नागिरि) लिमिटेड ने महाराष्ट्र के रत्नागिरि ज़िले के जयगढ़ में 1200 मेगावाट के थर्मल पावर प्रोजेक्ट की स्थापना का प्रस्ताव रखा. इस बात के चलते स्थानीय किसानों, वैज्ञानिकों और उनके समर्थकों में काफ़ी नाराज़गी थी. क़ानूनी और वैचारिक संघर्ष से शुरू हुए इस मुद्दे ने पर्यावरण जगत को हैरान-परेशान कर दिया है. जेएसडब्ल्यूईआरएल की थर्मल पावर जैसी परियोजनाओं को पर्यावरण से संबंधित क़ानूनों से अनुमति लेनी पड़ती है. जिस क़ानून के तहत इन जैसी परियोजनाओं को अनुमति लेनी पड़ती है, उसे एनवायरमेंटल इंपैक्ट एसेसमेंट (ईआईए) नोटिफिकेशन-2006 का नाम दिया गया है. ईआईए की पूरी प्रक्रिया और जन सुनवाई पूरी होने के बाद ही ऐसी परियोजनाओं को अनुमति दी जाती है. इस प्रक्रिया के तहत प्रभावित होने वाले स्थानीय लोगों के साथ चर्चा के बाद ही परियोजना को स्थापित करने के लिए अनुमति देने का प्रावधान है. जब जयगढ़ स्थित इस परियोजना को 2007 में अनुमति मिली, तो गनपतिपुले के एक किसान ने दिल्ली में वकीलों और महाराष्ट्र में वैज्ञानिकों की मदद से इसे चुनौती दी. ऐसी कई वजहें थीं, जो बालाचंद्र भिखाजी नलवड़े को उनके समर्थकों के साथ एक मंच पर ले आईं. इनमें एक वजह यह भी थी कि थर्मल पावर परियोजना को लगाने से अल्फांजो आम की पैदावार पर नकारात्मक असर पड़ेगा. और, परियोजना के अधिकारियों ने इस संदर्भ में अपना आकलन सही तरीक़े से पेश नहीं किया.

आम की खेती करने वाले किसान अपनी बात लेकर दिल्ली स्थित राष्ट्रीय पर्यावरण अपील प्राधिकरण (एनईएए) के पास गए. यहां कोई भी पीड़ित व्यक्ति पर्यावरण के आधार पर उद्योग या किसी परियोजना को लगाने की अनुमति को चुनौती दे सकता है. अन्य मुद्दों के साथ-साथ किसानों ने इस बात की ओर भी ध्यान दिलाया कि परियोजना अधिकारियों ने अपने आकलन में इस बात को पूरी तरह नज़रअंदाज़ कर दिया कि जयगढ़ क्रीक इस परियोजना के 10 किलोमीटर के रेडियस के अंतर्गत ही आता है. साथ ही, इस थर्मल पावर परियोजना के 4.5 किमी के दायरे में ही वनस्पति और जल क्षेत्र हैं. एनईएए ने उनकी अपील नहीं सुनी और 4500 करोड़ रुपये की परियोजना के लिए मंजूरी दे दी. और, इसका निर्माण कार्य 2008 के सितंबर से ही चल रहा है. एनईएए के एक सदस्य ने इस फ़ैसले के संदर्भ में क़ानून और पर्यावरण के बारे में अपनी राय भी रखी. उन्होंने नलवड़े की अपील को ख़ारिज़ करते हुए कहा कि महाराष्ट्र में बिजली की मांग और आपूर्ति के अंतर को पाटने के लिए इस परियोजना को मंजूरी दी गई है. इसीलिए थर्मल पावर संयंत्र का निर्माण न केवल आवश्यक है, बल्कि ज़रूरी भी है.

लेकिन, इस मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय का कुछ और ही मानना था. 18 सितंबर 2009 को जेएसडब्ल्यूआरईएल को उस वक़्त ज़बरदस्त झटका लगा, जब दिल्ली उच्च न्यायालय के तीन जजों की खंडपीठ ने एनईएए के फ़ैसले को पलट दिया. साथ ही खंडपीठ ने पूरे मामले को उस विशेषज्ञ समीक्षा समिति (ईएसी) के पास भेज दिया, जिसने पहली बार में संयंत्र लगाने की अनुमति दी थी. दिल्ली उच्च न्यायालय इस पूरे मामले में कैसे शामिल हुआ, यह समझना बेहद आसान है, क्योंकि याचिकाकर्ता एनईएए के फ़ैसले से असंतुष्ट थे और उन्होंने अपनी लड़ाई को आगे ले जाने का फ़ैसला किया. यह काफ़ी उपयोगी साबित हुआ. दिल्ली उच्च न्यायालय ने बेहद मज़बूत क़ानूनी और न्यायिक आधार पर एनईएए के फ़ैसले को रद्द किया. उसके बाद न्यायालय ने पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के तहत आने वाले ईएसी से पूरे मसले को फिर से देखने को कहा. थर्मल पावर संयंत्र लगाने के लिए फ़ैसला लेने की प्रक्रिया में हुई लापरवाही उच्च न्यायालय के लिए अहम साबित हुई. न्यायालय ने यह सवाल पूछा कि जेएसडब्ल्यूआरईएल को अंतिम रूप से अनुमति देने के लिए ईएसी ने ख़ुद अपने दावों का उल्लंघन किया है. जनवरी 2007 में एक मीटिंग के दौरान ईएसी ने निर्णय लिया था कि वह थर्मल पावर संयंत्र को अनुमति देने के पहले कोंकण विद्यापीठ (कृषि विश्वविद्यालय), दापोली (केकेवीडी) के अध्ययन का इंतज़ार करेगी, ताकि संयंत्र लगाने से अल्फांजो आम पर पड़ने वाले प्रभावों का पता लगाया जा सके. इस अध्ययन में कम से कम छह महीने का वक़्त लगता. उन्होंने परियोजना अधिकारियों से 16 अहम विचारों की मांग की, ताकि उस आधार पर संयंत्र लगाने की अनुमति दी जा सके.

हालांकि, ईएसी ने मार्च 2007 में अपने ही फ़ैसले का उल्लंघन किया और परियोजना के लिए अपनी अनुमति दे दी. और, यह शर्त लगा दी कि जब तक केकेवीडी की रिपोर्ट नहीं आ जाती, तब तक सिर्फ़ परियोजना के निर्माण का कार्य ही चलता रहेगा. ज़रा सोचिए, यदि दो साल बाद रिपोर्ट यह ख़ुलासा करे कि निर्माण कार्यों से आम पर अपूर्णनीय क्षति वाला प्रभाव पड़ा है, तो क्या होगा? ऐसे में पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का आकलन महज़ मजाक नहीं होगा? क्या जेएसडब्ल्यूआरईएल अपना निर्माण कार्य या ऑपरेशन छोड़ देगा? इससे बढ़कर, क्या पहली नज़र में ही यह बातें ईआईए को ध्यान में नहीं रखनी चाहिए?

यह बेहद दिलचस्प है कि इस मसले पर संज्ञान लेते हुए दिल्ली उच्च न्यायालय ने कहा कि लोगों के लिए प्राकृतिक संसाधन जैसे हवा, पानी, जंगल, वनस्पति आदि का बहुत महत्व है. इसलिए जब प्रकृति के अत्यधिक दोहन से लोगों का हित प्रभावित हो तो इसके निजी स्वामित्व या व्यवसायीकरण के लिए अनुमति नहीं दी जा सकती है. साथ ही, प्रकृति के क़ायदे-क़ानूनों का सम्मान होना चाहिए और लोगों के हित एवं मानवीय ज़रूरतों के लिए इसकी देखभाल होनी चाहिए. प्रकृति की इस समझ के साथ न्यायालय के फ़ैसले का आधार बिल्कुल ही सही था. दुर्भाग्यवश, जो उच्च न्यायालय ने नहीं किया, वह यह कि उसने समस्त ईआईए को पुनर्गठित करने का आदेश नहीं दिया. दरअसल, यही बात जयगढ़ के किसान चाहते थे, ताकि परियोजना एक बार फिर वैज्ञानिक जांच के दायरे में आ जाए. और, इस मामले में ताज़ा स्थिति यह है कि उस समिति के सदस्यों ने 11-12 दिसंबर, 2009 को बैठक की. उन्होंने ईएसी के प्रति जवाबदेह एक उप समिति का गठन किया, जो परियोजना स्थल का मुआयना करेगी.

दिसंबर 2009 की बैठक के दौरान समिति के उपाध्यक्ष सी आर बाबू ने कहा कि थर्मल पावर संयंत्र से उत्सर्जन, वाहनों से होने वाले उत्सर्जन की अपेक्षा कम या ज़्यादा हो सकते हैं. इसीलिए रत्नागिरि में थर्मल पावर संयंत्र के न होने पर भी उप समिति ने अपने पर्यवेक्षण में कुछ अलग बात कही. उन्होंने कहा कि जो आम के बगीचे मुख्य सड़कों के क़रीब हैं, उनकी पैदावार अच्छी होती है, बनिस्बत उन आम बगानों के, जो शहर से दूर हैं. उन्हें लगा कि हानिकारक उत्सर्जन की वजह से ऐसा होता है. वास्तव में समस्या यह है कि केकेवीडी ने अभी तक अपना अध्ययन पूरा नहीं किया है.

फ़िलहाल जयगढ़ संयंत्र क़ानूनी पचड़ों में लटका हुआ है, लेकिन समिति के सदस्यों को यह भी लगता है कि ग़ैर सरकारी संगठनों के प्रतिनिधि और किसान पूर्वाग्रह से ग्रसित एवं प्रेरित हैं. ऐसे में मैं उनसे यह पूछना चाहती हूं कि ऊर्जा ज़रूरतों की आड़ में वे कौन सी हक़ीक़त छिपा रहे थे. एक प्रदूषणकारी ऊर्जा संयंत्र के लगने से क्या प्रभाव पड़ेगा, इस बात के अध्ययन के लिए वे सहमत हो गए तो आख़िर उसके पीछे वजह क्या थी? अथवा जब उन्होंने कोयला आधारित थर्मल पावर के साथ वाहनों के प्रदूषण की तुलना की तो इस आड़ में वे कौन सा खेल खेलना चाहते थे?

*लेखिका ग़ैर सरकारी संस्था कल्पवृक्ष से जुड़ी हैं*

feedback@chauthiduniya.com

# नानक खेती प्रकृति और गुरु के ज़्यादा क़रीब

सरदार हरजंत सिंह

*राम की चिड़ियां, राम का खेत; खा ले चिड़ियां भर-भर पेट.*

मीनाक्षी कपूर

सरदार हरजंत सिंह किसान हैं. वह कहते हैं कि चिड़ियां हों या मेरे खेत, दोनों ही वाहेगुरु के दिए हुए हैं. इसलिए चिड़ियां जितना भी दाना चुगना चाहती हैं, यह उनका अधिकार है. सरदार हरजंत सिंह अपनी इस सोच का अपने खेतों में पूरी तरह से पालन भी करते हैं. पंजाब के फरीदकोट ज़िले के जैतू मंडी के आसपास और भटिंडा ज़िले के कई गांवों के किसानों ने जैविक खेती (ऑर्गेनिक फार्मिंग) को अपना लिया है. उन्होंने खेती के प्राकृतिक तौर-तरीक़ों को अपनाया है. इसमें वे रासायनिक चीजों का इस्तेमाल नहीं करते हैं. खेती के इस तरीक़े को उन्होंने नानक खेती का नाम दिया है.

मेरे बचपन के शुरुआती दिनों की बात है. मैं अपनी दादी मां के पास भटिंडा जाती थी. वहां कई-कई किलोमीटर में फैले खेतों में सुनहरी बालियों वाले गेहूं और पीले-पीले फूलों से लदे सरसों के पौधे लहलहाते थे. ट्यूबवेल से पानी निकाला जाता था. किसान ट्रैक्टर चलाकर खेतों की जुताई करते थे. खेतों के बीचोबीच चिड़ियों को दूर रखने के लिए पुतले भी खड़े दिखाई देते थे. यह वहां का आम नज़ारा था. उस समय मैं खेती को इन सबसे जोड़कर देखती थी. मैं जब कभी भी खेत-खलिहानों की पेंटिंग बनाती हूं तो ये सारी चीजें मेरी उस पेंटिंग का अनिवार्य हिस्सा होती हैं.

ये सारी चीजें उस समय पंजाब और हरियाणा में हुई हरित क्रांति का परिणाम हैं. उच्च उपज क्षमता वाले बीजों की वैरायटी, उर्वरक और कीटनाशक के रूप में रासायनिक पदार्थों के इस्तेमाल ने कृषि के परंपरागत तौर-तरीक़ों को पीछे छोड़ दिया. उन्नत बीजों वाली खेती में पानी की ज़रूरत ज़्यादा होती है, इसलिए समुचित सिंचाई के लिए ट्यूबवेल गाड़े गए. खेती जो वर्षा पर निर्भर थी, बड़ी तेज़ी से सिंचाई पर निर्भर हो गई. रसायनों के बढ़ते इस्तेमाल ने मिट्टी के सूक्ष्मजीवों को नष्ट कर दिया. ये सूक्ष्मजैविक तत्व ही फ़सलों के लिए ज़रूरी पोषक तत्वों की पूर्ति करते थे. रासायनिक खादों के ज़रिए फ़सलों को जो पोषक तत्व उपलब्ध कराए जाते हैं, वे मिट्टी में उपस्थित जैविक तत्वों को नष्ट कर देते हैं. जिन खेतों में अलग-अलग प्रकार की कई फ़सलें उगाई जाती थीं, वहां बस एक फ़सल गेहूं की हो पा रही है. ऐसी स्थिति इन राज्यों के लगभग सभी स्थानों पर है. ठीक वैसा ही, जैसा कि मैं पेंटिंग में इस्तेमाल करती हूं. लेकिन, आज कुछ किसान फिर से खेती के परंपरागत तौर- तरीक़ों की ओर लौट रहे हैं. वे एक फ़सल गेहूं या सरसों को उगाते हैं, लेकिन साथ ही मिश्रित खेती भी करते हैं. मिश्रित खेती या बहु फ़सल में खेती इस तरह से की जाती है, जैसे उगाई गई प्रत्येक फ़सल एक दूसरे की ज़रूरतें पूरी करती हों. अगर सिंचाई की ज़्यादा ज़रूरत वाली धान की खेती की जा रही है तो इसे रागी या बाजरा उगाकर संतुलित किया जा सकता है, क्योंकि इनकी खेती के लिए पानी की ज़रूरत न के बराबर पड़ती है. गाय के गोबर का इस्तेमाल मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के लिए किया जाता है. केंचुए खेतों में कंपोस्ट तैयार करने में मदद करते हैं और औषधीय गुणों वाली नीम और बसिल का इस्तेमाल कीटनाशक के रूप में होता है. चिड़ियों को खेतों से अपना हिस्सा लेने से रोका नहीं जाता है और वे खेतों में लगी फ़सलों से कीड़े-मकोड़ों को खाकर उसे उनसे दूर रखने में मदद करती हैं. न केवल चिड़ियां, बल्कि कई दूसरे प्राणी भी खेतों की ओर लौटने लगे हैं. चाहे वे केंचुए हों, तितलियां हों या मधुमक्खियां. इससे फ़सलें बेहतर होती हैं, उनकी गुणवत्ता बेहतर होती है और मात्रा भी बेहतर होती है. मिट्टी में उपस्थित जैविक तत्वों की बेहतरी की भी कोशिश की जा रही है. जीवामृत जिसे गोमूत्र से तैयार किया जाता है, का इस्तेमाल मिट्टी में जैविक तत्वों की मात्रा बढ़ाने के लिए किया जा रहा है. इससे मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ती है. किसान मिट्टी को नया जीवन देने और उसकी उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ हैं. मिट्टी की नरमी और उसकी सौंधी ख़ुशबू जो कभी उसकी पहचान हुआ करती थी, किसान उसे वापस लाने के लिए बेहद उत्साहित हैं. धरती मां के साथ अपने आध्यात्मिक बंधन को वे फिर से स्थापित करना चाहते हैं. वे समस्त जीवों को एक वृहत्तर परिवार धरती का सदस्य मानते हैं. इसलिए खेतों में जीवन की पुनर्वापसी का एक छोटा संकेत भी उन्हें ख़ुशी और गर्व से भर देता है.

**खेती जो वर्षा पर निर्भर थी, बड़ी तेज़ी से सिंचाई पर निर्भर हो गई. रसायनों के बढ़ते इस्तेमाल ने मिट्टी के सूक्ष्मजीवों को नष्ट कर दिया. ये सूक्ष्मजैविक तत्व ही फ़सलों के लिए ज़रूरी पोषक तत्वों की पूर्ति करते थे. रासायनिक खादों के ज़रिए फ़सलों को जो पोषक तत्व उपलब्ध कराए जाते हैं, वे मिट्टी में उपस्थित जैविक तत्वों को नष्ट कर देते हैं.**

किसान खेती-बाड़ी के अपने इन तौर-तरीक़ों को बड़े गर्व से नानक खेती कहकर पुकारते हैं, क्योंकि वे इसे नानक की शिक्षा से जोड़कर देखते हैं. गुरुनानक देव जी ने समस्त जीवों के प्रति दया और अच्छाई का संदेश दिया था और प्रकृति के साथ तारतम्य बैठाकर रहने की शिक्षा दी थी. गुरुनानक देव जी सरबत दा भला यानी सबकी भलाई की बात कहते थे. किसानों ने खेती-बाड़ी में उनकी इसी भावना को उतारने की कोशिश की है. चाहे वे सूक्ष्म जीवाणु हों या नन्हीं सी चिड़ियां. बात चाहे फ़सल की हो या फ़सल उगाने वाले किसानों की, सबका भला हुआ है. गुरुनानक देव जी ने उपदेश दिए थे, किसानों ने उन उपदेशों को व्यवहारिक रूप देने की भरपूर कोशिश की है. उन्होंने खेती-बाड़ी को आध्यात्मिक रूप दिया है और इसलिए वे इसे आध्यात्मिक खेती भी कहते हैं.

सरदार हरजंत सिंह ख़ुलासा करते हैं कि प्राकृतिक तौर-तरीक़े से खेती करने में ख़र्च कम पड़ता है, जबकि रासायनिक खेती ज़्यादा ख़र्चीली है. नानक खेती को अपनाने के बाद उनके ख़र्च में अप्रत्याशित रूप से भारी कमी आई है. ऐसा बाहरी ज़रूरतें काफ़ी कम होने की वजह से हुआ है. एक एकड़ ज़मीन पर उन्हें सिर्फ़ सौ-दो सौ रुपये का ख़र्च आता है, जबकि रासायनिक खेती करने में यही लागत तीन हज़ार रुपये आती थी. खेतों में गन्ना और काला चना उगाने के लिए उन्हें न के बराबर ख़र्च करना पड़ता है. यह सही है कि इससे फ़सल उत्पादन में थोड़ी कमी आई है, लेकिन उनके मुनाफ़े में कोई बड़ी कमी नहीं हो पाई. वह कहते हैं, गुरुनानक देव जी के क़रीब होने की यह बस छोटी सी क़ीमत है. पंजाब में प्राकृतिक खेती ने किसानों को प्रकृति और गुरुनानक देव जी के क़रीब ला दिया है. इन सब फ़ायदों के अलावा इसका एक फ़ायदा मुझे भी हुआ है. खेतों की मैं जो पेंटिंग बनाती हूं, उसमें प्रकृति के अब ज़्यादा रंग दिखाई देते हैं. मेरी पेंटिंग पहले से कहीं ज़्यादा जीवंत दिखाई देती है और बेहतरीन भी.

*लेखिका पर्यावरण कार्यकर्ता हैं और गैर सरकारी संस्थान से जुड़ी हैं.*

feedback@chauthiduniya.com

यदि लगाए गए आरोप सही साबित होते हैं और तब तक दिनाकरन इस्तीफ़ा नहीं दे देते हैं तो संसद उसके बाद महाभियोग की प्रक्रिया शुरू करेगी.

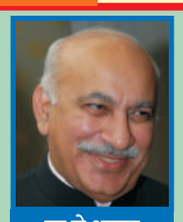

एम जे अकबर

# अपनी धरती को बचाइए

नरक की बदलती परिभाषा में अब दिल्ली भी शामिल हो गई है. धुंध के चलते हवाई अड्डों की जो दुर्गति हुई है, वह भी किसी नरक से कम नहीं है. नरक एक मजबूरी है, जो दिखावटी खिड़की के ज़रिए आती हुई दमनकारी हवाओं से दाखिल होती है और तब यह अभेद्य, घने और धुंधले पर्दे से बंद होती है. जैसा कि आप हवाई जहाज से टैक्सी में जाते हैं तो आपकी उम्मीद एक अवसर में बदल जाती है. आख़िर ग्लोबल वार्मिंग कहां चली गई है?

क्या इसे पूरी तरह उचित माना जाना चाहिए? अथवा यह एक दैविक प्रकोप है, जिसने इस साल पूरी दुनिया को सबसे अधिक ठंड वाले सर्द मौसम का एहसास कराया. वह भी तब, जबकि कोपेनहेगन सम्मेलन में ग्लोबल वार्मिंग के मुद्दे पर पूरी दुनिया की शीर्ष हस्तियों का जमावड़ा देखने को मिला. इस सम्मेलन में एक ऐसा प्रस्ताव पेश किया गया, जिसे किसी भी लिहाज़ से लागू नहीं किया जा सकता है. इसके घोषणापत्र पर चीन से लेकर टोगो या अमेरिका से लेकर टोंगो किसी में भी सहमति नहीं बन पाई. जबकि दुनिया की सभी शीर्ष हस्तियों ने हर लिहाज़ से अपनी बेहतर कोशिश की. हालांकि इस सम्मेलन के शुरू होने से पहले ही नौटंकी शुरू हो चुकी थी. मालदीव ने अपने कैबिनेट की मीटिंग समुद्र के भीतर की, तो नेपाल ने माउंट एवरेस्ट पर.

हमने भी हार नहीं मानी. हमारे तेज़तर्रार पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश ने अपनी कलाबाज़ियों से पूरा मसला ही पलट दिया. लेकिन, वहां मौजूद 192 मुल्कों द्वारा किसी तरह का कोई संकल्प नहीं लिया गया. और, दुनिया के पांच शक्तिशाली देश भी बाक़ी मुल्कों को राज़ी नहीं कर पाए, ताकि सभी किसी एक संकल्प पर सहमत हो सकें. किसी ने भी कार्बन कटौती के प्रति प्रतिबद्धता नहीं जताई. शायद इसे नज़रअंदाज़ किया गया, क्योंकि यह ज़रूरी नहीं था. जब छोटे देशों ने कार्बन कटौती के लिए विकसित देशों से पैसों की मांग की तो वे उन पर धौंस जमाने लगे.

चीन ने इस मसले पर अपनी प्रतिबद्धता जताई, लेकिन उसने भी जर्मनी जैसे देश को यह अनुमति नहीं दी कि वह उसकी कार्बन कटौती पर नज़र रख सके. यह एक मिसाल है, जिसे अपनाने के लिए सभी मजबूर हो जाएंगे. जिन्होंने अपने चिरपरिचित अंदाज़ में थोड़ा भी योगदान दिया, उन्होंने इस मसले पर आगे भी बातचीत की बात कही. और, ज़रा सोचिए, जो सम्मेलन कोपेनहेगन में असफल हो गया, यदि वह दिल्ली में होता तो क्या वह सफल हो जाता. सम्मेलन के असफल होने की वजह कभी नहीं बताई गई, लेकिन अब सारा मसला स्पष्ट नज़र आ रहा है. शक़ की गुंज़ाइश बढ़ती जा रही है कि पर्यावरणविदों ने जानबूझ कर अप्रासंगिक क़ानून बनाए थे.

वक़्त के साथ-साथ हमारे दु:खों का पाखंड कम हो सकता है. बड़बोलापन और शैक्षिक धोखाधड़ी के बीच, हम पिछले कुछ वर्षों से पीआर प्रक्रिया पर नज़र रख सकते थे. इन्हीं दोनों में एक दिल्ली में है, जिसे काफ़ी अनुदानों के ज़रिए पुरस्कृत किया जा रहा है. साथ ही नोबेल शांति पुरस्कारों के साथ उनकी ख़ूब वाहवाही भी होगी. ज़रा यह भी सोचिए कि किसी समूह और अवसरवाद में क्या अंतर है? जब झूठ अपना ढिंढोरा पीटने लगता है तो पहले वाला दूसरे में यानी अवसरवाद में बदल जाता है. और, पूरी दुनिया उसके क्रांतिकारी संगीत पर तालियां बजाने लगती है.

2007 के नोबेल का शांति पुरस्कार संयुक्त तौर पर दिया गया. इनमें एक थे, जलवायु परिवर्तन पर काम करने वाले अल गोर और दूसरी संयुक्त राष्ट्र की संस्था इंटर गवर्नमेंटल पैनल. इसके बाद पूरी दुनिया में भ्रम पैदा किया गया कि हिमालय के ग्लेशियर ख़तरे में हैं और 2035 तक वे विलुप्त हो सकते हैं. यह एक ऐसा विचार है, जिसके आधार पर कोई भी यह अनुमान लगा सकता है कि उस साल कोई भी नहीं बच सकता है. और, इसी बात ने अधिकांश लोगों की बुद्धिमत्ता पर ताला जड़ दिया. इन मायनों में शायद अधिकांश का मतलब 95 फ़ीसदी होता है, क्योंकि प्रभावित तो यही अधिकांश वर्ग होता है. ऐसी नाटकीय बातों को साबित करने के लिए एक सबूत पेश किया गया. जब एक भारतीय ग्लेशियर विशेषज्ञ (एक विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति, अब सिक्किम सरकार के लिए कार्यरत) ने साक्षात्कार दिया तो उसके बाद से उस सबूत के बारे में अब हर कोई जानता है.

टीईआरआई ने दिल्ली की सिफ़ारिश पर उन्हें आरामदायक सेवानिवृत्ति दे दी. और, अब वह अपने नए दायित्व कार्डिनल ग्रीन ऑफ पोप गोर के रूप में ओस्लो (नार्वे की राजधानी) में अपनी उपलब्धि साझा करने गए हैं. उस वैज्ञानिक को पद्मश्री से नवाजा गया. इसमें कोई बुरी बात नहीं है, लेकिन उसे नोबेल पुरस्कार नहीं मिला. एक अमेरिकी अख़बार ने यह लिखा कि उस वैज्ञानिक ने दावा किया है कि उनके वास्तविक साक्षात्कार में उनकी बात को ग़लत ढंग से पेश किया गया है.

अपने हित में आने वाली बातों पर कोई भी सवाल खड़ा नहीं करता है. इसलिए हमें ज़्यादा आश्चर्यचकित होने की ज़रूरत नहीं है. वह भी इस बात से कि इस वैज्ञानिक ने अपनी उस बात पर ध्यान नहीं दिया, जिसे ग़लत ढंग से पेश किया जा रहा है. जबकि उस दौरान नोबेल पुरस्कार दिया जा रहा था. हमें जिस बात का सबसे ज़्यादा दु:ख है, वह यह कि नोबेल समिति ने पुरस्कार देने के लिए ज़्यादा मेहनत नहीं की. उन अविश्वासी लोगों ने नोबेल शांति पुरस्कार के लिए अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा के नाम की सलाह दी. मुमकिन है, नोबेल वालों को शांति पुरस्कार के लिए उम्मीदवार कम पड़ गए हों. शांति कहीं अधिक सापेक्षिक होती है. नोबेल को अपने पुरस्कार का नाम बदलकर पाखंड पुरस्कार रख लेना चाहिए? ब्रांड वैल्यू पुरस्कार? होलि काऊ पुरस्कार?

प्रकृति का घना कोहरा मानवीय प्रकृति की तैलीय धुंध से कभी मुक़ाबला नहीं कर सकता है.

feedback@chauthiduniya.com

# दिनाकरन प्रकरण: न्यायाधीश को बर्ख़ास्त करने की प्रक्रिया

रवि किशोर

सर्वोच्च न्यायालय यह समझ पाने में सक्षम है कि न्यायपालिका की स्वतंत्रता कैसे बहाल हो सकती है. और, उसकी विश्वसनीयता कैसे बरक़रार रखी जा सकती है. वह इस बात को भलीभांति समझ सकता है कि न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए वकीलों में से योग्य लोगों का चुनाव कैसे किया जा सकता है. लंबे समय से यह दुविधा बनी रही कि न्यायपालिका की स्वतंत्रता ख़त्म करने के लिए अकेले कार्यपालिका ही ज़िम्मेदार रही है, लेकिन यह भी तय नहीं हो पाया कि न्यायपालिका को किस बात से ज़्यादा नुक़सान हो रहा है. पिछले दिनों जो कुछ भी हुआ, वह इसी ओर संकेत करता है. हाल में न्यायमूर्ति दिनाकरन, न्यायमूर्ति मुखर्जी एवं न्यायमूर्ति चंद्रमौलि की पदोन्नति पर बड़े विवाद हुए थे. न्यायिक व्यवस्था में अंदर तक घुसा भ्रष्टाचार और न्याय को बाज़ार की चीज बना देना आदि भी न्यायपालिका की स्वतंत्रता के लिए एक गंभीर ख़तरा है.

उच्च न्यायालय में जिन्हें प्रोन्नत किया जाता है, उनकी प्रोन्नति में उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की राय काफ़ी मायने रखती है. सत्तारूढ़ दल प्रोन्नति के लिए वकीलों का चयन किस आधार पर करते हैं, यह भी काफ़ी महत्वपूर्ण है. अब तक यही व्यवस्था थी और अभी भी है. बहुत हद तक यह मामला वैसा लगता है, जैसे यह कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच लेनदेन का कोई मामला हो. न्यायाधीश की पसंद के साथ-साथ सत्तारूढ़ पार्टी के लोग भी प्रोन्नत कर दिए गए. शुरुआत में प्रोन्नति में कहीं कोई पारदर्शिता नज़र नहीं आती थी और न्यायाधीशों को जिस तरह से प्रोन्नत किया गया, उसे किसी भी लिहाज़ से लोकतांत्रिक नहीं कहा जा सकता. जिस तरीक़े से न्यायाधीशों की नियुक्ति की जाती थी, वह ज़रा भी तार्किक नहीं था. बस मुट्ठी भर लोगों के हाथ में सब कुछ था. राष्ट्रपति भारत के मुख्य न्यायाधीश एवं उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश से उच्च न्यायालय में नियुक्ति और सर्वोच्च न्यायालय में पदोन्नति के लिए सलाह करते हैं.

न्यायपालिका में नियुक्तियों में ज़रा भी पारदर्शिता देखने को नहीं मिलती है. सब कुछ छिपा रहता है. लेकिन अगर एक बार नियुक्ति हो गई तो किसी ख़ास उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को पदमुक्त करना असंभव हो जाता है. यहां तक कि अगर सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश स्वयं अपने हाथों से भी पदमुक्त करने के बारे में लिखकर दे दें तो भी नहीं. जैसा कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के मामले में हुआ. दरअसल महाभियोग एक प्रक्रिया है. भारतीय संविधान के अंतर्गत जैसी प्रक्रिया बताई गई है, उसके अंतर्गत उसे हासिल कर पाना असंभव है. इससे ज़्यादा बेअसर उपाय कुछ भी नहीं सोचा जा सकता है. सरकार अवरोध और संतुलन पर आधारित है. इसमें शक्तियों का बंटवारा है और लोगों की संप्रभुता भी है. वैसे न्यायाधीशों, जिन्होंने जनता का विश्वास खो दिया है या फिर जो अहंकार या दुर्व्यवहार पर उतारू हो जाएं, को बाहर का रास्ता दिखाने के लिए महाभियोग एक संवैधानिक तरीक़ा है. अफ़सोस इस बात का है कि इस्तेमाल न होने से यह उपकरण जंग खा गया है. उच्च न्यायिक व्यवस्था से जुड़े लोगों को सेवा से केवल महाभियोग की प्रक्रिया द्वारा ही हटाया जा सकता है. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 124 (4) के तहत महाभियोग की प्रक्रिया का उल्लेख है. इसके अनुसार, न्यायाधीशों पर दुर्व्यवहार साबित होने और अक्षमता के आधार पर ही महाभियोग की प्रक्रिया द्वारा उन्हें हटाया जा सकता है. भारत में ऐसी कोई दूसरी प्रक्रिया नहीं है, जिसके ज़रिए न्यायाधीशों को अवकाश ग्रहण से पहले ही पद से विमुक्त किया जा सके. महाभियोग की संपूर्ण प्रक्रिया अत्यंत कठोर है और जटिल भी. महाभियोग के प्रस्ताव को सदन में उपस्थित और मतदान में शामिल लोगों का दो तिहाई बहुमत हासिल होना चाहिए. आज तक भारत में किसी भी न्यायाधीश को महाभियोग की प्रक्रिया द्वारा पदमुक्त नहीं किया जा सका है. आज भी यह बस काग़ज़ों तक ही सीमित है. दिनाकरन मामले में क्या होता है, यह देखने वाली बात होगी, क्योंकि महाभियोग के लिए पेश प्रस्ताव के प्रति सत्तारूढ़ दल ने सकारात्मक प्रतिक्रिया नहीं दी है.

लेकिन, अब कर्नाटक उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश पी डी दिनाकरन के ख़िलाफ़ महाभियोग की प्रक्रिया शुरू हो सकती है. राज्यसभा के सभापति हामिद अंसारी ने उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश वी एस सिरपुरकर की अध्यक्षता में तीन सदस्यों का पैनल गठित किया है, ताकि वह इस पूरे प्रकरण को देख सकें. भूमि अधिग्रहण के मसले पर राज्यसभा में 75 विपक्षी सदस्यों ने दिनाकरन को हटाने की मांग की थी. आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश ए आर दवे और मशहूर न्यायविद् एवं वरिष्ठ वकील पी आर राव पैनल के शेष दो सदस्य हैं. इस पैनल का गठन जज एक्ट (जांच) के तहत हुआ है. राज्यसभा की अधिसूचना के मुताबिक़, यह पैनल न्यायाधीश पॉल डेनियल दिनाकरन प्रेम कुमार के बारे में उन तथ्यों की जांच करेगा, जिनके आधार पर उन्हें हटाने की मांग की गई है. राज्यसभा के सभापति हामिद अंसारी ने यह बात पहले ही स्वीकार कर ली थी कि दिनाकरन पर महाभियोग चलाने के लिए 75 विपक्षी सांसदों ने उनसे मांग की है. बावजूद इसके एक महीने से भी अधिक समय के बाद पैनल गठित करने की घोषणा की गई. सांसदों ने सभापति को 55 पृष्ठों की नोटिस लिस्ट भेजी है, जिसमें दिनाकरन पर 12 आरोप लगाए गए हैं. पैनल से छह महीने के भीतर इस मसले पर रिपोर्ट पेश करने की बात कही गई है. जांच पैनल अपनी रिपोर्ट राज्यसभा के सामने पेश करेगा. यदि लगाए गए आरोप सही साबित होते हैं और तब तक दिनाकरन इस्तीफ़ा नहीं दे देते हैं तो संसद उसके बाद महाभियोग की प्रक्रिया शुरू करेगी.

यदि समिति कहती है कि महाभियोग की प्रक्रिया शुरू की जानी चाहिए तो उसके बाद इस मसले पर संसद के दोनों सदनों में बहस होगी. महाभियोग का सामना कर रहे न्यायाधीश या उसके प्रतिनिधि को भी अवसर दिया जाएगा, ताकि वह ख़ुद को बेदाग़ साबित कर सके. हालांकि यह सारी प्रक्रिया संसद के एक ही सत्र में पूरी होनी चाहिए. ऐसा न होने से सारी प्रक्रिया फिर से शुरू की जाएगी. यानी महाभियोग की प्रक्रिया का किसी एक सत्र विशेष में पूरा होना ज़रूरी है.

संसद में चर्चा ख़त्म होने और न्यायाधीश का पक्ष सुनने के बाद यदि सदन महाभियोग के मसले पर मतदान कराने का फ़ैसला लेता है तो उसी सत्र में दोनों सदनों में यह प्रस्ताव दो तिहाई बहुमत से पास होना चाहिए. उसके बाद प्रस्ताव को राष्ट्रपति के पास भेजा जाएगा, क्योंकि राष्ट्रपति ही न्यायाधीश को हटाने का आदेश देता है.

*(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वकील हैं)*

feedback@chauthiduniya.com

## भीड़ में अलग

चौथी दुनिया विभिन्न अख़बारों की भीड़ में अपनी अलग पहचान बना पाने में हर लिहाज़ से सफल रहा है. इसमें प्रकाशित सामग्री दूसरों से अलग और बेहतर होती है. ग्रामीण विकास मंत्रालय और केंद्रीय मंत्री जोशी पर केंद्रित आवरण कथा पढ़कर मुझे काफ़ी हैरानी हुई. आप निर्भीक पत्रकारिता की मिसाल हैं.

**सार्थक चौहान**, अलकापुरी, पटना, बिहार.

## असहमत हूं

चौथी दुनिया के 4-10 जनवरी के अंक में मंज़ूर आलम का लेख बीते साल से ख़ुश होने की वजह पढ़ा. लेखक ने क्षेत्रीय दलों द्वारा शासित विभिन्न प्रदेशों के साथ बिहार में अल्पसंख्यकों को सुरक्षा प्रदान करने की जहां सराहना की है, वहीं शिक्षा और रोज़गार मुहैया कराने में इन क्षेत्रीय पार्टियों की विफलता को रेखांकित किया है. मैं उनकी बात से सहमत नहीं हूं. बिहार में मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने अल्पसंख्यकों को शिक्षित करने और रोज़गार उपलब्ध कराने के लिए अनेक योजनाएं शुरू की हैं. अल्पसंख्यकों को इसका लाभ भी मिल रहा है.

**नागेश्वर महासेठ**, बाकरगंज, दरभंगा, बिहार.

## कब जागेगी सरकार

25-31 जनवरी की कवर स्टोरी-स्माइल इंडिया 2015 पढ़ी. यह जानकर ताज्जुब होता है कि इस देश पर इतना बड़ा ख़तरा मंडरा रहा है और हमारी सरकार सो रही है. अगर ऐसा चलता रहा तो विदेशी शक्तियां अपने मंसूबों में ज़रूर सफल हो जाएंगी.

**संजीव झा,** समस्तीपुर, बिहार.

## नरेगा का उद्देश्य

केंद्र सरकार की बहुउद्देशीय योजना नरेगा से जुड़े भ्रष्टाचार के बारे में पता तो था, लेकिन हाल में आपके अख़बार के विभिन्न अंकों में प्रकाशित कई आलेखों ने इस ओर व्यापक रूप से रोशनी डाली. किराए पर जॉब कार्ड और कमीशनख़ोरी के चलते इस योजना को किस स्तर पर नुकसान हो रहा है, यह आसानी से समझा जा सकता है. सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिए. ग़रीबों-मज़दूरों के हक़ों पर आख़िर कब तक डाका पड़ता रहेगा?

**रामानुज मिश्रा**, किदवई नगर, कानपुर, उत्तर प्रदेश.

## ज्ञानवर्द्धक आलेख

केजीबी जैसी ख़ुफ़िया एजेंसियों के बारे में आम तौर पर कहीं पढ़ने को नहीं मिलता, लेकिन चौथी दुनिया के माध्यम से बहुत कुछ पढ़ और जान रहा हूं. काफ़ी ज्ञानवर्द्धक सीरीज है. उम्मीद है कि आगे भविष्य में चीन और पाकिस्तान की ख़ुफ़िया एजेंसियों के बारे में भी पढ़ने को मिलेगा.

**संदीप अरोड़ा,** विकासपुरी, दिल्ली.

## एकतरफा विचार

बिमल राय के आलेख-पत्नियां इतनी बुरी होती हैं, पढ़कर लगा कि क्या सचमुच ऐसा होता है? कई जगह लगा कि लेखक एकतरफा सोच रहे हैं. हालांकि आंकड़ों का सहारा लिया गया है, फिर भी पुरुषवादियों की मांगें हास्यास्पद लगीं.

**रवींद्र कुमार,** सतना, मध्य प्रदेश.

## अख़बार उपलब्ध कराएं

चौथी दुनिया हिंदी साप्ताहिक हमारे मुरादाबाद ज़िले में नियमित रूप से नहीं मिल पाता है. इससे काफ़ी निराशा होती है. आशा है कि आप इस ओर अवश्य ध्यान देंगे.

**योगेंद्र वर्मा व्योम,** मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश.

## नीतीश के नवरत्न

बिहार-झारखंड परिशिष्ट में प्रकाशित स्टोरी नीतीश के नवरत्न पढ़ी. अच्छी लगी. बिहार सरकार की नीति बनाने में इनकी अहम भूमिका होती है. इतना ही नहीं, नीति बनाने से पहले नीतीश ख़ुद इनसे सलाह-मशविरा करते हैं, ताकि योजनाएं ज़मीनी स्तर पर सफल हों और उनका लाभ हर तबके के लोग उठा सकें. मैं सिर्फ़ इतना कहना चाहती हूं कि वही योजना सफल होती है, जिसे बनाने से पहले व्यापक विचार-विमर्श होता है. सच तो यह है कि नीतीश सरकार भी इन्हीं लोगों के कंधे पर टिकी है.

**कल्पना कुमारी**, नरार पूर्वी, मधुबनी, बिहार.

## अंधविश्वास की गिरफ़्त में समाज

डायन के नाम पर मौत का तांडव पढ़ा. यह विश्वास नहीं होता है कि आज भी ऐसे लोग हैं, जो अंधविश्वास और रूढ़िवादिता की गिरफ़्त में जकड़े हुए हैं. समाज आज भी इन विकृतियों से उबर नहीं पाया है. सबसे बड़ी बात यह है कि झारखंड में इस तरह की घटनाओं में लगातार इज़ाफ़ा हो रहा है. जबकि वहां डायन प्रथा प्रतिरोध अधिनियम लागू है. फिर भी पुलिस हाथ पर हाथ धरे बैठी है और गुनहगार खुलेआम घूम रहे हैं.

**शिवम कुमार झा,** चंपा, मधुबनी, बिहार

## समीक्षा भी दें

आपके साप्ताहिक अख़बार चौथी दुनिया का मैं नियमित पाठक हूं. सभी महत्वपूर्ण जानकारियों से संपूर्ण पन्नों के साथ जगमग दुनिया पृष्ठ भी मुझे भाता है. एक ईमानदार पाठक की हैसियत से यह मांग रख रहा हूं कि जगमग दुनिया पन्ने पर फ़िल्म की प्रीव्यू के साथ समीक्षा देने का भी कष्ट करें. उम्मीद करता हूं कि आगे भी इस पृष्ठ पर इसी तरह की सामग्री पढ़ने को मिलेगी.

**आनंद कुमार,** भागलपुर, बिहार

पाठक अपने विचार और सुझाव हमें इस पते पर भेज सकते हैं-
संपादक, चौथी दुनिया, एफ-2, सेक्टर - 11
नोएडा (उत्तर प्रदेश) पिन-201301
ई-मेल पता : feedback@chauthiduniya.com

## जब तोप मुक़ाबिल हो

संतोष भारतीय

# महंगाई वाटरलू का मैदान बन सकती है

कांग्रेस इस भ्रम में है कि महंगाई तो पिछले कई सालों से बढ़ रही है, पर फिर भी उसे लोग वोट दे रहे हैं. शायद इसीलिए कांग्रेस ने महंगाई को बेलगाम बढ़ने की छूट दे दी है. कांग्रेस के नेतृत्व वाली सरकार का कोई क़दम महंगाई रोकने का संकेत नहीं दे रहा है, उल्टे कृषि मंत्री शरद पवार महंगाई बढ़ाने वाले बयान कुछ इस अंदाज़ में दे रहे हैं कि आम लोग खाएं या नहीं, बस जमाख़ोरों की चांदी होती रहे. शरद पवार क्यों ऐसा कर रहे हैं, इसे मनमोहन सिंह ही अच्छी तरह बता सकते हैं.

कांग्रेस और शरद पवार के कारनामों की वजह से देश खाद्य दंगों की ओर बढ़ रहा है. दाल, गेहूं, चावल, चना, जौ, मक्का, चीनी और मसालों के भाव देश के चालीस प्रतिशत लोगों की जेब की हैसियत से बाहर चले गए हैं. चालीस रुपये किलो चीनी कृषि मंत्री के एक बयान से पचास रुपये किलो हो जाती है. बाद में जब वह दो रुपये सस्ती होती है तो कृषि मंत्री कहते हैं कि चीनी सस्ती हो गई. अब दूध के भाव बढ़ाने का इशारा कृषि मंत्री दे रहे हैं और उकसा रहे हैं कि दूध उत्पादन में लगी बड़ी कंपनियां भाव बढ़ा दें.

मनमोहन सिंह और सोनिया गांधी अपने जीवन की बड़ी ग़लतियों में से एक ग़लती यह कर रहे हैं कि वे भाव बढ़ने और जमाख़ोरी रोकने की कोई योजना नहीं बना रहे हैं. वे भूल गए हैं कि लोगों ने उनके सिर्फ़ दो सौ छह सांसदों को जिताया है और उन्हें सरकार बनाने के लिए दूसरे दलों की मदद लेनी पड़ी है. भारतीय जनता पार्टी के जनता को आकर्षित न कर पाने वाले वायदे कांग्रेस की जीत का कारण बने और आडवाणी जी की प्रधानमंत्री बनने की अदम्य लालसा ने इस पर मोहर लगा दी. पर इससे अगर मनमोहन सिंह सोचते हैं कि वह जनता के गुस्से से बच जाएंगे या जनता गुस्सा ही नहीं करेगी तो यह उनकी बड़ी ग़लतफ़हमी होगी.

राहुल गांधी को कांग्रेस अगले प्रधानमंत्री के रूप में तैयार कर रही है. ज़ाहिर है, अगले चुनाव तक प्रणव मुखर्जी सहित सभी वरिष्ठ अर्जुन सिंह की गति को प्राप्त हो जाएंगे तो अकेला नाम राहुल गांधी का ही बचेगा. राहुल गांधी मध्य प्रदेश में कहते हैं कि उन्होंने प्रधानमंत्री से पूछा कि महंगाई कब घटेगी तो प्रधानमंत्री ने कहा कि जल्दी ही, या कुछ दिनों में घट जाएगी. राहुल गांधी को भी इस समस्या का सामना करना होगा और समझना होगा कि महंगाई का अर्थशास्त्र जमाख़ोरों द्वारा राजनीतिज्ञों को दिए जाने वाले मोटे पैसे से या स्वयं राजनीतिज्ञों द्वारा छोटा मुनाफ़ा कमाने के लालच में जमाख़ोरों को बड़ा मुनाफ़ा कमाने की छूट देने के साथ जुड़ा है. राहुल गांधी कह रहे हैं कि कांग्रेस सहित किसी भी दल में लोकतंत्र नहीं है तो वह सही कह रहे हैं, पर क्यों वह महंगाई जैसी सबको छूने वाली समस्या पर पार्टी फोरम पर बहस चलाने के लिए सांसदों या पार्टी नेताओं को बढ़ावा नहीं देते?


**राहुल गांधी को कांग्रेस अगले प्रधानमंत्री के रूप में तैयार कर रही है. ज़ाहिर है, अगले चुनाव तक प्रणव मुखर्जी सहित सभी वरिष्ठ अर्जुन सिंह की गति को प्राप्त हो जाएंगे तो अकेला नाम राहुल गांधी का ही बचेगा. राहुल गांधी मध्य प्रदेश में कहते हैं कि उन्होंने प्रधानमंत्री से पूछा कि महंगाई कब घटेगी तो प्रधानमंत्री ने कहा कि जल्दी ही, या कुछ दिनों में घट जाएगी.**


अब समय आ गया है कि समस्या को समझने का दिखावा या उसे हल करने का आश्वासन देने की जगह समस्या को हल करने के लिए क़दम उठाए जाएं. अगर क़दम नहीं उठते तो कई लोगों या कई दलों की राजनीति पर लोग सवाल खड़ा कर देंगे. इस देश में नदियां हैं, नदियों के किनारे ज़मीन है, वहां स्कूल–कॉलेज हैं. क्यों नहीं सरकार इन स्कूल–कॉलेजों के साथ दूध उत्पादन के केंद्र जैसे डेयरी आदि शुरू करती. इन्हीं स्कूल–कॉलेजों के साथ दूध को विभिन्न तरह से प्रोसेस करने के साथ उससे जुड़े विभिन्न उत्पाद बनाए जा सकते हैं. इन स्कूल–कॉलेजों से निकलने वाले छात्र दूध पर आधारित अपना व्यवसाय शुरू कर सकते हैं. जबकि हम सब जानते हैं कि दुग्ध उत्पाद हम बाहर से मंगाते हैं, क्योंकि हमारे यहां दूध जितना उत्पादित होता है, अपने मूल रूप में ही खप जाता है. सरकार अगर नहीं ध्यान दे सकती तो क्यों अमूल जैसी संस्थाओं को उत्तर भारत के राज्यों में इस तरह का काम करने के लिए प्रोत्साहित नहीं करती?

दरअसल हमारी सरकार के पास कोई योजना ही नहीं है. बेरोज़गारी और महंगाई से लड़ने की योजना एक दूसरे से जुड़ी होनी चाहिए. ज़िंदगी के दो ऐसे छोर हैं, जहां हमारे देश के दो लोग खड़े हैं, एक हैं मनमोहन सिंह और दूसरे हैं राहुल गांधी. मनमोहन सिंह को जो पाना था, वह पा चुके, अब उन्हें सचमुच देश के लिए कुछ ठोस या बुनियादी करना चाहिए तथा दूसरे छोर पर खड़े राहुल गांधी को इन सारे अंतर्विरोधों को समझ कर देश को बदलने का नक़्शा बनाना चाहिए.

हम जिस देश में हैं, वहां सौ से ज़्यादा ज़िले ऐसे हैं, जिनमें पुलिस भी मुक्त रूप से नहीं घूमती. कारण केवल एक है कि वहां की जनता समस्याओं से परेशान होकर लोकतांत्रिक व्यवस्था से अपनी आस्था खोती जा रही है. यह आस्था तभी पुनः बहाल होगी, जब उसके दर्द को शासन चलाने वाले समझेंगे. इसका पहला क़दम महंगाई को रोकना है और देश के विकास व बेरोज़गारी से इसे जोड़कर कोई ठोस रास्ता तलाशना है. मनमोहन सिंह और राहुल गांधी से यही कहना है कि शरद पवार जैसे लोगों को समझाएं कि जनता महत्वपूर्ण है, जमाख़ोर नहीं और ख़ुद दोनों तत्काल पहल करें कि भाव वहां पहुंचें, जहां आम आदमी की जेब है. महंगाई को वाटरलू का मैदान मत बनने दीजिए मनमोहन सिंह जी.

संपादक
editor.chauthiduniya.com

# नक्सलवाद के विरुद्ध अहिंसा ही एकमात्र अस्त्र

पी. वी. राजगोपाल

आज जो हो रहा है, उससे मुझे घबराहट होती है. अहिंसात्मक आंदोलन का प्रयोग करने के पहले ही लोग मन बना लेते हैं कि अहिंसा से कुछ होने वाला नहीं है, इसलिए हिंसात्मक आंदोलन शुरू करो. अनुभव से लोगों ने सीखा है कि सिर्फ़ हिंसा के सामने सरकारें झुकती हैं. नक्सली समस्या पर काफ़ी लिखा जा चुका है. पक्ष–विपक्ष में लिखा जा रहा है. ऐसा लगता है कि इस देश के लोग इस मुद्दे को लेकर दो भागों में बंट चुके हैं. एक समूह की मान्यता है कि देश में ग़रीबों के सामने काफ़ी परेशानियां हैं, इसलिए उन्होंने बंदूक़ उठा ली है तो ठीक ही किया है. दूसरे पक्ष की मान्यता है कि समस्या कितनी भी गंभीर हो, बंदूक़ उठाने का अधिकार आम जनता को नहीं है और सिर्फ़ सरकार ही बंदूक़ उठा सकती है. मैं बार–बार इस कोशिश में लगा हूं कि इस खेल में जो तीसरा पक्ष है, उसकी ओर सबका ध्यान आकर्षित कर सकूं. तीसरा पक्ष यह है कि आम जनता के सामने समस्याएं हों, वह उनके समाधान के लिए अहिंसात्मक तरीक़े से आंदोलन कर सके और उस आंदोलन से बात करने के लिए सरकारें तैयार हों. दूसरी तरफ़ सरकारें निरंतर अपने व्यवहार से यह साबित कर रही हैं कि उनके पास हिंसात्मक आंदोलनों से बात करने के लिए समय नहीं है. इसमें जो विरोधाभास है, उसे समझने की ज़रूरत है. एक तरफ़ अहिंसा का प्रयोग किए बिना ही हमने अहिंसा को नकार दिया. जबकि सशक्त अहिंसात्मक प्रयोग के सामने सरकारें झुकती हैं. दूसरी तरफ़ हिंसा का विरोध करने वाली सरकारें सिर्फ़ हिंसा के सामने झुकती हैं और अहिंसात्मक आंदोलन को नकारती हैं. हम सबने देखा है कि कुछ दिन पहले किसानों ने डंडे के बल पर सरकार से गन्ने की क़ीमत किस प्रकार बढ़वाई थी.

इसलिए, मैं न नक्सलियों के पक्ष में हूं और न सरकार के पक्ष में. मुझे लगता है कि दोनों मिलकर इस देश और आम जनता को नुक़सान पहुंचा रहे हैं. आख़िर जिन लोगों को बचाने के लिए बंदूक़ उठाई जा रही है, उसी बंदूक से आम ग़रीब लोग ही मारे जा रहे हैं. आदिवासियों के साथ–साथ जो नक्सली एवं पुलिस कर्मचारी मारे जा रहे हैं, वे भी कोई बड़े घर के नहीं हैं. आम लोगों को इस खेल में लगाकर बड़े–बड़े लोग मौजमस्ती कर रहे हैं और देश के संसाधनों को लूट रहे हैं. इतने वर्षों में नक्सली आंदोलनों ने किसी बड़ी फैक्ट्री को उड़ा दिया हो, ऐसी कोई बात नहीं है. कोई बड़ा उद्योगपति भी उनके निशाने पर नहीं है. सिपाहियों को मारकर, रेलगाड़ियों को पटरियों से उतार कर हम क्रांतिकारी होने का सपना तो पाल सकते हैं, लेकिन इससे कोई मौलिक परिवर्तन होने वाला नहीं है. इसी प्रकार कुछ आदिवासियों को मारकर खुद को नक्सली उन्मूलन की शाबाशी दी जा सकती है, पर सरकारें यह भूल जाती हैं कि ग़रीब के ख़ून की हर बूंद से नए नक्सली पैदा होते हैं. सच बात यह है कि छोटे हथियार बेचने वाली कंपनियों ने भारत को अपना बाज़ार बना लिया है. वे बहुत तेज़ी से नक्सलियों, आतंकवादियों और सरकारों को हथियार बेच रही हैं. अपना व्यापार बढ़ाने के लिए वे दिल खोलकर सबके सहयोग के लिए लगी हुई हैं. पूंजीपतियों के विरोध में हथियार उठाने वाले नक्सली वही हथियार ख़रीद रहे हैं, जो पूंजीपति देशों की कंपनियों द्वारा बनाए जाते हैं. सरकारें भी उन्हीं लोगों का हिस्सा बन चुकी हैं, जो खुले और छिपे तौर

पर इस व्यापार में लगे हुए हैं. यही कंपनियां युद्ध के लिए भारत और पाकिस्तान को हथियार बेचती हैं. एक तरफ़ वे तमिल नेता प्रभाकर को हथियार देती हैं तो दूसरी तरफ़ श्रीलंका सरकार को भी. हम सब जानते हैं कि हथियार का व्यापार कई अरब रुपयों का है.

मुझे इस बात पर शंका है कि उत्खनन में लगी तमाम कंपनियां एक तरफ़ नक्सलियों को बड़ी रक़म देती हैं तो दूसरी तरफ़ नेताओं को भी. तभी तो वे ग़ैर क़ानूनी तरीक़े से आदिवासियों के घर एवं गांव उजाड़ कर खनन कर रही हैं. एक मधु कोड़ा या जनार्दन रेड्डी की कहानी कभी–कभी उजागर हो जाती है, लेकिन जिनके पास अपार धन है और जो व्यवस्था को ख़रीद सकते हैं, उनकी कहानियां अब भी छिपी हुई हैं. अगर समय हो तो आप कालाहांडी, रायगढ़ या सुंदरगढ़ का भ्रमण कर लीजिए तो आपको मालूम हो जाएगा कि इस देश में कितनी खदानें ग़ैर क़ानूनी ढंग से चल रही हैं. सरकारी कर्मचारी, नेता और उद्योगपति जब एक हों, तो फिर उन्हें चुनौती कौन दे सकता है. इतनी बड़ी लूट में कुछ धन नेताओं और कुछ धन नक्सलियों को देने से उद्योगपतियों को कोई घाटा नहीं है.

हथियारों की इस बढ़ी होड़ में नेताओं का कोई नुक़सान नहीं है. चूंकि वे स्वयं भी अपनी सुरक्षा में हथियारबंद लोगों को नियुक्त कर रहे हैं. वीआईपी सुरक्षा के नाम पर जो कार्यक्रम सरकार ने चला रखा है, उसका भी लाभ हथियार बेचने वाली कंपनियों को मिलता है. समाज में जितना भय फैलेगा, उतनी ही सुरक्षा की भी ज़रूरत होगी और उसी तादाद में हथियारों की बिक्री होगी. पुरानी कहावत है, पांचों उंगली घी में. जो अब भारत में हो रहा है, उसका फ़ायदा आम ग़रीब लोगों को छोड़कर बाक़ी सबको हो रहा है. जबकि सरकार आम जनता की ताक़त से बनती है.

अहिंसात्मक और प्रजातांत्रिक मूल्यों पर विश्वास रखने वाले तमाम संगठनों की आजकल एक प्रचलित भाषा है कि जो सरकार के साथ नहीं हैं, वे सब नक्सली समर्थक हैं. नक्सली समर्थक क़रार देकर सरकार किसी को भी बदनाम कर सकती है, प्रताड़ित कर सकती है और जेल में डाल सकती है. इस प्रक्रिया का एक ही मतलब है कि जो भी चल रहा है, उस पर कोई सवाल न करे. सवाल करने वाले लोगों की आवाज़ बंद की जाए, अहिंसात्मक और प्रजातांत्रिक आंदोलनों को कुचल दिया जाए, ताकि हिंसा बढ़े, हथियार बेचने वालों का धंधा बढ़े और ग़रीबों को मारकर बचे हुए लोग मालामाल हो सकें. इस ज़बरदस्त साज़िश को समझने की ज़रूरत है. जो लोग इस खेल को समझते हैं, वे पक्ष– विपक्ष के खेल में न उलझ कर इस संपूर्ण साज़िश को समझें और समझाएं. साथ ही इसका खुलकर विरोध भी करें. आम जनता को दुःख–तक़लीफ़ में डालकर देश के तमाम संसाधन लूटने और आम आदमी की आवाज़ दबाने के लिए जो रणनीति बनाई गई है, उसे समाप्त करने के लिए हम सबको एकजुट होना है, अन्यथा हमारी चुप्पी ऐतिहासिक ग़लती होगी.

*(लेखक एकता परिषद जनसंगठन के राष्ट्रीय अध्यक्ष हैं)*

feedback@chauthiduniya.com

तमिलनाडु में ऐसे 90 स्कूल हैं, जिनके तक़रीबन 3000 बच्चे इस प्रोजेक्ट में शामिल हैं. प्रोजेक्ट चीफ़ पेरूमल सामिनाथन का कहना है कि इस संसद के बच्चों की उम्र 10 से 17 वर्ष के बीच है.



## ख़ुफ़िया एजेंसियों के सीक्रेट

# केजीबी का मिशन और कैंब्रिज फाइव

यह कहानी उस शख्स की है, जिसका जन्म तो भारत में हुआ, लेकिन वह एक ब्रिटिश आर्मी अफ़सर का बेटा था, यानी ब्रिटिश नागरिक. पर पूरी ज़िंदगी उसने एक ऐसी ख़ुफ़िया एजेंसी के लिए काम किया, जो ख़ौफ़ और क़हर का दूसरा नाम है. केजीबी के लिए.

वर्ष 1949. इस वर्ष उसे वाशिंगटन में ब्रिटिश एंबेसी का सचिव बनाकर भेजा गया. वहां उसने अमेरिकी ख़ुफ़िया एजेंसी सीआईए और ब्रिटिश एंबेसी के बीच अहम कड़ी का काम किया. कुछ दिनों तक काम करने के बाद उसने दोनों के बीच अपनी अच्छी–ख़ासी पैठ बना ली. यहां तक कि वह अब कहीं भी आ–जा सकता था. अमेरिका के संवेदनशील ठिकानों तक उसकी पहुंच हो चुकी थी. इसी दौरान ब्रिटिश सरकार को एक बेहद ही चौंकाने वाली ख़बर मिली. वह ख़बर थी ब्रिटिश एंबेसी के ज़रिए सोवियत संघ को कुछ बेहद ख़ुफ़िया जानकारी पहुंचाने के बारे में. दरअसल, ब्रिटिश सरकार को यह जानकारी दी गई कि 1944 और 45 में किसी ने सोवियत संघ को ख़ुफ़िया जानकारी मुहैया कराई है. ख़ुफ़िया जानकारी लीक करने वाले का कोड नाम का पता चल चुका था. होमर, जी हां यही नाम था उसका, जिसने सोवियत संघ तक अहम जानकारियां पहुंचाई थीं. वाशिंगटन में ब्रिटिश एंबेसी का सचिव बनकर आए जासूस को 1950 में यह ज़िम्मा दिया गया कि वह पता लगाए कि होमर कोड नाम से ब्रिटिश एंबेसी में घुसपैठ करने वाला जासूस आख़िर कौन था? कुछ दिनों तक मामला काफ़ी उलझा रहा. जांच चलती रही. लेकिन एक शख्स था, जो शुरू से ही सारा क़िस्सा जानता था. वह जानता था कि किसने ब्रिटिश एंबेसी में घुसपैठ कर ख़ुफ़िया जानकारियां लीक करने की जुर्रत की है. जी हां, यह वही शख्स है, जो ब्रिटिश एंबेसी में सचिव बनकर आया था. होमर के बारे में सारा कच्चा चिट्ठा उसे मालूम था. होमर के कोड नाम से घुसपैठ करने वाला कोई नहीं, बल्कि उस एंबेसी का दूसरा सचिव था. डोनल्ड मैक्लीन, यही नाम था उसका. और, डोनल्ड कोई और नहीं, बल्कि उसका पुराना कॉलेज मित्र था. यही वजह है कि उसने ब्रिटिश अधिकारियों को डोनल्ड के बारे में कुछ भी नहीं बताया. लेकिन उसके न बताने से भी यह राज़ कब तक छुपा रहने वाला था? ब्रिटिश अधिकारियों को इसका पता चल ही गया. नतीजतन सबसे पहले उसे हिरासत में लिया गया. उसके बाद अपने साथी और ब्रिटेन के ख़िलाफ़ जासूसी करने वाले की पहचान छिपाने वाले उस सचिव को भी ब्रिटिश ख़ुफ़िया एजेंसी से इस्तीफ़ा देने को कहा गया. बात यहीं नहीं रुकी. इसके अगले कुछ वर्षों तक उस सचिव को संगीनों के साये में तो नहीं, लेकिन ब्रिटिश ख़ुफ़िया एजेंसी की नज़रबंदी में रहना पड़ा. उसकी हर गतिविधि पर पैनी नज़र रखी जाती थी, लेकिन इससे भी ब्रिटिश अधिकारियों को सफलता नहीं मिल पा रही थी. दरअसल उन्हें यक़ीन था कि एंबेसी से गुप्त जानकारियां तीन लोगों ने मिलकर लीक की हैं. डोनल्ड मैक्लीन सहित दो लोगों को तो ब्रिटिश अधिकारी अपने शिकंजे में ले चुके थे, लेकिन तीसरा अभी भी उनकी पकड़ से बाहर था. हर किसी का शक़ उस सचिव पर जा रहा था, लेकिन उसने ब्रिटिश संसद हाउस ऑफ कॉमन्स में विदेश सचिव के सामने ख़ुद को तीसरा शख्स होने से साफ़–साफ़ मना कर दिया. बाद में उसे हर आरोप से आज़ाद कर दिया गया. और, बेरूत में उसे एक अख़बार के संवाददाता के तौर पर भेजा गया, ताकि वहां वह ब्रिटिश एजेंसी के लिए काम कर सके.

### सोवियत संघ का ख़ुफ़िया आतंक

डोनल्ड मैक्लीन

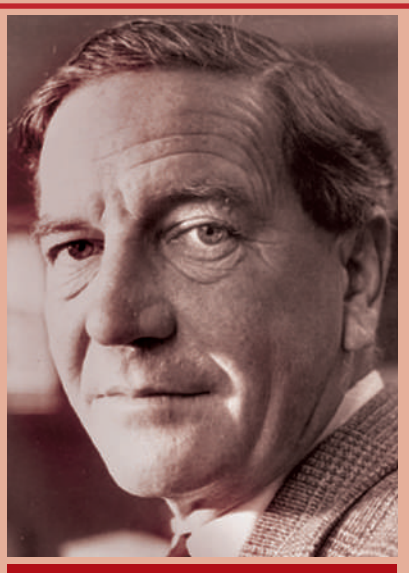

किम फिलबे

बड़ी चालाकी से अमेरिकी और ब्रिटिश ख़ुफ़िया एजेंसियों को चकमा देकर वह शख्स अपने काम पर लग चुका था. हम आपको बता दें कि यह कोई और नहीं, बल्कि किम फिलबे था. यही वह शख्स था, जिसका जन्म भारत में पंजाब के अंबाला शहर में हुआ था. इसकी पढ़ाई–लिखाई ब्रिटेन में हुई, लेकिन इसने काम किया सोवियत एजेंसी केजीबी के लिए. अमेरिका में ब्रिटिश एंबेसी में सचिव पद पर बने रहने के दौरान इसने आणविक हथियारों समेत न जाने कितनी रणनीतिक ख़ुफ़िया सूचनाएं सोवियत संघ तक पहुंचाईं. इसके बूते ही सोवियत संघ शीतयुद्ध में एक समय अमेरिका पर भारी नज़र आ रहा था. किम फिलबे का यह परिचय तो महज़ चंद शब्दों में सिमटा है, पर इसके कारनामों को बयां करना और भी मुश्किल है. किम की ख़ुफ़िया गतिविधियों ने अमेरिका सहित ब्रिटेन को काफ़ी नुक़सान पहुंचाया. उसकी गतिविधियां एक बार फिर सवालों के घेरे में आ चुकी थीं. 1951 में एक बार फिर ब्रिटिश अधिकारियों ने किम से सवाल–जवाब के लिए समन भेजा. पहले की तरह इस बार भी किम ने मैक्लीन से किसी भी तरह का संबंध होने से साफ़ मना कर दिया. लेकिन ब्रिटिश अधिकारियों ने किम फिलबे के ख़िलाफ़ काफ़ी जानकारियां जुटा ली थीं, जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि अब तक अमेरिका में ब्रिटिश ख़ुफ़िया एजेंट के तौर पर काम कर रहा यह शख्स किसी और के लिए काम कर रहा था. जिसके लिए वह काम कर रहा था, वह एजेंसी कोई और नहीं, बल्कि केजीबी थी. इन सबसे तो यही पता चलता है कि जब पूरी दुनिया में अमेरिकी और ब्रिटिश ख़ुफ़िया एजेंसियों की तूती बोलती थी तो सोवियत एजेंसी केजीबी उनसे दो क़दम आगे ही रहती थी. वह अपने दुश्मन मुल्क के नागरिकों को ही अपना जासूस बना लेती थी. यानी अमेरिकी एजेंसी सीआईए समेत बाक़ी ख़ुफ़िया एजेंसियां डाल–डाल होती थीं तो केजीबी पात–पात.

हम आपको बता दें कि किम का सारा मामला कैंब्रिज यूनिवर्सिटी से जुड़ा है. यह दुनिया के सबसे नामी विश्वविद्यालयों में से एक है. ब्रिटेन का यह मशहूर विश्वविद्यालय कई मायनों में ऐतिहासिक रहा है. इसकी ऐतिहासिक कहानियों में से एक है कैंब्रिज फाइव की दास्तां. जैसा कि नाम से पता चलता है, कैंब्रिज फाइव यानी यह कहानी ब्रिटेन के इस विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले पांच लोगों की है. कैंब्रिज फाइव केजीबी के सबसे ख़ास जासूसों में थे. किम फिलबे कैंब्रिज फाइव के पांच जासूसों में से एक था. वही कैंब्रिज फाइव, जिसने केजीबी के ख़ौफ़ को पूरी दुनिया में क़ायम किया.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

## ज़रा हट के

# बाल सांसदों के बड़े इरादे

यह ख़बर पढ़कर आप चौंक सकते हैं कि बच्चों की भी संसद होती है! लेकिन यह सौ फ़ीसदी सही है. अंतर सिर्फ़ इतना है कि देश की संसद में उम्रदराज जन प्रतिनिधि बैठते हैं और यहां बच्चे. इस संसद का उद्देश्य बच्चों एवं किशोरों को ज़िम्मेदारी सौंपना और उनमें गांव एवं शहरों की समस्याओं की समझ पैदा करना है. जी हां, यह बाल संसद कहीं और नहीं, बल्कि तमिलनाडु के एक गांव पल्लिनीरोदाई में है. इस गांव की आबादी सिर्फ़ ढाई सौ है. यह संसद कई अहम काम कर रही है.

15–16 वर्ष की आयु में जो बच्चा प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति जैसी ज़िम्मेदारी उठा सकता है, वह निश्चित तौर पर संसद का सदस्य भी बन सकता है. 14 वर्ष की महालक्ष्मी इस संसद की सदस्य है. वह 9वीं कक्षा में पढ़ती है. उसका सपना नर्स बनकर लोगों की सेवा करना है. वह इस संसद में सूचना मंत्री है और यह ज़िम्मेदारी उसके लिए उतनी ही महत्वपूर्ण है, जितना स्कूल और घर का काम. वह कहती है कि मैं आसपास की ताज़ा ख़बरों के बारे में सबको बताती हूं. मेरी अब तक की सबसे बड़ी कामयाबी यह है कि मैंने अपने गांव के लोगों को उनके बच्चों को स्कूल भेजने के लिए मना लिया है.

पल्लिनीरोदाई के इन नन्हें संसद सदस्यों की हर दूसरे हफ़्ते बैठक होती है. शाम के वक़्त, जब बच्चे स्कूल से लौटते हैं, तो यहां वे अपनी समस्याओं एवं कठिनाइयों पर बात करते हैं और उनका हल निकालने की कोशिश करते हैं. जैसे जगह–जगह सड़ते कचरे के ढेर. तमिलनाडु में ऐसे 90 स्कूल हैं, जिनके तक़रीबन 3000 बच्चे इस प्रोजेक्ट में शामिल हैं. प्रोजेक्ट चीफ़ पेरूमल सामिनाथन का कहना है कि इस संसद के बच्चों की उम्र 10 से 17 वर्ष के बीच है. हमारा उद्देश्य है कि वे समझें कि लोकतंत्र का सही मतलब क्या है. उन्हें अच्छा नेता बनना है, जिसकी भारत में कमी है. उन्हें अच्छा नागरिक बनना है. हम बच्चों को उनके अधिकारों के बारे में बताते हैं और सिखाते हैं कि कैसे उन्हें हासिल किया जा सकता है.

# बंदर और बुनियादी गणित

इंसान ने तो गणित के बड़े से बड़े और अनसुलझे सवालों का हल खोजा है, लेकिन क्या आपको पता है कि जानवर भी गणित के बुनियादी अथवा मूलभूत सवाल हल कर सकता है? जी हां, बंदर एक ऐसा जानवर है, जो मौलिक गणित का हल बड़ी आसानी से कर देता है. यह हम नहीं कह रहे हैं, बल्कि एक शोध में इसका खुलासा किया गया है. शोधकर्ताओं के मुताबिक़, बुनियादी गणित विकास के लिए बहुत ही कठिन रही है. यह शोध जर्मनी की तुबिजेन यूनिवर्सिटी में किया गया. शोध के नेतृत्वकर्ता अंड्रेस नेदर ने कहा कि यह गणित आदिम काल की संस्करण थी. इसके बारे में हम यही सोचते हैं कि यह गणित जीवन के लिए काफ़ी लाभदायक साबित हुई. ठीक इसी तरह यह काफ़ी महत्वपूर्ण है कि एक बंदर अपने ग्रुप में शामिल सभी सदस्यों की संख्या याद रखता है. उसके बाद वह अपने विरोधी ग्रुप से इसकी तुलना करता है. फिर वह यह तय करता है कि विरोधी ग्रुप पर हमला करना है या नहीं. यह शोध नेशनल एकेडमी ऑफ साइंस नामक मैग्जीन में प्रकाशित हुआ है. हालांकि निष्कर्ष तक पहुंचने के लिए शोधकर्ताओं ने बंदरों के सामने स्क्रीन पर डॉट्स की संख्या फ्लैश की, लेकिन वे बेहद चालाक निकले, क्योंकि स्क्रीन पर नंबर फ्लैश होने से पहले वे उस संख्या की गिनती कर चुके थे. उसके बाद शोधकर्ताओं ने फ्लैश में दिखाई गई संख्या की तुलना बंदरों से प्राप्त संकेतों से की. इस तुलना के बाद जो बातें सामने आईं, वे काफ़ी चौंकाने वाली हैं. बंदरों ने निश्चित समय सीमा के अंतर्गत 90 फ़ीसदी सही निर्णय दिया.

## राशिफल

1 फरवरी–7 फरवरी 2010

**मेष** (21 मार्च से 20 अप्रैल)
व्यर्थ की उलझनें रहेंगी. कोई पारिवारिक समस्या आ सकती है. स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है. आर्थिक मामलों में जोख़िम न उठाएं. पारिवारिक जीवन सुखमय होगा. किसी रिश्तेदार के कारण तनाव मिल सकता है.

**वृष** (21 अप्रैल से 20 मई)
उपहार या सम्मान का लाभ मिलेगा. जीविका के क्षेत्र में प्रगति होगी. संतान के दायित्व की पूर्ति होगी. आय के साधन में वृद्धि होगी. धार्मिक प्रवृत्ति बढ़ेगी, लेकिन भागदौड़ रहेगी. व्यर्थ में कुछ समय भी नष्ट होगा.

**मिथुन** (21 मई से 20 जून)
पिता या संबंधित अधिकारी का प्रोत्साहन मिलेगा. रुका हुआ कार्य संपन्न हो जाएगा. आर्थिक पक्ष मज़बूत होगा. धन, सम्मान में वृद्धि होगी. जीविका के क्षेत्र में प्रगति होगी. पारिवारिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी. स्वास्थ्य के प्रति ध्यान दें.

**कर्क** (21 जून से 20 जुलाई)
जीवनसाथी का सहयोग मिलेगा. धार्मिक प्रवृत्ति में वृद्धि होगी. आय और व्यय पर नियंत्रण बनाए रखें. कुछ अनचाहे कार्य करने पड़ सकते हैं. इष्टदेव के प्रति आस्था बढ़ेगी. यात्रा का लक्ष्य पूरा होगा. व्यवसायिक मामलों में सफलता मिलेगी.

**सिंह** (21 जुलाई से 20 अगस्त)
स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें. जलने से हुए घाव कष्टकारी हो सकते हैं. अचानक कहीं यात्रा पर जाना पड़ सकता है. पारिवारिक समस्या रहेगी. आर्थिक क्षेत्र में किया जा रहा प्रयास सफल होगा. धन, सम्मान में वृद्धि होने की संभावना है.

**कन्या** (21 अगस्त से 20 सितंबर)
प्रणय प्रसंग प्रगाढ़ होंगे. दांपत्य सुख प्राप्त होगा. वाणी में मधुरता बनाए रखें. आर्थिक मामलों में आशातीत सफलता मिलेगी. किसी प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी कर रहे हैं तो उसमें सफलता के योग बने हुए हैं.

**तुला** (21 सितंबर से 20 अक्टूबर)
व्यवसायिक तनाव मिल सकता है. शारीरिक पीड़ा की आशंका है. पिता या संबंधित अधिकारी से मतभेद हो सकते हैं. व्यर्थ की भागदौड़ रहेगी. स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें. किसी को कटु शब्द न बोलें, इससे परेशानी हो सकती है.

**वृश्चिक** (21 अक्टूबर से 20 नवंबर)
संतान के दायित्व की पूर्ति होगी. शिक्षा प्रतियोगिता के क्षेत्र में चल रहे प्रयास फलीभूत होंगे. आर्थिक पक्ष मज़बूत होगा. किसी योजना की सफलता से आपमें रचनात्मक क्षमता बढ़ेगी. व्यस्तता अधिक रहेगी.

**धनु** (21 नवंबर से 20 दिसंबर)
परिवार का सहयोग अपनापन का एहसास कराएगा. व्यवसायिक क्षमता बढ़ेगी. आर्थिक मामलों में प्रगति होगी. जीवनसाथी का भरपूर सहयोग मिलेगा. पारिवारिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी. निर्माण के क्षेत्र में प्रगति होगी.

**मकर** (21 दिसंबर से 20 जनवरी)
बिना वजह किसी की बातों में न पड़ें, नहीं तो विवाद की स्थिति पैदा हो सकती है. पारिवारिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी. धन, सम्मान, यश और कीर्ति में वृद्धि होगी. उपहार या सम्मान का लाभ मिलेगा. रचनात्मक कार्यों में सफलता मिलेगी.

**कुंभ** (21 जनवरी से 20 फरवरी)
धन या सम्मान में वृद्धि होगी. वाणी का सुख मिलेगा. किसी पुराने मित्र से भेंट होगी. व्यर्थ की उलझनें रहेंगी, जिनके कारण आप परेशान रह सकते हैं. स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है. संबंधों में निकटता आएगी.

**मीन** (21 फरवरी से 20 मार्च)
रचनात्मक कार्यों के लिए किया जा रहा प्रयास सफल होगा. किसी कार्य के संपन्न होने से आपके प्रभाव एवं वर्चस्व में वृद्धि होगी. व्यवसायिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी. धन, सम्मान, यश और कीर्ति में वृद्धि होगी.

पंडित सुदर्शन
feedback@chauthiduniya.com

हॉलब्रूक की पहचान सिर्फ विदेश मामलों के जानकार होने तक ही सीमित नहीं है. वह एक बैंकर, पत्रकार और लेखक के तौर पर काफी योगदान दे चुके हैं.



# नाज़ुक मोड़ पर भारत-ऑस्ट्रेलिया संबंध

आशुतोष मिश्र

इस बात में कोई संशय नहीं है कि इन दिनों आस्ट्रेलिया-भारत संबंध एक कठिन दौर से गुज़र रहे हैं. रंगभेद की यह परिस्थिति पहले भारतीय मूल के टैक्सी चालकों पर हमले, उसके बाद भारतीय छात्रों पर हमले और अब गुरुद्वारों को निशाना बनाने से और भी गंभीर हो चुकी है. हालांकि दोनों ही देशों ने अपनी तरफ़ से पूरी कोशिश की कि इन परिस्थितियों का असर द्विपक्षीय रिश्तों पर न पड़े, लेकिन बंद दरवाज़ों के पीछे की सच्चाई प्रोत्साहित करने वाली नहीं है.

वर्ष 2007 से ही द्विपक्षीय रिश्ते लगातार तनावों से जूझ रहे हैं. कभी मोहम्मद हनीफ विवाद या नाभिकीय ईंधन में व्यापार की मनाही या फिर हरभजन सिंह विवाद भारत और आस्ट्रेलिया के बीच तनाव पैदा करते रहे. लेकिन इनमें से किसी भी मुद्दे को भारत में लोगों के गुस्से का सामना नहीं करना पड़ा, जितना हाल में भारतीय छात्रों पर हुए हमलों से देश में आक्रोश है. इस बात का अंदाज़ा इसी से लगाया जा सकता है कि हाल के दिनों में आस्ट्रेलिया से कई उच्चस्तरीय लोगों का भारत दौरा हुआ, जिसकी शुरुआत आस्ट्रेलियाई विदेश मंत्री स्टीफेंस स्मिथ, विक्टोरिया स्टेट के प्रमुख ज़ान बंपी, उप प्रधानमंत्री जूलिया गिलार्ड और अंत में ख़ुद प्रधानमंत्री केविन रुड का भारत दौरा प्रमुख है. वहीं भारत से भी विदेश मंत्री एस एम कृष्णा और प्रवासी मामलों के मंत्री व्यालार रवि के आस्ट्रेलिया दौरे से साफ़ संकेत है कि दोनों ही देश इस कोशिश में हैं कि आपसी रिश्ते और ज़्यादा ख़राब न हों. ख़ासकर, आस्ट्रेलियाई प्रधानमंत्री केविन रुड के नवंबर में हुए भारत दौरे को सही समय पर की गई यात्रा के तौर पर देखा जा रहा है और आस्ट्रेलिया स्थित कई विश्लेषक इस बात को मान रहे हैं कि एक बार दोनों देशों के बीच कूटनीतिक साझेदारी की शुरुआत हो जाए तो भारतीय छात्रों पर हो रहे हमलों का मामला ठंडा पड़ जाएगा. अगर यह वजह इन उच्चस्तरीय दौरों के पीछे थी तो यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि वे दिशाहीन यात्राएं रहीं और वे ज़मीनी हक़ीक़त से कोई वास्ता नहीं रखतीं.



ऐसे वक़्त में जब भारतीय छात्रों पर हमलों के मामले बढ़ते जा रहे हैं और गुरुद्वारों पर आएदिन निशाने साधे जा रहे हैं, तो ज़रूरत है कि कुछ अहम सवालों पर ग़ौर किया जाए. पहला, हमलों के पीछे की असल वज़ह क्या है. दूसरा, क्या भारतीय मीडिया द्वारा आस्ट्रेलिया पर रंगभेद का आरोप सही है. तीसरा, इन समस्याओं को हल करने के लिए हमारे पास क्या उचित विकल्प मौजूद हैं. चौथा, क्या भारतीय प्रतिक्रिया को उचित ठहराया जा सकता है. और पांचवा, मौजूदा हालात में दोनों देशों से क्या उम्मीद रखनी चाहिए.

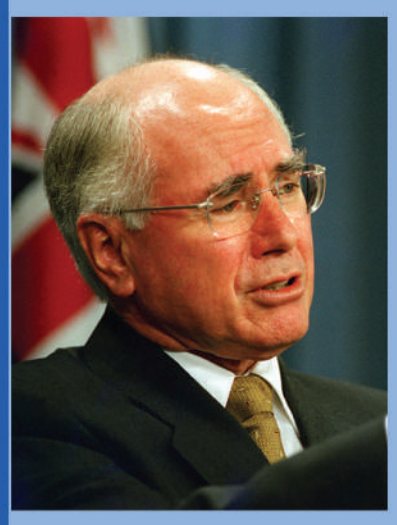

> **मैं सभी भारतीयों के भारतीयों के लिए नहीं बोल सकता, लेकिन जहां तक मेरे अपने विचारों का सवाल है, तो 2007 से अपने परिवार के साथ ऑस्ट्रेलिया में रहते हुए मैंनें कभी महसूस नहीं किया कि ऑस्ट्रेलिया रंगभेद से ग्रस्त है.**



मौजूदा विवाद को हल करने की पहल की दिशा में पहली बड़ी समस्या विवाद की अलग-अलग व्याख्या है. दोनों पक्ष के अधिकारी इसे अलग-अलग तरीके से पेश कर रहे हैं. भारत के मुताबिक, ऑस्ट्रेलिया में हो रहे कुछ हमले रंगभेद का नतीजा हैं, वहीं ऑस्ट्रेलियाई अधिकारी किसी तरह के रंगभेद से साफ इंकार करते हुए मानते हैं कि भारतीयों पर हो रहे हमले महज़ कानून-व्यवस्था से संबंधित हैं. इससे साफ ज़ाहिर है कि दोनों पक्ष के अधिकारी दो अलग-अलग समस्याओं को देख रहे हैं. नतीज़तन, अलग-अलग हल दे रहे हैं. लिहाज़ा यह ज़रूरी हो जाता है कि दोनों ही पक्ष पहले इस बात पर सहमत हों कि समस्या की असल वज़ह क्या है. जब इस पर आपस में सहमति बन जाए, तब उस समस्या को हल करने के लिए ज़रूरी कदम उठाने की कोशिश करें. हालांकि, ऑस्ट्रेलिया के पूर्व सेना अध्यक्ष पीटर कॉस्ग्रोव की टिप्पणी, भारतीयों पर हो रहे हमलों को रंगभेद से जोड़ना सबसे आसान निष्कर्ष निकालने जैसा है को तव्वज़ो न देते हुए रंगभेद के खिलाफ कोई मामला साबित करना जितना आसान लगता है, उतना है नहीं. जब तक भेदभाव और हमला रंग, नस्ल, राष्ट्रीयता, प्रजाति और धर्म पर आधारित और राज्य निर्धारित नहीं होता, जिस तरह दक्षिण अफ्रीका में अपार्थीड का दौर, रॉबर्ट मुगाबे के अधीन जिंबाब्वे या जिनोसाइड के वक्त रवांडा रहा, तब तक रंगभेद के खिलाफ मामला बनना आसान नहीं होता. अन्य मामलों में या तो आरोपी रंगभेद का आरोप स्वीकार करने से मना कर देता है या फिर रंगभेद का दावा करने वाले पीड़ितों के दावे को अदालत में इस आधार पर चुनौती मिलती है कि हमले की निष्पक्ष गवाही कोई नहीं दे सकता है. ऐसे हालात में रंगभेद के आरोपों को किसी तरह के सुबूत की मदद से साबित नहीं किया जा सकता है. एकमात्र विकल्प यह बचता है कि राजनीतिक सद्‌भावना, संस्थागत विश्वास और मानवीय पक्ष को आधार बनाकर ही इस समस्या से निबटा जाए. ऑस्ट्रेलिया से हमलों को रोकने या हमलावरों के खिलाफ कोई कार्रवाई करने की मांग के पहले भारत को यह बात अपने दिमाग में रखनी चाहिए.

दूसरा, जिस तरह से विक्टोरिया में भारतीयों के खिलाफ हमलों की संख्या बढ़ रही है, पूरे ऑस्ट्रेलिया में रह रहे भारतीयों को इस मामले में गहन सोच-विचार करने की ज़रूरत है. और, जरूरत है कि वे साथ में रहने वाले ऑस्ट्रेलियाई लोगों एवं दोस्तों से एक स्वस्थ और सार्थक बहस करें. यह इसलिए ज़रूरी है, क्योंकि यह उचित नहीं है कि हम कुछ लोगों के बर्ताव, भले ही वह रंगभेद से ग्रस्त क्यों न हो, को समूचे देश का व्यवहार समझ लें और वहां की कानून व्यवस्था पर ही रंगभेदी होने का आरोप जड़ दें. भारतीय लोगों की ऑस्ट्रेलियाई सरकार और विक्टोरिया की पुलिस से इस बात की नाराज़गी जायज है कि वे इन हमलों में रंगभेद की भूमिका को नकार रहे हैं. लेकिन मेरा सवाल यही है कि कौन सा देश रंगभेद का आरोप स्वीकार करेगा, वह भी तब, जब उसे यह आरोप स्वीकार करने के लिए कहा जा रहा हो. इसके साथ ही यह भी कहना जरूरी है कि रंगभेद और भेदभाव के मामले सभी देश एवं समाज में होते हैं. केवल ऑस्ट्रेलियाई समाज के लिए ऐसा कहना गलत होगा. यह सच है कि इस तरह के हमले सभी समाज और देश में होते हैं, लेकिन जो बात एक देश को दूसरे देश से अलग करती है, वह यह है कि इस समस्या को सुलझाने के लिए वह किस तरह से फैसला करता है. इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो ऑस्ट्रेलियाई अख़बार और टेलीविजन चैनलों पर ऐसी कई खबरें देखने को मिलती हैं, जिनमें भेदभाव पर आधारित हिंसा शामिल रहती है. ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट में भारत की खराब स्थिति पर आधारित सवालों को सामने रखकर अगर ऑस्ट्रेलिया सरकार भारत से पहले अपना घर दुरुस्त करने की बात कहती है तो वाजिब होने के बावजूद इन हालात में ऐसी बातें उचित नहीं कही जाएंगी.



*शेष अगले अंक में*

*(लेखक ऑस्ट्रेलिया की ग्रिफिथ यूनिवर्सिटी में एसोसिएट प्रोफेसर हैं.)*

feedback@chauthiduniya.com

# क्या भारत को हॉलब्रूक की ज़रूरत है?

राहुल मिश्र

अफ़ग़ानिस्तान और पाकिस्तान में तैनात अमेरिकी दूत रिचर्ड हॉलब्रूक अफ़ग़ानिस्तान-पाकिस्तान नीति में अमेरिका की जीत के लिए भारत को फ़ायदेमंद मानते हैं. यह कोई पहला मौक़ा नहीं है, जब रिचर्ड हॉलब्रूक ने अफ़ग़ानिस्तान-पाकिस्तान नीति में भारत को शामिल किए जाने की पेशकश की है. अपने इस बयान से भले ही उन्होंने सीधा इशारा नहीं किया है, लेकिन इतना ज़रूर साफ़ कर दिया है कि अमेरिका अफ़ग़ानिस्तान और पाकिस्तान में हर हालात में जीतना चाहता है और इस जीत के लिए उसे अगर भारत का सहारा लेना पड़ता है तो वह ज़रूर लेगा. हॉलब्रूक का यह बयान ऐसे वक़्त में आया है, जब भारतीय विदेश मंत्री अफ़ग़ानिस्तान पर आयोजित एक समिट के लिए लंदन रवाना हो रहे थे. इस समिट का आयोजन ब्रिटेन, संयुक्त राष्ट्र और अफ़ग़ानिस्तान की पहल पर हुआ. इसमें दुनिया भर के देशों के विदेश मंत्री इस बात पर चर्चा करेंगे कि किस तरह से अफ़ग़ानिस्तान में सैन्य और ग़ैर सैनिक संसाधनों का प्रयोग किया जाए और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अफ़ग़ानिस्तान की समस्या से निपटने के लिए नीति बनाई जाए.

> **अफ़ग़ानिस्तान में भारत की भूमिका कभी किसी विदेशी मुल्क ने तय नहीं की है. अफ़ग़ानिस्तान में सोवियत संघ की सेना की मौजूदगी के दौरान भी भारत निष्पक्ष भूमिका में रहा.**

अफ़ग़ानिस्तान में भारत की भूमिका कभी किसी विदेशी मुल्क़ ने तय नहीं की है. अफ़ग़ानिस्तान में सोवियत संघ की सेना की मौजूदगी के दौरान भी भारत निष्पक्ष भूमिका में रहा. 11 सितंबर को अमेरिका पर हुए अलक़ायदा हमले के बाद जब अमेरिकी हमलों की शुरुआत हुई और आगे चलकर अमेरिका की अफ़ग़ानिस्तान-पाकिस्तान नीति बनाई गई तो भी भारत की भूमिका निष्पक्ष रही. यह बात अलग है कि भारत ने अमेरिकी नीति की कड़ी आलोचना नहीं की, लेकिन

समय-समय पर भारतीय विदेश मंत्रालय यह साफ़ करता रहा है कि भारत सरकार अफ़ग़ानिस्तान में शांति बहाली के साथ-साथ अफ़ग़ान नागरिकों को विकास के रास्ते पर लाने का पक्षधर है. लिह-ाज़ा, अफ़ग़ानिस्तान में भारतीय मदद का रास्ता तय करने में भारत ने हमेशा ऐसे मामलों से दूरी बनाकर रखी, जो अफ़ग़ानिस्तान के विकास से वास्ता नहीं रखते थे. लेकिन अफ़ग़ानिस्तान में आतंकवाद एक ऐसा मुद्दा है, जिसे भारतीय कूटनीतिज्ञों ने दरकिनार



किए रखा और इसका नतीजा आज सामने है. अमेरिका और दर्ज़न भर अन्य पश्चिमी देश अफ़ग़ानिस्तान में एक ऐसा युद्ध लड़ रहे हैं, जिसकी शुरुआत तो हुई थी अमेरिका के युद्ध के तौर पर, लेकिन बाद में परिवर्तन के ज़रिए इसे अफ़ग़ानिस्तान का युद्ध क़रार दिया गया.

रिचर्ड हॉलब्रूक के बयान का क्या तात्पर्य है? अमेरिका किस युद्ध में जीत के लिए भारत को फ़ायदेमंद मान रहा है? क्या अफ़ग़ानिस्तान के युद्ध में अमेरिका का अपना भी कोई फ़ायदा है या फिर अमेरिकी विदेश मंत्री हिलेरी क्लिंटन के अफ़गानिस्तान दौरे के वक़्त दिए बयान पर अमेरिका आज भी क़ायम है? ग़ौरतलब है कि हिलेरी क्लिंटन ने अपने दौरे के समय साफ़ कहा था कि अमेरिका अफ़ग़ानिस्तान में अफ़ग़ानियों के लिए है. लिहाज़ा, रिचर्ड हॉलब्रूक ऐसे वक़्त में क्यों भारत की तरफ़ देख रहे हैं, जब संयुक्त राष्ट्र और अफ़ग़ानिस्तान की पहल पर लंदन में इस समिट का आयोजन किया जा रहा था.

जिस तरह से पिछले कुछ महीनों में अफ़ग़ानिस्तान में अमेरिकी ठिकानों पर हमला किया गया है और यहां तक कि सीआईए के ख़िलाफ़ अलक़ायदा और तालिबान को बड़ी जीत हासिल हुई है, उससे साफ ज़ाहिर है कि रिचर्ड हॉलब्रूक अफ़ग़ानिस्तान में युद्ध की बिसात बिछाने में नाकामयाब हो रहे हैं. ऊपर से ओबामा प्रशासन की दी गई समयावधि भी दस्तक दे रही है. यहां सवाल यह है कि क्या नौ साल तक अफ़ग़ानिस्तान में लड़ने के बाद अमेरिकी दूत को ऐसा लग रहा है कि अफ़ग़ानिस्तान में जीत अमेरिका की मज़बूरी है और वह वियतनाम जैसी ग़लती दोहराने की कगार पर खड़ा है.

rahul@chauthiduniya.com

## रिचर्ड हॉलब्रूक कौन हैं?

रिचर्ड हॉलब्रूक अफ़ग़ानिस्तान और पाकिस्तान में विशेष दूत के ओहदे पर तैनात हैं. 1962 में विदेश सेवा अधिकारी के तौर पर अपने करियर की शुरुआत करने वाले हॉलब्रूक ने अमेरिकी विदेश नीति में अहम भूमिका निभाई है. 1977 में तत्कालीन राष्ट्रपति जिमी कार्टर ने इन्हें पूर्वी एशिया और प्रशांत क्षेत्र का सहायक विदेश सचिव बनाया. अफ़ग़ानिस्तान और पाकिस्तान में विशेष दूत का दायित्व निभाने वाले हॉलब्रूक इसके पहले भी यूरोप में सहायक अमेरिकी विदेश सचिव पद की ज़िम्मेदारी निभा चुके हैं. यानी वह ऐसे पहले राजनयिक हैं, जिन्होंने दो अलग-अलग क्षेत्रों यूरोप और एशिया में सहायक विदेश सचिव का पद संभाला. हॉलब्रूक की पहचान सिर्फ़ विदेश मामलों के जानकार होने तक ही सीमित नहीं है. वह एक बैंकर, पत्रकार और लेखक के तौर पर काफ़ी योगदान दे चुके हैं. संयुक्त राष्ट्र में अमेरिकी राजदूत से लेकर इंडोनेशिया में शांति बहाली तक (जब पूर्वी तिमोर का मसला गंभीर था) अमेरिकी राजनीति में वह एक अहम शख़्सियत साबित हुए. इसके अलावा पिछले राष्ट्रपति चुनावों के दरम्यान वह हिलेरी क्लिंटन के विदेशी मामलों के सलाहकार भी रह चुके हैं. एक डेमोक्रेटिक उम्मीदवार होने के नाते हॉलब्रूक का नाम ओबामा प्रशासन में भी विदेश मंत्री के तौर पर उछला था. जान एफ कैनेडी से प्रभावित होने के बाद अमेरिकी राजनीति में क़दम रखने वाले हॉलब्रूक ने अमेरिका के कई अहम विभागों की ज़िम्मेदारी निभाई.

यह भी बेहद दिलचस्प है कि वह मौजूदा आर्थिक मंदी में दिवालिया हुए अमेरिकी बैंक लेहमन ब्रदर्स के मैनेजिंग डायरेक्टर भी रह चुके हैं. यानी हॉलब्रूक एक नहीं, एक साथ कई ज़िम्मेदारियां निभाने में भी अव्वल हैं. अफ़ग़ानिस्तान और पाकिस्तान के विशेष दूत का दायित्व संभालने से पहले वह अमेरिकी-चीन विदेश संबंधों की एक काउंसिल के निदेशक थे. कई अमेरिकी राष्ट्रपतियों के साथ काम कर चुके हॉलब्रूक की विदेश मामलों पर अच्छी ख़ासी पकड़ है. एशियाई मुल्क़ों की विदेश नीति के बारे में लंबा अनुभव होने के चलते ही उन्हें अफ़ग़ान-पाक का विशेष दूत बनाया गया है.

केवल दो घंटे बाद 11 दिन से कोमा में पड़ी ऐश्वर्या ने आंख खोल दी. अचेतावस्था में साई बाबा ने उसे भी दर्शन और आशीर्वाद दिया था.



# साईं बाबा की भक्ति मुझे दीवाना बना देती है: रविंद्र जैन

विकास कपूर

संगीत सम्राट रविंद्र जैन का नाम जेहन में उभरते ही एक स्वाभाविक सा प्रश्न उभरता है कि दद्दू (रविंद्र जैन) बड़े गीतकार हैं या बड़े संगीतकार? कई लोगों ने कोशिश की, लेकिन उन्हें इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिला. सच यह है कि गीत यदि दद्दू के प्राण हैं तो संगीत प्राणों का संचार. 28 फरवरी 1944 को अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) में जन्मे दद्दू ने अपनी आंखों से दुनिया कभी नहीं देखी. जन्मांध होने पर भी दद्दू के भीतर स्थितियों और घटनाओं के अवलोकन की अद्भुत अंतर्दृष्टि परमेश्वर ने प्रदान की है. राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अनेक बार सम्मानित रविंद्र जैन *चोर मचाए शोर, चितचोर, अंखियों के झरोख़े से, हिना, राम तेरी गंगा मैली* एवं *विवाह* आदि सुपरहिट फ़िल्मों और *रामायण, श्रीकृष्णा, ब्रह्मा–विष्णु–महेश, जय मां वैष्णो देवी, साई बाबा* एवं *साई भक्तों की सच्ची कहानियां* जैसे सुपरहिट टेलीविज़न धारावाहिकों की वजह से लाखों–करोड़ों संगीत प्रेमियों के दिलों पर राज करते हैं. पिछले दिनों दद्दू से एक लंबी बातचीत हुई. प्रस्तुत हैं उस बातचीत के प्रमुख अंश:

**साई राम दद्दू!**

साई राम, आपने जब कहा कि आप साई बाबा के बारे में कुछ बातें करने आ रहे हैं, तबसे ही मेरा मन साई भक्ति में दीवाना हो गया. सच भी यही है कि साई की भक्ति मुझे दीवाना बना देती है. जी करता है कि सब कुछ छोड़कर मलंगों की तरह चिमटा बजा–बजाकर नाचते–गाते साई का नाम जपूं. आपके लिए एक गाना लिखा और संगीतबद्ध किया था, वह आज सुबह से ही मुझे याद आ रहा है, साई के दीवाने आए, हमको सुनाने आए, साई भक्तों की सच्ची कहानियां... जो जहां बैठे याद करे, याद करे फ़रियाद करे, शिरडी वाले आज भी करते उन पर मेहरबानियां...

***साई बाबा के पूरे चरित्र को आप किस प्रकार देखते हैं?***

एक महामानव, एक परमपुरुष और एक हिदायतकार के रूप में. सही मायनों में बाबा अब तक अवतरित सभी महापुरुषों में अकेले ऐसे इंसान थे, जिनकी न कोई जाति थी और न ही कोई मज़हब. इंसानियत ही उनकी जाति और मज़हब थी. मैंने केवल साई को पूजा ही नहीं, अपने जीवन में उनकी दी हुई शिक्षा को उतारने की कोशिश भी की है. बहुत कम लोग जानते होंगे कि रविंद्र जैन पिछले 24 वर्षों से पवित्र कुरान को हिंदी गीत शैली में लयबद्ध करने की कोशिश कर रहे हैं. साई बाबा भी यही चाहते थे कि हर धर्म लोगों की आस्था से भी ज़्यादा जीवनोपयोगी बने. पवित्र धार्मिक पुस्तकों में दी गई शिक्षा को समाज सरलता से ग्रहण करके उस पर अमल कर सके.

***कुरान पर किए गए अपने कार्य के बारे में थोड़ा और बताएं.***

अब तक मैंने अल्लाह के करम से 22 अध्यायों पर काम किया है. उनमें से एक आपको बताता हूं. अल–हमदो में उसने ख़ुद को रबूल अलमीन कहा है. गोया कि सारे आलमों का पालने वाला है वह. रहमान–ओ–रहीम उसके सिफ़त के नाम हैं. बंदों का रखवाला वही, अव्वल है वह, आला है वह. जैसे–*तुझको ही पूजें, और करें तेरी ही मदद का आसरा. तू बख्श क़दमों को हमारे, सीधा–सच्चा रास्ता. उन राहियों का रास्ता, जिन पर तेरे एहसान हों. वह रास्ता शामिल रहे मालिक तेरी जिस में रज़ा. वह रास्ता उनका न हो, जिन पर हुआ तेरा गज़ब. वह रास्ता हर्गिज़ न हो, भटके लोगों का रास्ता. तेरी निगाहों में रहें, तेरी पनाहों में रहें. आमीन* कहकर मांगते हैं, आज तुझसे यह दुआ. अल्लाह मालिक है.

अगले अंक में
ऊषा मंगेशकर जी के साई अनुभव

# भक्ति की शक्ति

मुंबई के सिद्धार्थ बाघमारे की आठ वर्षीय बेटी ऐश्वर्या एक दिन दोपहर में स्कूल से घर लौटते समय एक कार की चपेट में आने से बुरी तरह घायल होकर बेहोश हो गई. बांबे हॉस्पिटल में ऐश्वर्या को दाख़िल कराया गया. उसका विधवत इलाज चला परंतु अच्छे इलाज के बाद भी डॉक्टर उसे होश में लाने में सफल न हो सके. ऐश्वर्या कोमा में चली गई. सात–आठ दिन कोमा में ही बीत गए. हालात ऐसे हो गए कि डॉक्टरों को ऐश्वर्या के बचने की उम्मीद भी न के बराबर दिखाई देने लगी. तभी साई बाबा ने मलाड (मुंबई) में रहने वाले अपने भक्त शांतिलाल पांचाल को स्वप्न देकर ऐश्वर्या की मदद करने को कहा. साई बाबा ने जैसा जैसा शांतिलाल को कहा उसी अनुसार शांति भाई साई बाबा का अभिषेक जल, उदी और फूल लेकर बांबे हॉस्पिटल पहुंच गए. अस्पताल में शांति भाई ने जल और उदी से ऐश्वर्या को तिलक करने की इच्छा ज़ाहिर की. पहले तो डॉक्टरों ने मना कर दिया, परंतु सिद्धार्थ की इच्छा के कारण शांति भाई ने अभिषेक जल एवं उदी से बेहोश ऐश्वर्या का तिलक किया और अपने द्वारा रचित साई की प्रेरणा का कैसेट धीरे–धीरे बजा दिया. केवल दो घंटे बाद 11 दिन से कोमा में पड़ी ऐश्वर्या ने आंख खोल दी. अचेतावस्था में साई बाबा ने उसे भी दर्शन और आशीर्वाद दिया था. इस चमत्कार को अपनी आंखों से देखने वाले बांबे हॉस्पिटल के डॉक्टरों ने भी नमस्कार किया. फिर कई डॉक्टरों, शांति भाई और अपने परिवार के साथ ऐश्वर्या साई बाबा को उनकी कृपा का धन्यवाद देने शिरडी गई.

# साई सार्वभौम हैं

श्री साई सच्चरित्र के 40वें एवं 41वें अध्याय में हेमाड पंत जी ने अपने जीवन से जुड़ी साई कृपा की एक रोचक घटना का उल्लेख किया है. 1917 में एक रात साई बाबा ने हेमाड पंत को एक संन्यासी के वेश में स्वप्न देकर कहा, हेमाडे, बहुत दिनों से तू मुझे अपने घर बुलाकर भोजन कराना चाहता था न? तो कल होली पूर्णिमा की दोपहर मैं तेरे घर भोजन करने आऊंगा. इस स्वप्न से हेमाड पंत की नींद खुल गई और स्वप्न में मिले बाबा के निर्देश को उन्होंने अपनी पत्नी को उसी समय बताकर सचेत कर दिया. होली पूर्णिमा की दोपहर भोजन का समय हो गया, परंतु बाबा नहीं आए. हेमाड पंत एवं उनकी पत्नी को भी लगने लगा कि वह केवल स्वप्न ही था. मन मारकर गौ ग्रास आदि निकालने के बाद हेमाड पंत ने पहला कौर तोड़ा ही था कि द्वार पर दस्तक सुनाई दी. द्वार खुलने पर दो मुस्लिम सज्जन खड़े थे. उनमें से एक ने कहा, मेरा नाम अली मुहम्मद है. कुछ समय पहले मेरे उस्ताद संत अब्दुल रहमान साहेब ने मुझे मेरे घर के सभी संतों के चित्र दरिया में डाल देने का हुक़्म दिया था. मैंने गुरु का हुक़्म मानकर सभी चित्र दरिया में डाल दिए, पर साई बाबा का चित्र घर पर ही रह गया. जबकि मैंने दरिया पर जाने से पहले घर अच्छी तरह से देखा था. इस घटना से मैं परेशान हो गया. फिर साई बाबा ने ख़ुद सपने में आकर मुझसे कहा कि मेरा चित्र बांद्रा–मुंबई के हेमाड पंत के घर पहुंचा दो. बाबा के हुक़्म की तामील हो गई. अब हमें इजाज़त दीजिए. बाबा का चित्र हेमाड पंत को देकर वे दोनों चले गए. हेमाड पंत भी साई के सच्चे मुरीद थे. पल भर में उनका संकेत समझ गए और चित्र को ही भोजन का भोग लगाकर उन्होंने प्रसाद पाया. कुछ दिनों बाद हेमाड पंत जब पत्नी सहित शिरडी आए तो बाबा ने उस दिन के भोजन की भूरि–भूरि प्रशंसा करते हुए यहां तक बता दिया कि उस दिन भोजन में क्या–क्या बना था.

# साई धर्म और मज़हब से परे हैं

असीम खेत्रपाल

श्री साई सच्चरित्र में कई ऐसे प्रसंग पढ़ने को मिलते हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि शिरडी के साई बाबा ने स्वयं को कभी किसी भी धर्म–मज़हब के दायरे में बंधने नहीं दिया. वह मस्जिद के भीतर धूनी रमाकर बैठते थे. उनका एक हाथ भगत म्हालसापति के कंधे पर तो दूसरा हाथ अब्दुल बाबा के कंधे पर रहता था. साई बाबा ने धर्म और मज़हब को आधार बनाकर कभी किसी से भेदभाव नहीं किया. इंसान तो इंसान उनके साथ प्रतिदिन कुत्ता, बिल्ली, तोता, कबूतर और कौवा भी एक ही थाली में भोजन कर लिया करते थे. वह प्राय: किसी को भी शुभाशीष देते समय अल्लाह मालिक है और रामजी भला करेंगे शब्दों का प्रयोग किया करते थे. उनकी द्वारका मस्जिद हिंदू और मुसलमान दोनों के ही पर्वों को पूरे उत्साह से मनाती थी.

लेकिन, अचानक कुछ लोगों ने एक सोची–समझी रणनीति के तहत साई बाबा की जाति और मज़हब सब कुछ निश्चित कर दिया. आज बाज़ार में साई बाबा के कितने ही ऐसे चित्र देखने को मिल जाते हैं, जिनमें शिवलिंग में साई बाबा, मां दुर्गा के साथ साई बाबा, गुरु दत्तात्रेय, श्री गणेश, श्रीराम, श्रीकृष्ण के साथ साई बाबा उन्हीं के रूप में अथवा उनके साथ दिखाई दे रहे हैं. पिछले दिनों हिंदी के एक प्रमुख मनोरंजन चैनल पर प्रसारित साई बाबा के धारावाहिक ने तो बिना किसी आधार के साई बाबा का जन्म और उनके जन्म से पूर्व त्रिदेव ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश की उत्साहित मंत्रणा तक दिखा दी.

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जिस महान उद्देश्य के लिए साई बाबा शिरडी में अवतरित हुए, आज उनके भक्त उनका वह उद्देश्य और शिक्षा भूलकर आडंबर एवं दिखावे से भरी भक्ति करके अपने अभिमान को संतुष्ट कर रहे हैं. जबकि साई बाबा इस प्रकार के ढकोसलों के कट्टर विरोधी थे. वह तत्कालीन समाज को जातिपात, धर्म–मज़हब के बंधनों से मुक्त कर मानवता का पाठ पढ़ाना चाहते थे. अफ़सोस के साथ कहना पड़ रहा है कि भक्तों ने बाबा को ही धर्म–मज़हब के दायरे में क़ैद कर दिया.

## साई के चमत्कार

एक बार शिरडी में भयानक तूफ़ान आया. तूफ़ान की गति इतनी प्रचंड थी कि शिरडी के अनेक घर (घास–फूस के झोपड़े) हवा में उड़ने लगे. शिरडीवासी बदहवास से अपनी जान बचाने के लिए भाग रहे थे. तभी नाना चांदोरकर की पत्नी की दृष्टि नीम के पेड़ के नीचे बैठे एक सोलह–सत्रह वर्ष के बालक पर पड़ी, जो ध्यान मुद्रा में था. घबराई हुई नाना की पत्नी ने उस बालक का ध्यान भंग कर तूफ़ान से बचने के लिए भागने को कहा तो उसने आश्चर्य से नाना की पत्नी को देखते हुए पूछा, तुम सब इतना घबराए हुए क्यों हो? अब आश्चर्य की बारी नाना की पत्नी की थी. उसने चारों तरफ़ तांडव लीला करते तूफ़ान को दिखाकर बालक से भागने को कहा. पर यह क्या? बालक अपने स्थान से उठा और उसने अपने दोनों हाथ आकाश की ओर फैलाकर आदेशात्मक स्वर में कहा, शांत. और, तूफ़ान सच में शांत हो गया. नाना की पत्नी उसके चरणों में गिर पड़ी. उसने पूछा, तुम कौन हो? बालक ने मुस्कराकर कहा, मैं कोई नहीं, परंतु यह मेरा गुरुस्थान है. शिरडीवासियों को बालक के चमत्कार के बारे में बताकर और उन्हें साथ लेकर नाना की पत्नी जब वहां लौटी तो बालक (साई बाबा) वहां नहीं थे. इस घटना से पता चलता है कि साई बाबा की अनंत कोटि की सत्ता हम चेतन जीवों पर ही नहीं, जड़ पदार्थों और पंचतत्वों पर भी एक समान चलती है.

## साई बाबा रंगीन चित्र प्रतियोगिता

प्रिय बच्चों, हम तुम्हारे लिए साई चित्र प्रतियोगिता शुरू कर रहे हैं. यदि तुम्हारी आयु 14 वर्ष तक हो तो अपनी फोटो और आयु प्रमाणपत्र के साथ साई बाबा का रंगीन चित्र स्वयं बनाकर हमें शिरडी साई बाबा फाउंडेशन, पोस्ट बॉक्स नंबर 17517, मोती लाल नगर नंबर–1, गोरेगांव (पश्चिम), मुंबई–58 पर भेजो अथवा sai4world@gmail.com पर ई–मेल करो. लेकिन तुम्हारा बनाया हुआ चित्र 31 जनवरी 2010 से पहले हमारे पास पहुंच जाना चाहिए. यदि तुम्हारा बनाया हुआ चित्र चौथी दुनिया में प्रकाशित होगा तो तुम्हें साई भक्त परिवार की तरफ़ से शिरडी साई बाबा फ़िल्म की डीवीडी पुरस्कार स्वरूप दी जाएगी.

## ज्ञानोदय

**असफलता केवल यही सिद्ध करती है कि सफलता के लिए पूरे प्रयास नहीं किए गए**

स्व. मालती कपूर

**मां होने के कारण नारी का स्थान भगवान से भी ऊंचा है.**

प्रेमचंद

**विचारों को दबाया नहीं जा सकता. एक दिन विचार कंदरा फोड़ कर संसार पर छा जाते हैं.**

स्व. तारा चंद्र मेहरोत्रा

## शिरडी साईं बाबा फाउंडेशन (रजि.)

**अनंत कोटि ब्रह्मांड के नायक राजाधिराज योगीराज परब्रह्म शिरडीपुरीश्वर साई नाथ महाराज के सिद्धांतों, शिक्षाओं, जनचेतना और जनजागरण के कार्यक्रमों को जन–जन तक पहुंचाने के लिए शिरडी साई फाउंडेशन कृत संकल्प है. यदि आप भी इस महायज्ञ में अपने सत्कर्मों की आहुति डालना चाहते हैं तो साई भक्त परिवार में आपका सहर्ष स्वागत है.**

नाम.....

पता.....

टेलीफोन.....मोबाईल.....

ई–मेल.....

हस्ताक्षर

सदस्य बनने के लिए अपना पूरा विवरण निम्न पते पर अपने ड्राफ्ट के साथ भेजें

हमारा पता है:–

**शिरडी साई बाबा फाउंडेशन** पोस्ट बॉक्स नंबर–17517, मोती लाल नगर नंबर–1, गोरेगांव (पश्चिम), मुंबई–58
आप अपना नाम, पता और फोन नंबर 09999989427 पर एसएमएस भी कर सकते हैं

सभी साई भक्तों को विनम्रता से सूचित किया जाता है कि वे अपने साई अनुभव, साई उत्सवों आदि की विस्तृत सूचना (कार्यक्रम, प्रबंधक, तिथि, स्थान और समय सहित) विकास कपूर को sai4world@gmail.com पर मेल कर सकते हैं.

परंपरा और ज्योतिषीय व्यवस्था की बात कहें तो 14 अप्रैल को ही कुंभ का अमृत योग बनेगा और जब तक सूर्य मेष राशि में रहेंगे यानी 13 मई 2010 तक यह अमृतयोग बना रहेगा.



# दांव पर दिल्ली पुस्तक मेला

अनंत विजय

पंद्रहवीं शताब्दी में जब पुस्तक मेले की शुरुआत हुई थी तो उसके पीछे अवधारणा यह थी कि विश्व के देशों के प्रकाशकों को एक मंच मिले, जहां वे किताबों के प्रकाशन अधिकार का सौदा कर सकें. प्रारंभिक अवधारणा में समय के साथ बदलाव आया और कालांतर में इस तरह का मेला पुस्तक प्रेमियों के लिए उत्सव सरीखा बन गया, जिसका वे शिद्दत से इंतज़ार करने लगे. पश्चिम की यह अवधारणा जब हिंदुस्तान आई तो पुस्तक मेले की जो तस्वीर उभरी, उसके केंद्र में सिर्फ़ पाठक ही थे. किताबों के प्रकाशन अधिकार के कारोबार को न तो मंच मिला और न ही प्रकाशकों के स्तर पर इसके लिए कोई गंभीर कोशिश की गई. भारत में विश्व पुस्तक मेले का आयोजन नेशनल बुक ट्रस्ट के ज़िम्मे है और हर दो साल पर दिल्ली के प्रगति मैदान में एनबीटी इसे आयोजित करती है. इस वर्ष भी जनवरी की तीस तारीख़ से फरवरी के पहले हफ़्ते तक विश्व पुस्तक मेला आयोजित है. भारत में बदले हुए चरित्र के साथ आयोजित होने वाले विश्व पुस्तक मेले को लेकर पहले प्रकाशकों और पाठकों में ख़ासा उत्साह रहता था, लेकिन समय के साथ लगातार इस उत्साह में कमी आती गई. दिल्ली के विश्व पुस्तक मेले को मैं लगभग बीस वर्षों से देख रहा हूं. हर बार इसमें पाठकों और प्रकाशकों के उत्साह में ह्रास ही होता दिख रहा है. पुस्तक मेले का आयोजन करने वाली संस्था पर यह ज़िम्मेदारी होती है कि वह पाठकों या पुस्तक प्रेमियों के बीच पुस्तक मेले को लेकर जागरूकता या फिर एक उत्साह पैदा करे लेकिन, दिल्ली के विश्व पुस्तक मेले को लेकर एनबीटी न तो कोई माहौल बना पा रही है और न ही लोगों तक जानकारी पहुंचाने का उसका कोई प्रयास दिख रहा है. पिछले पुस्तक मेले में रूस को अतिथि देश का दर्ज़ा दिया गया था. लेकिन उस वक़्त एनबीटी की बेहद भद पिटी थी, जब रूस के प्रकाशकों ने मेला ख़त्म होने के पहले ही अपना बोरिया बिस्तर समेट लिया था. यह एनबीटी की अदूरदर्शिता का एक नमूना भर है.

लेकिन हिंदी में कुछ प्रकाशक ऐसे हैं, जिनमें अब भी विश्व पुस्तक मेले को लेकर उत्साह बचा है और वे कुछ नया कर उसे मेले में पाठकों के सामने लाने की जिद ठाने बैठे हैं. कुछ ऐसे प्रकाशक भी हैं, जो बजाप्ता योजना बनाकर किताबों की तैयारी करवा रहे हैं. कुछ ऐसे लेखक भी हैं, जो अपनी किताब मेले में लाने की योजना पर काम कर रहे हैं. नामवर सिंह हमारे वक़्त के हिंदी के सबसे बड़े लेखक हैं, लेकिन उन पर लगातार यह आरोप लगता रहा है कि पिछले सत्ताइस साल से उन्होंने कुछ नहीं लिखा. उनकी आख़िरी किताब दूसरी परंपरा की खोज 1982 में छपी थी. उसके बाद से नामवर सिंह ने अपने आप को वाचिक परंपरा में सिद्ध कर लिया और लेखन से विरक्त हो गए. लेकिन हिंदी में उनके आलोचकों के साथ-साथ प्रशंसकों को भी इस बात का इंतज़ार रहा कि नामवर शायद लेखन की ओर लौटें. विश्व पुस्तक मेले के अवसर पर उनका यह इंतज़ार ख़त्म होने जा रहा है. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से नामवर सिंह की एक साथ छह किताबें प्रकाशित हो रही हैं. इस बात पर सहसा विश्वास नहीं होगा और लोग कहेंगे कि नामवर सिंह के भाषणों के संकलन प्रकाशित हो रहे होंगे. यह सही है कि इन छह किताबों में से दो उनके भाषणों के संकलन हैं, लेकिन बाक़ी चार उनकी ख़ुद की लिखी किताबें हैं. इस विश्व पुस्तक मेले की यह सबसे बड़ी उपलब्धि होगी, जब पाठकों को एक साथ नामवर सिंह की छह किताबें ख़रीद कर पढ़ने का मौक़ा मिलेगा. लेकिन देखना यह होगा कि इन किताबों के प्रचार-प्रसार और उसे पाठकों तक पहुंचाने के लिए प्रकाशक कोई कोशिश करता है या नहीं. नामवर सिंह के अलावा एक और आलोचक की किताब आ रही है, लेकिन वह आलोचना की नहीं, बल्कि कविता की किताब है. यह आलोचक हैं नंद किशोर नवल, जिनका सियाराम तिवारी के साथ संयुक्त रूप से कविता संग्रह द्वाभा प्रकाशन संस्थान से छप रहा है. नंद किशोर नवल की आलोचनात्मक दृष्टि ठीकठाक है, लेकिन मन के कोने-अंतरे में कवि होने की लालसा उन्हें बार-बार कविता संग्रह छपवाने की ओर प्रेरित करती है.

पूरे देश में पुस्तक मेलों का पाठक और प्रकाशक दोनो इंतज़ार करते हैं .

विश्व पुस्तक मेले के मौक़े पर जो एक बेहद विस्फोटक किताब आ रही है, वह है इंदौर की लेखिका कृष्णा अग्निहोत्री की. सामयिक प्रकाशन, दिल्ली से कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा दो खंडों में प्रकाशित हो रही है, लगता नहीं है दिल मेरा एवं और...और...औरत. कृष्णा अग्निहोत्री अपने जमाने की बेहद ख़ूबसूरत और बिंदास लेखिका थीं. अपनी इस आत्मकथा में उन्होंने दिल्ली के साहित्यकारों-संपादकों के साथ अपने हर तरह के रिश्तों पर बेहद बेबाक़ी और साहसपूर्वक लिखा है. कृष्णा जी जिस तरह स्वभाव से बिंदास थीं, वही बिंदासपन इस आत्मकथा में भी परिलक्षित हो सकता है. संभव है कि एक रचना के तौर पर भले ही साहित्य में इसे गंभीरता से न लिया जाए, लेकिन इसमें स्त्री लेखिका और पुरुष लेखक के संबंधों का जो द्वंद्व या फिर छल-छद्म है, उससे एकबारगी साहित्य जगत में तो हड़कंप मचेगा ही. हिंदी में लेखक-लेखिका संबंधों पर कलम की जगह तलवार लेकर लिखने वाली कुछ लेखिकाओं को इस किताब से एक नई जीवन शक्ति प्राप्त होगी और वे फिर से पुरुषों को कठघरे में खड़ा करने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ेंगी. इन किताबों के अलावा कई प्रकाशकों ने साहित्य से इतर हटकर भी कुछ छापने की कोशिश की है. वाणी प्रकाशन ने अमेरिकी अर्थशास्त्री पॉल कुर्गमैन की किताब का पत्रकार अरविंद मोहन से अनुवाद करवाया है. मंदी के दौर में यह एक अहम किताब साबित हो सकती है.

लेकिन किताबों के अलावा जो सबसे बड़ा और अहम सवाल है, वह यह कि क्या इस पुस्तक मेले को पाठक तवज्जो देंगे. क्या एनबीटी पाठकों के बीच बाक़ी बचे दिनों में उत्साह पैदा करने में कामयाब हो पाएगी. अगर ऐसा होता है तो प्रकाशकों और लेखकों के लिए यह संतोष की बात होगी. लेकिन, अगर ऐसा नहीं हो पाता है तो विश्व पुस्तक मेले के औचित्य पर ही बड़ा प्रश्नचिन्ह लग जाएगा.

*(लेखक आईबीएन7 से जुड़े हैं)*

feedback@chauthiduniya.com

पुस्तक अंश

# मुन्नी मोबाइल

गतांक से आगे

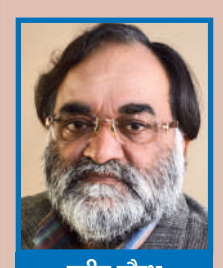

प्रदीप सौरभ

गुजरात का मीडिया दो भागों में बंट गया था. एक दंगों के गुनहगारों की पहचान कर रहा था, तो दूसरा दंगाइयों की हौसलाअफजाई करने में मशगूल था. मीडिया का यह हिस्सा आग में घी डालने का काम पूरी शिद्दत से कर रहा था. अफवाहें फैलाने में दंगाइयों से बड़ी भूमिका स्थानीय मीडिया की थी. गुजराती लोक समाचार और जनसंदेश में प्रतिस्पर्धा थी. यदि गुजराती लोक समाचार एक दिन यह छापता कि मुसलमानों ने छह हिंदू लड़कियों के वक्ष काट लिए, तो जन संदेश एक दर्ज़न हिंदू लड़कियों के साथ बलात्कार की ख़बर छाप देता था. हिंदू ब्रिगेड के मुखपत्र बन गए थे ये अख़बार. दंगा उनके व्यवसायिक हितों को बख़ूबी पूरा कर रहा था. इनकी प्रसार संख्या भी बढ़ रही थी. सरकार का भी इन्हें समर्थन प्राप्त था. इनकी ख़बरों की सत्यता पर सवालिया निशान लगाते हुए इन अख़बारों के ख़िलाफ़ दंतविहीन संस्था प्रेस काउंसिल में भी शिक़ायतें की गईं. लेकिन कुछ नहीं हुआ.

इन अख़बारों के पत्रकारों का हिंदू ब्रिगेड के मंचों पर अभिनंदन किया जाने लगा. वहीं दंगाइयों की ख़बर ले रहे मीडिया पर हमले तेज होने लगे. दंगा विरोधी मीडिया ने गुजरात के बाहर दंगों के सच को बख़ूबी रखा. देश में गुजरात सरकार और मोदी के ख़िलाफ़ माहौल बनने लगा. केंद्र की वाजपेयी सरकार पर भी हमले तेज होने लगे. मोदी को हटाने की मांग होने लगी.

गुजरात दंगों के ख़िलाफ़ अभियान चला रहा मीडिया भी इंसानियत की सेवा नहीं कर रहा था. वह भी अपने व्यवसायिक हितों को साध रहा था. उसके पाठक वैसा ही पढ़ना चाहते थे. दंगों का विरोध करने वाले अख़बार भी मूल्यों के प्रति निष्ठावान हों, ऐसा नहीं था. औरत की नंगी तस्वीरें पेश करना उनकी प्राथमिकताओं में था. बाज़ार की शक्तियों के आगे वह भी नतमस्तक था. उसके अपने संस्थानों में पत्रकारों और ग़ैर पत्रकारों की स्थिति अच्छी नहीं थी. बड़ी संख्या में कर्मचारियों को रातोंरात निकाल देना उनके शगल में शामिल है.

असल में आज़ादी के बाद विकसित हुआ देश का मीडिया बाज़ार की रखैल बन गया. उसके पास न तो कोई सपना है और न ही समाज के प्रति कोई प्रतिबद्धता. वह एक उद्योग में तब्दील हो चुका है. लाभ कमाना और सत्ता के गलियारों में दबाव डालना उसका एकमात्र उद्देश्य है. टीवी चैनलों में तो और दुर्गति है. नासमझ टाइप के लोग जमा हो गए हैं. दूसरों का स्टिंग ऑपरेशन करने वाले चैनलों का स्टिंग कर दिया जाए तो जलजला आ जाए. एंकर बनने के लिए लड़कियों को क्या-क्या नहीं करना पड़ता है. इसके लिए बॉस के साथ शराब पीने से लेकर बिस्तर गर्म करने तक कोई भी क़ीमत चुकानी पड़ती है. बॉस का अगर किसी पर दिल आ गया है तो उसे आत्मसमर्पण करना ही होगा. वरना कई-कई महीनों नाइट ड्यूटी करनी पड़ेगी. रातोंरात यहां दस-दस हज़ार के इंक्रीमेंट हो जाते हैं. कल की आई लड़की आपकी बॉस बन सकती है. बॉस जो चाहे वह सब सच. चैनलों की चमक के चक्कर में तो कई लड़कियां पहले से ही सोचकर आती हैं कि उन्हें अपनी ख़ूबसूरती को अपनी तरक़्क़ी के लिए इस्तेमाल करना है. इसमें उन्हें नैतिकता और अनैतिकता कुछ नहीं दिखती है. कुछ जो सोच कर नहीं आती हैं, उन्हें तरक़्क़ी का यह शॉर्टकट जल्दी समझ आ जाता है. लेकिन कुछ समझौता नहीं करती हैं. नतीजतन वे ज़्यादा दिन चैनल में नहीं रहती हैं या फिर उन्हें नेपथ्य में ऐसा काम मिलता है, जो उनकी योग्यता से बहुत कम होता है.

चैनलों में इतनी व्यस्तता है कि सुबह-दोपहर का फ़र्क़ ही नहीं रह जाता है. कितने तो अपने घरों में सिर्फ़ सोने के लिए आते हैं. इसलिए एक नई प्रथा चल पड़ी है यहां. अधिकांश न्यूज़मैन और अन्य टेकनिकल स्टॉफ आपस में ही शादी कर लेते हैं और चैनल को ही अपना घर मान लेते हैं. लेकिन ऐसी शादियों की सफलता का ग्राफ काफ़ी नीचा है. यही सब वजह है कि अब न्यूज़ चैनलों में ख़बरों के अलावा सब कुछ मिल जाता है. नाग-नागिन के प्यार से लेकर भुतही हवेली के जिन्न का सच आदि-आदि. बावजूद इस सड़ांध के गुजरात दंगों के दौरान राष्ट्रीय अख़बारों की कारगर भूमिका को नकारा नहीं जा सकता है.

***अगले अंक में जारी***

feedback@chauthiduniya.com

# कुंभ के नाम पर सरकारी झूठ पर मीडिया की मुहर

डॉ.कमलकांत बुधकर

आज वसंत पंचमी है. हरिद्वार में सरकारी तौर पर आज कुंभ का तीसरा स्नान है. कुंभ स्नान कहकर यहां मकर संक्रांति और मौनी अमावस्या को ही नहीं, आज के वसंत पंचमी पर्व को भी कुंभ स्नानों की सूची में डाल दिया है शासन-प्रशासन ने. प्रदेश में सरकार भी भाजपा की है, जिसे हिंदूवादी होने और हिंदू परंपराओं का रक्षक होने का गौरव है. पर विडंबना यह है कि इसी भाजपा के शासनकाल में यह जो उत्तराखंड का पहला महाकुंभ आयोजित हो रहा है, इसमें सरकार मीडिया को जो सूचनाएं परोस रही है, वे ही हिंदू परंपराओं के विरुद्ध हैं. इसका प्रत्यक्ष उदाहरण कुंभ स्नान की तिथियों के प्रचार में देखने को मिल रहा है.

परंपरा की सच्चाई यह है कि विभिन्न कुंभ क्षेत्रों पर महाकुंभ निश्चित ग्रह-नक्षत्रों की उपस्थिति में ही संपन्न होता है. बार-बार कहा, बताया और लिखा जा रहा है कि हरिद्वार में कुंभयोग तब होता है, जब वृहस्पति यानी गुरु कुंभ राशि में हो और सूर्य मेष राशि में आ जाए, पर न शासन की समझ में आ रहा है और न ही प्रशासन की. आज की स्थिति यह है कि दिसंबर 2009 के तीसरे सप्ताह में गुरु तो एक साल के लिए कुंभ राशि में आ चुके हैं, पर सूर्य को मेष राशि में आने में अभी ढाई महीने से भी अधिक का समय है, क्योंकि 14 अप्रैल से पहले सूर्य मेष राशि में नहीं आएंगे. यानी उस दिन तक कुंभ का वास्तविक योग बनेगा ही नहीं.

परंपरा और ज्योतिषीय व्यवस्था की बात कहें तो 14 अप्रैल को ही कुंभ का अमृत योग बनेगा और जब तक सूर्य मेष राशि में रहेंगे यानी 13 मई 2010 तक यह अमृतयोग बना रहेगा. लेकिन, मज़े की बात यह है कि तब तक सरकारी तौर पर कुंभ ख़त्म हो चुकेगा. कुंभ का सरकारी कैलेंडर 14 अप्रैल को कुंभ का मुख्य स्नान बताकर अंतिम स्नान भी बता रहा है. जबकि यह आधा सच है. वास्तविक कुंभ तो शुरू ही 14 अप्रैल से होगा. हां, शिवोपासक दशनामी साधुओं ने महाशिवरात्रि पर जमात के साथ गंगा स्नान की परंपरा डाल रखी है. उसी के साथ-साथ चैत्र की अमावस्या पर भी ये लोग जमात में शाही स्नान करते हैं, पर जानते ये भी हैं कि असली कुंभ तो नया हिंदू वर्ष शुरू होने के बाद ही आएगा. सरकार और कुंभ अधिष्ठान को अगर कुंभ काल का प्रचार करना ही था तो कम से कम प्रथम शाही स्नान से उसे मानती. उत्तराखंड की सरकार भी हड़बड़ी में है और कुंभ मेला प्रशासन भी. दोनों कुंभ का यश और पुण्य जनता से भी पहले कमा लेना चाहते हैं. इसीलिए असली कुंभ से पहले ही प्रशासन कुंभ स्नान कहकर दस तिथियों की घोषणा कर चुका है. सारा देश, देश के सारे ज्योतिषी, धर्मजगत और सारा परंपरापोषक समाज भौचक है कि हरिद्वार में हो क्या रहा है. घोषित रूप से हिंदुत्व समर्थक सरकार उनकी परंपराओं के साथ कैसा खिलवाड़ कर रही है. नाम कमाने की होड़ में ख़ुद सरकार के विज्ञापनों में छापा गया कि हरिद्वार में कुंभकाल शुरू हो गया है.

इस अति प्रचार की सरकारी भूख ने हिंदू परंपराओं को ही निगल लिया है. और, विडंबना तो यह है कि इस बारे में धर्माधिकारीगण, हरिद्वार के ब्राह्मण, पंडे-पुजारी भी कुछ कहने से बच रहे हैं. काशी-प्रयाग के विद्वज्जनों में बेचैनी है. इन पंक्तियों के लेखक के पास भी दूरभाष पर विरोध के स्वर आए हैं, पर वे सब नक्कारखाने में तूती की आवाज़ बनकर रह गए हैं. झूठ प्रचारित हो रहा है और झूठ ही प्रसारित किया जा रहा है. प्रचार और प्रसार की ठेकेदार हमारी प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में भी होड़ लगी है कि कौन कितना बड़ा झूठ कितनी जल्दी दिखाए. स्वाभाविक है कि टीवी चैनलों ने प्रिंट को पछाड़ रखा है असत्य के प्रचार-प्रसार में .

## चर्चा कुंभनगर की

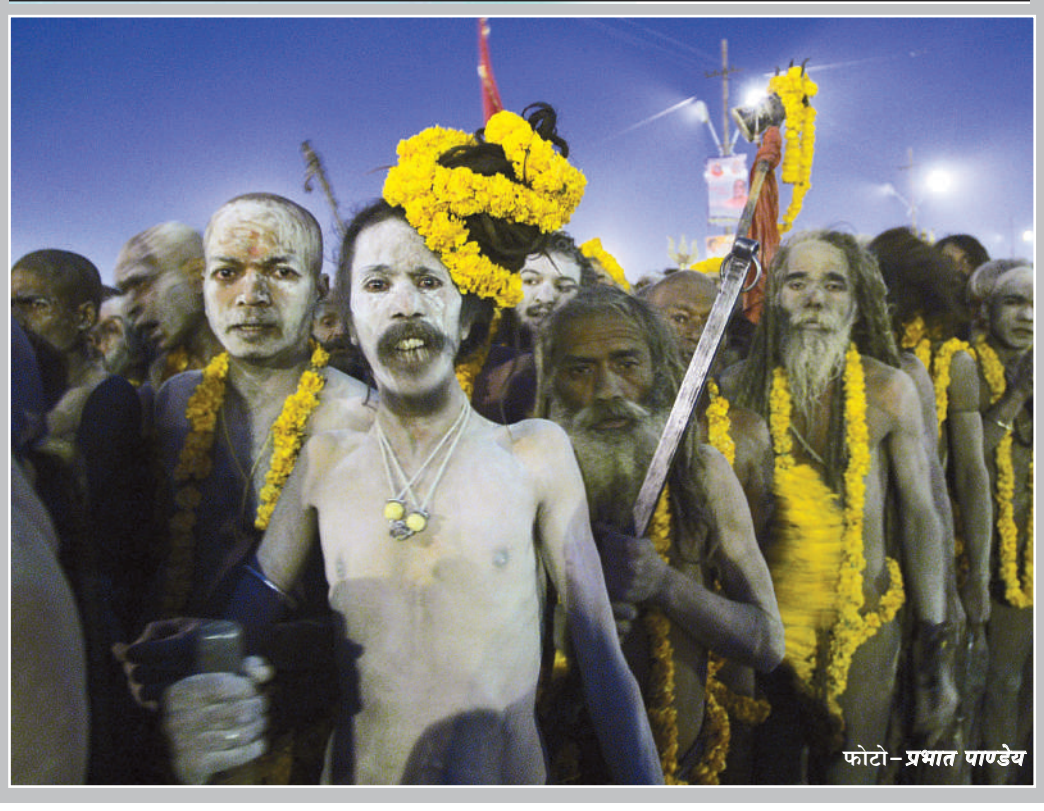

फोटो- प्रभात पाण्डेय

kk@budhkar.in

सोनी इंडिया की ओर से 22 कैमरों की नई सीरीज़ लांच की गई है, जिसमें कई पाथ ब्रेकिंग टेक्नोलॉजी का संगम है.



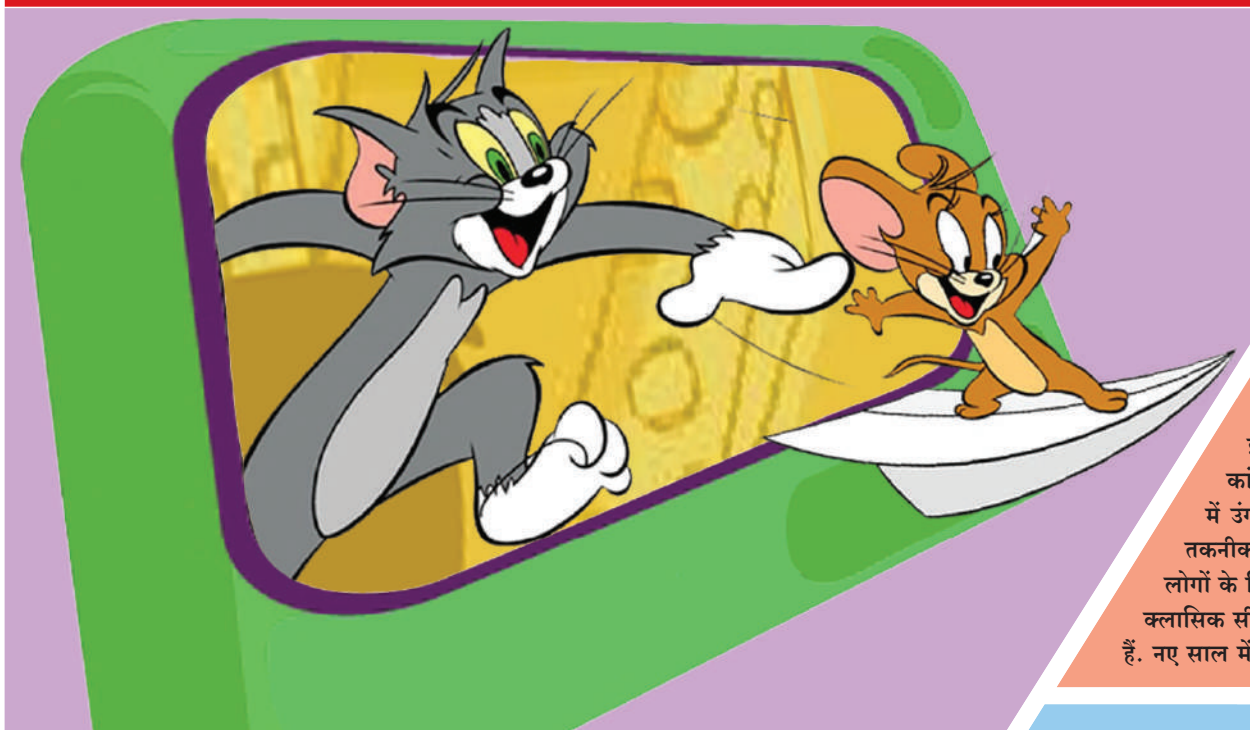

# चूहा, बिल्ली, चोर, पुलिस

कार्टून नेटवर्क बच्चों में पसंद किया जाने वाला सबसे लोकप्रिय चैनल है. इस चैनल पर वैसे तो कई कार्यक्रमों की सीरीज़ चर्चित रही है लेकिन अगर बच्चों से पूछा जाए कि आपका पसंदीदा कार्टून प्रोग्राम कौन सा है? तो ज़्यादातर बच्चों का जवाब होगा टॉम एंड जेरी. इन दोनों कॉमिक कैरेक्टर ने दुनिया भर के बच्चों को अपना दीवाना बना रखा है. इसी दीवानगी को देखते हुए यह चैनल कार्टून कैरेक्टर टॉम एंड जेरी को लेकर नई कार्टून सीरीज़ शुरू कर रहा है. कार्टून नेटवर्क चैनल पर हर रोज़ बच्चों को हंसाने–गुदगुदाने वाली कहानियों के इस क्रम का नाम होगा, *चूहा बिल्ली चोर पुलिस*. इसमें टॉम और जेरी की कहानियों को बच्चे नए अंदाज़ में देख सकेंगे. प्यारी सी बिल्ली टॉम अवसरवादी है और हर मौक़े का ख़ूब फ़ायदा उठाती है. नन्हा सा चूहा जेरी अपनी नन्हीं सी दुनिया में बेहद ख़ुश रहता है, पर कब तक? जब तक जेरी या कोई और उसकी ज़िंदगी में दखलंदाज़ी न करे. लेकिन जब उससे कोई पंगा लेता है तो वह उसे अच्छा सबक सिखाता है. होता यह है कि टॉम व जेरी एक दूसरे के साथ टकरा जाते हैं और हास्यास्पद हालात पैदा हो जाते हैं. टॉम व जेरी की मीठी नोकझोंक एवं प्यार की कहानियां बच्चों द्वारा काफ़ी पसंद की जाती हैं और बड़ों में भी लोकप्रिय हैं. चूहा और बिल्ली की अठखेलियों वाली यह सीरीज़ इसी महीने शुरू होगी, जिसका प्रसारण सोमवार से गुरुवार तक शाम छह बजे से किया जाएगा.

# एमएसआई के नए लैपटॉप

माइक्रो स्टार इंटरनेशनल (एमएसआई) ने भारतीय बाज़ार में लैपटाप की नई सीरीज उतारने की घोषणा की है. इसके तहत कंपनी 5 श्रेणियों में 14 नए मॉडल पेश करेगी. इस स्टाइलिश सीरीज में ई–सीरीज इंटरटेनमेंट नोटबुक, हल्के व फैशनेबल एक्स स्लिम सीरीज एवं अल्ट्राथिन और अल्ट्रा स्टाइलिश यू सीरीज विंड नोटबुक शामिल हैं. एमएसआई के प्रबंध निदेशक टॉनी यांग ने बताया कि आज की डिजिट जीवन शैली जिस तरह से बढ़ रही है, उसमें इस तरह की पोर्टेबल कंम्प्यूटिंग जीवन के हर पहलू में आवश्यक होती जा रही है. अगर गेम सीरीज की बात करें तो जी–सीरीज नोटबुक जीटी 640 और जीटी 740 में इंटेलफ्लैट स्क्रीन 15.4 और 17 इंच है , जिसमें नवीनतम इंटेल सीआई–7 क्वैड कोर प्रोसेसर हैं. जबकि इंटरटेनमेंट सीरीज के मॉडल इतने कांपेक्ट हैं कि इनका वजन सिर्फ़ 2 किलोग्राम है. ईडीएस एरगोनोमिक्स कीबोर्ड में उंगलियों और कलाइयों पर भार कम पड़ता है. इतना ही नहीं, इसमें ईको इंजन तकनीक भी है, इससे बिजली की बचत होती है. इसके अलावा कंपनी के पास पेशेवर लोगों के लिए नई क्लासिक सीरीज और विंड यू सीरीज भी है. गेमिंग, इंटरटेनमेंट और क्लासिक सीरीज की क़ीमतें क्रमश: 88,000, 38,000 और कंफीग्रेशन के आधार पर हैं. नए साल में कंप्यूटिंग फील्ड का इससे बड़ा तोहफ़ा और क्या हो सकता है.

# अब एफिल आपकी मुट्ठी में

चौंक गए ना! दुनिया भर में मशहूर एफिल टॉवर अब आपकी मुट्ठी में और जेब होगी. कैसे? चलिए आपको बताते हैं. हाल ही अंतरराष्ट्रीय मोबाइल कंपनी मोबी फ्रांस और सोनी एरिक्शन ने हाथ मिलाया है. इसी पार्टनरशिप के तहत दोनों कंपनियों ने एक सेल फोन का कांसेप्ट विकसित किया है, जिसे फ्रेंच लक्जरी यानी एफएल कहा जा रहा है.इस मोबाइल का लुक एफिल टावर की डिजाइन से मिलता–जुलता बनाया गया है, जो कि फ्रांस का प्रसिद्ध लैंडमार्क है. सबसे ख़ास बात यह है कि इस फोन को फ्रांस के स्वतंत्रता दिवस के मौक़े पर डिजाइन किया गया है. यह एफएल फोन डिजाइन और फीचर्स के लिहाज़ से सोनी सीरीज का सबसे बेहतरीन फोन कहा जा सकता है. पहली नज़र में आपको एकबारगी लगेगा कि यह कोई फोन नहीं, बल्कि एफिल टॉवर का डमी लुक है. सिर्फ़ लुक ही नहीं, इसके फीचर्स भी लाजवाब हैं. इसका डिस्प्ले साइज पूरे मॉडल की लंबाई के बराबर है. इस पर वीडियो व तस्वीरों को अच्छी क्वालिटी में देखने के साथ–साथ आप हाई रेजोल्यूशन के गेम्स का भी आनंद ले सकते हैं. इस सेलफोन का कैमरा भी 7.2 मेगापिक्सल का है. साउंड के मामले में वैसे भी सोनी की अलग पहचान है. इसके दोनों साइड दो स्पीकर इनबिल्ट किए गए हैं, जो होम थियेटर का आनंद देते हैं. इसमें वे सारी ख़ूबियां हैं, जो एक बेस्ट मॉडल में ज़रूरी हैं. चाहे वह रेडियो, विशेष वेब इंटरनेट टूल्स, ब्लूटूथ और डब्ल्यूएलएन हों या कनेक्टिविटी से जुड़ी आउटबिल्ट सुविधाएं. आप इसकी क़ीमत के बारे में सोच रहे होंगे. इसके लिए आपको थोड़ा इंतज़ार करना पड़ेगा, क्योंकि कंपनी के प्रवक्ता बताते हैं कि इसकी क़ीमत भी इसकी डिजाइन की तरह किसी ख़ास दिन ही घोषित की जाएगी.

फोटो–*सुनील मल्होत्रा*

# कैमरों की नई रेंज

अब आपको क्लोजअप पिक्चर लेने के लिए ऑब्जेक्ट के बहुत क़रीब जाने की ज़रूरत नहीं है. सोनी इंडिया की ओर से 22 कैमरों की नई सीरीज़ लांच की गई है, जिसमें कई पाथ ब्रेकिंग टेक्नोलॉजी का संगम है. भारतीय बाज़ार में अच्छी और नई टेक्नोलॉजी के कैमरों को लांच कर सोनी ने ग्राहकों के लिए किफ़ायती दामों में विकल्पों का नया द्वार खोल दिया है. कंपनी द्वारा लांच किए गए 22 साइबर शॉट प्रोडक्ट्स में साइबर शॉट एचएक्स–1, साइबर शॉट एस सीरीज़, टी सीरीज, डब्ल्यू सीरीज़ आदि शामिल हैं. स्वीप पनोरमा और हाई डेफिनेशन मूवी टेक्नोलॉजी इन कैमरों की ख़ूबी है. इसके अलावा शार्प और स्पष्ट पिक्चर के लिए 14 मेगा पिक्सल रिजोल्यूशन ज़्यादातर कैमरों में उपलब्ध है. स्वीप पनोरमा टेक्नोलॉजी से ऑब्जेक्ट अपेक्षाकृत बड़ा मिलता है, जिससे अल्ट्रा वाइड पिक्चर्स भी ली जा सकती हैं. यह तकनीक हाई स्पीड बस्ट ऑफ फ्रेम के सिद्धांत पर काम करती है, जिससे कैमरे को साइड टू साइड और टॉप टू बॉटम स्वीप करने पर भी पिक्चर ख़राब नहीं आती है. नई 720पी/1080पी हाई डेफिनेशन मूवी शूटिंग का विकल्प यूजर्स को 1280/720 पिक्सल रिजोल्यूशन का वीडियो 30 एफपीएस पर शूट करने की सुविधा देता है. स्वीप पनोरमा और हाई डेफिनेशन मूवी तकनीक के साथ साइबर शॉट कैमरों की यह रेंज 12,990 रुपये से लेकर 29,990 रुपये तक उपलब्ध है. कंपनी के प्रबंध निदेशक ने बताया कि इन कैमरों को लांच करने के पीछे उद्देश्य है अपने ग्राहकों को लुभाना और उन तक नई तकनीक पहुंचाना. ये कैमरे निश्चित तौर पर भारतीय ग्राहकों को पसंद आएंगे.

# जूतों का इटेलियन कलेक्शन

आजकल का दौर फैशन का है. आमतौर पर कहते हैं कि फैशन के इस दौर में गारंटी की इच्छा न करें. यह बात काफी हद तक सही भी है. लेकिन इस दौर में गारंटी के बजाय स्टाइल की गारंटी मिलती है. हर बड़ा ब्रांड दूसरे ब्रांड से बेहतर और स्टाइलिश डिजाइन बाज़ार में उतारना चाहता है. इसके लिए वह हर उस चीज को मॉडर्न अवतार बनाता है, जो पहले स्टाइल स्टेटमेंट नहीं माना जाता था. अब विवेरो कंपनी को ही लीजिए. विवेरो एक अंतरराष्ट्रीय ब्रांड है, जिसे क्लॉथिंग बिजनेस में एक ख़ास मुक़ाम हासिल है. यूं तो यह कंपनी शर्ट, ट्राउजर्स एवं सूट के प्रोडक्शन में पूरे यूरोप और इटली में प्रसिद्ध है, लेकिन युवाओं में फैशन के बढ़ते क्रेज़ को देखते हुए विवेरो ने इस बार अपनी छवि से अलग काम किया है. आजकल क्लॉथिंग के अलावा पुरुष और महिलाओं में जूतों और सैंडल्स के प्रति दिलचस्पी बढ़ती जा रही है. इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए विवेरो ने जूतों और सैंडल्स का डिजाइन कलेक्शन भारतीय बाज़ार में उतारा है. इस कलेक्शन में आपको स्टाइलिश और आरामदायक सैंडल्स, लोफर्स, क्लोज्ड शूज और कई बेहतरीन मॉडल मिल जाएंगे. इन सबकी ख़ासियत यह है कि यह सारा कलेक्शन इटेलियन लेदर से बना हुआ है. इटेलियन लेदर से बने उत्पादों की पूरी दुनिया में मांग है. इसमें आप चुन सकते हैं व्हाइट लोफर्स. ये नैप्पा लेदर से बने हैं. डिजाइन ख़ूबसूरत होने के साथ–साथ ये पहनने में भी आरामदायक हैं. रही बात क़ीमत की, इनके लिए आपको लगभग 6250 रुपये चुकाने पड़ेंगे. एक वक़्त था, जब इन जूतों की ख़रीददारी के लिए आपको अपने विदेशी दोस्तों पर निर्भर रहना पड़ता था. लेकिन अब देश में कई शोरूम्स में यह उपलब्ध हो गए हैं.

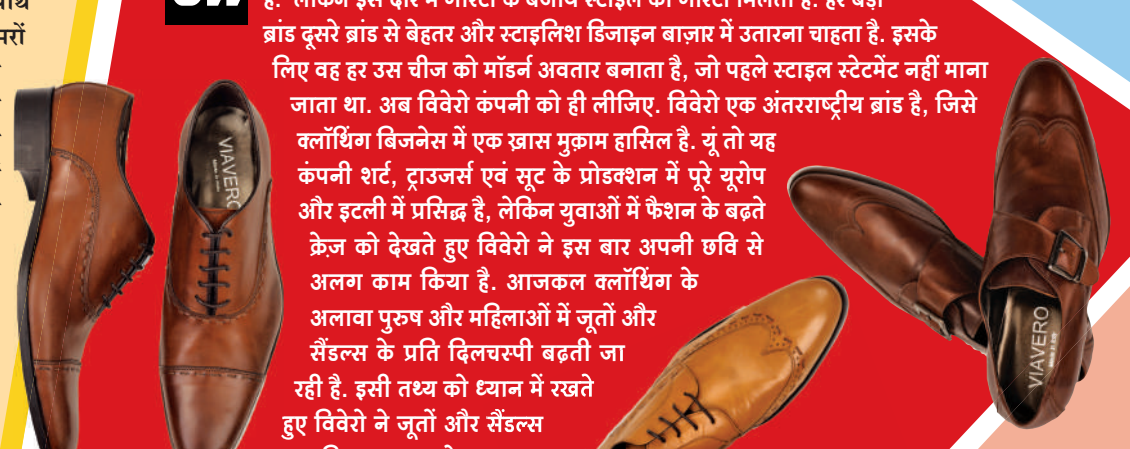


# मर्सीडीज़ बेंज़ की नई ई-सीरीज़

फोटो–*पीटीआई*

मर्सीडीज़ बेंज़ भारत में अपने पांव और भी मज़बूती से जमाने की कोशिश में लगी है. इसी क्रम में कंपनी ने अपनी जानी–मानी ई–क्लास मॉडल सीरीज में दो नए मॉडल मर्सीडीज़ बेंज़ ई–250 वी6 और मर्सीडीज़ बेंज़ ई–250 सीडीआई बीई लांच किए हैं. इन नए मॉडलों की क़ीमत कंपनी ने ग्राहकों को ध्यान में रखकर तय की है. इसमें ई–250 वी6 की क़ीमत 41.13 लाख रुपये है तो ई–250 सीडीआई बीई की क़ीमत 39.87 लाख रुपये है. मर्सीडीज़ बेंज़ इंडिया के सीईओ डॉ. विल्फ्रेड एल्बर कहते हैं कि इन गाड़ियों को ख़ासतौर से उन ग्राहकों को ध्यान में रखकर लांच किया गया है, जो विवेकपूर्ण तरीक़े से पैसा ख़र्च करने में यक़ीन रखते हैं. उनके मुताबिक़ अगर ग्राहक इन मॉडलों पर अपनी कमाई से लाखों रूपए निकालकर हमें देता है तो हमारा भी फ़र्ज़ बनता है कि हम उनको ऐसे फीचर्स और सुविधाएं मुहैया कराएं ताकि उन्हें लगे कि उनका पैसों की पूरी क़ीमत वसूल हो गई है. इन दोनों ई–क्लास मॉडल्स को ड्राइविंग, परफॉर्मेंस एवं लुक्स के आधार पर तो बेहतर बनाया गया है पर इसके अलावा वातावरण को नुक़सान न पहुंचाने वाली ख़ूबियों की वजह से सराहा गया है. बैठने की शानदार जगह, लक्ज़री, सुरक्षा और ड्राइविंग के लिहाज़ से ई–क्लास मॉडल्स पिछले 50 वर्षों से लोकप्रिय हैं.

नई ई–क्लास गाड़ियों में नई तकनीकों का समागम है. इसमें इंटेलिजेंट लाइटिंग सिस्टम, एडवांस पार्किंग गाइडेंस आदि फीचर्स मौजूद हैं. इसके फीचर्स न सिर्फ़ देखने, महसूस करने और ख़तरे से सावधान करने में सक्षम हैं, बल्कि किसी प्रकार के एक्सीडेंट से बचाने या उसके असर को कम करने में भी सहायक हैं. भारत में मर्सीडीज़ बेंज़ की ई–क्लास सीरीज लांच करने का प्रयोग वर्ष 1996 में किया गया था. कंपनी अब तक यहां 10,000 ई–क्लास मर्सीडीज़ बेंज़ बेच चुकी है. सिर्फ़ पिछले चार महीनों में ई–350 और ई–350 सीडीआई मॉडल के 450 यूनिट बिक चुके हैं. यह आंकड़े ज़ाहिर करते हैं कि भारत में कंपनी द्वारा किया गया प्रयोग सफल रहा है और जल्दी ही मर्सीडीज़ भारतीय बाजार में अपनी बेहतर पकड़ बनाने में कामयाब हो जाएगी.

# स्टार लव वॉच

मोहब्बत करने वालों का स्पेशल दिन क़रीब है और सभी प्रेमियों के दिल में यही खयाल आ रहा होगा कि वेलेंटाइंस डे पर अपनी महबूबा को क्या गिफ्ट किया जाए. प्रेमियों के ऐसे सवालों का हल निकालते हुए अंतरराष्ट्रीय कंपनी जेनीथ ने भारतीय बाज़ार में वेलेंटाइन स्पेशल वॉच एल प्रिमेरो–4021 लांच की है. सुर्ख़ लाल रंग की स्टार लव वॉच पाकर आपकी ऐंजल कितनी ख़ुश होंगी, इसका ख्याल ही आपको रोमांचित कर रहा होगा. इस घड़ी में दिल ख़ुश कर देने वाली कई ख़ासियतें हैं, जैसे ख़ूबसूरती के लिहाज़ से इसका रंग और डिजायन. स्टेनलेस स्टील केस में 13 अलग–अलग साइजों में जड़े 64 टॉप वेसेटन फुल कट हीरे बेहद ख़ूबसूरत लगते हैं. केस पर चढ़े हुए कर्व सफायर ग्लास में दोनों तरफ़ से एंटी रिफ्लेक्शन ट्रीटमेंट दिया गया है. जेनीथ स्टार्स के साथ केस को ढकता हुआ पारदर्शी ग्लास घड़ी को शानदार लुक देता है. स्टाइलिश होने के साथ ही यह घड़ी काफ़ी सहूलियत भी देती है. इसकी वाटर रेसिस्टेंट क्षमता 30 मीटर है और यह 50 घंटे का पावर रिजर्व देती है. घड़ी के डायल में अंक 3 के पास लगी छोटी सी मिनटों वाली घड़ी 30 मिनट के काउंटर को दिखाती है. इसके अलावा इस घड़ी में एक सेकेंड के दसवें भाग को भी देखा जा सकता है. बतौर प्रेम की निशानी इस घड़ी में ख़ासतौर से दो दिल बनाए गए हैं. आंड पैटर्न पर बनी इस घड़ी में अंक 10 के पास दिल के आकार की जगह खुली छोड़ दी गई है और इसके सेकेंड की सुई के छोर पर एक छोटा सा दिल रखा गया है. डायल में मौजूद खुले दिल से इस घड़ी के दिल को दिखाया गया है. लेदर स्टैप वाले इस विशेष लव स्टार वॉच की क़ीमत 5000–10,000 रुपये के बीच है.

विज्ञापन हेतु संपर्क करें : email : advt@chauthiduniya.com

गौतम गंभीर की बल्लेबाज़ी का अंदाज़ और मैदान पर खिलाड़ियों के साथ उनके बेहतर तालमेल से पता चलता है कि गंभीर एक बेहतरीन कप्तान साबित हो सकते हैं.

# सहवाग नहीं, गौतम गंभीर को कप्तान बनाइए

चंदन कुमार

भारतीय क्रिकेट टीम की कप्तानी संभालना कांटों का ताज पहनने से कम नहीं है. इस कप्तानी को संभालने वाले कई खिलाड़ियों ने सफलता के शिखर से लेकर गर्त तक का सफ़र तय किया है. यही सोचकर सचिन तेंदुलकर ने दोबारा कप्तानी की कमान संभालने से इंकार कर दिया था. वह भारतीय टीम की इस कड़वी हक़ीकत से ज़्यादा वाक़िफ़ हैं. यही बात सहवाग को भी समझने की ज़रूरत है. एक खिलाड़ी के तौर पर सचिन की सफलता पर कोई सवाल भले ही न उठाया जाए, लेकिन यही बात उनकी कप्तानी के बारे में नहीं कही जा सकती है. भारतीय क्रिकेट प्रशंसक सचिन की कप्तानी में टीम की दुर्गति देख चुके हैं. इस दौरान सचिन के ख़ुद का प्रदर्शन भी कुछ ख़ास नहीं रहा था. यही बात श्रीलंका और बांग्लादेश के साथ धोनी की ग़ैर मौजूदगी में कप्तानी कर रहे सहवाग को भी ध्यान रखनी चाहिए थी. टीम की नैया तो किसी तरह पार लग गई, पर सहवाग का प्रदर्शन काफ़ी प्रभावित हुआ. दरअसल सहवाग को ख़ुद कप्तानी करने के बजाय बेहतरीन फॉर्म में चल रहे गौतम गंभीर को टीम की कमान सौंपनी चाहिए. गंभीर में वे सारी ख़ूबियां हैं, जो एक अच्छे कप्तान में होती हैं. वहीं बांग्लादेश के ख़िलाफ़ जिस पिच पर सहवाग शतक या दोहरा शतक जड़ सकते थे, वहां वह 50 के स्कोर तक पहुंचने में भी असफल रहे. यदि सहवाग यह सोचते हैं कि इस तरह टीम की कप्तानी स्थायी तौर पर उनके ज़िम्मे आ सकती है तो वह बेजा ही यह ख्याल दिल में पाल रहे हैं. क्योंकि, धोनी की सफलता उन्हें टीम से बाहर नहीं कर सकती है. वह विकेटकीपर तो हैं ही और एक विस्फोटक बल्लेबाज़ का तमगा उनके लिए सोने पर सुहागा साबित होता है. यानी वह टीम के लिए एक नहीं, कई मायनों में उपयोगी हैं. वहीं गंभीर आज टीम इंडिया की ज़रूरत बन चुके हैं.

**सहवाग की कप्तानी में टीम इंडिया ने सारे मैच भले ही जीत लिया, लेकिन उनके ख़ुद का प्रदर्शन घटिया रहा. इसलिए सहवाग को कप्तानी से दूर ही रहना चाहिए, नहीं तो एकबार फिर वह टीम से बाहर हो सकते हैं.**

टेस्ट हो या एकदिवसीय अथवा टी 20 किसी भी प्रारूप में गंभीर को अब साबित कुछ करना नहीं है. लेकिन सहवाग एकबार पहले ही अपने ख़राब फॉर्म की वजह से साल भर से ज़्यादा टीम से बाहर रह चुके हैं. यदि एकबार फिर उनका फॉर्म उनसे रूठा तो अंजाम फिर वही होगा. यानी सहवाग टीम से बाहर. और, इसबार वापसी का कोई मौक़ा भी नहीं मिलने वाला है. यही वजह है कि उन्हें कप्तानी के बजाय अपने खेल पर ज़्यादा ध्यान देना चाहिए. और, टीम इंडिया की कमान खब्बू बल्लेबाज गौतम गंभीर के हाथों में सौंप देनी चाहिए.

इस बात को हम दूसरे तरीक़े से देखें और भारतीय क्रिकेट के इतिहास एवं टीम इंडिया की कप्तानी पर नज़र डालें तो सौरव गांगुली को भारतीय टीम का सबसे सफल कप्तान माना जाता है. गांगुली की पहचान सिर्फ़ सफल कप्तान होना ही नहीं है. एक वक़्त ऐसा भी था, जब उनकी बल्लेबाज़ी देखने के लिए उनके लाखों चाहने वाले उतावले और बेचैन हो जाते थे. एक बाएं हाथ के बल्लेबाज़ के तौर पर गांगुली यानी प्रिंस ऑफ कोलकाता ने अपनी एक अलग पहचान बनाई. आज यदि गांगुली की इन सभी कसौटियों पर कोई सही उतरता है, तो वह है भारतीय टीम का नया भरोसेमंद गौतम गंभीर. यानी गंभीर विस्फोटक बल्लेबाज़ तो हैं ही, उनमें टीम इंडिया की कमान संभालने और सफल होने के भी सभी गुण हैं. अपनी बल्लेबाज़ी के बूते गंभीर ने विरोधी टीमों की बखिया उधेड़ कर रख दी है.

बांग्लादेश के ख़िलाफ़ पहले टेस्ट मैच के दौरान शतक तो सचिन तेंदुलकर ने भी बनाया, लेकिन चर्चा हुई गौतम गंभीर की बेहद ही गंभीर पारी की. गंभीर लगातार पांच टेस्ट मैचों में पांच शतक लगा चुके हैं. यह कारनामा करने वाले वह पहले भारतीय बल्लेबाज़ बन गए हैं. जबकि गंभीर ने अभी महज़ 27 मैच ही खेले हैं. मुमकिन है वह अगले टेस्ट मैच में भी एक और धमाकेदार शतक लगाकर ब्रैडमैन के सात दशक से भी पुराने रिकॉर्ड की बराबरी कर लें. आगे उस कीर्तिमान को ध्वस्त भी कर दें. यानी गंभीर एक खिलाड़ी के तौर पर तो बेहतरीन प्रदर्शन कर ही रहे हैं, यदि कप्तानी का दायित्व भी उन्हें मिल जाए तो उनके प्रदर्शन पर कोई असर नहीं पड़ने वाला है. यही बात सहवाग को समझनी चाहिए. आईपीएल टीम दिल्ली डेयर डेविल्स की कमान गंभीर को सौंप कर वह एक बेहतरीन क़दम उठा चुके हैं. अब ज़रूरत है कि वह सिर्फ़ अपने प्रदर्शन पर ध्यान दें. और टीम की कमान गंभीर को ही संभालने दें. इसी में टीम इंडिया और सहवाग दोनों का ही हित है.

chandan@chauthiduniya.com

फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

# चक दे इंडिया की बग़ावत

भारत का सबसे लोकप्रिय खेल क्रिकेट. लेकिन, राष्ट्रीय खेल हॉकी. भारतीय हॉकी टीम आठ बार ओलंपिक चैंपियन रह चुकी है, जबकि क्रिकेट में भारत ने सिर्फ़ दो विश्वकप जीते हैं. एक टी–20 का तो दूसरा एकदिवसीय मैचों का. फिर भी भारत में हॉकी की अहमियत कम क्रिकेट की ज़्यादा है. आख़िर क्यों? यह दर्द हमें भले ही परेशान न करे, लेकिन एक हॉकी खिलाड़ी के चेहरे पर इसकी हताशा साफ़ देखी जा सकती है. एड्रियन डिसूजा भारतीय हॉकी टीम के गोलची हैं. पिछले दिनों उन्होंने एक बात कही. आज लगभग हर कोई जानता है कि 2011 में क्रिकेट विश्वकप होना है. हॉकी को लेकर विवाद और हंगामे के पहले शायद ही यह कोई जानता था कि हॉकी का विश्वकप हो रहा है और वह भी दिल्ली में. यह एड्रियन की शिकायत नहीं, बल्कि एक खिलाड़ी का दर्द है.

आज खिलाड़ियों को अपने वेतन–भत्ते के लिए बग़ावत का झंडा बुलंद करना पड़ता है. पहले पुरुष हॉकी टीम ने बग़ावत का झंडा बुलंद किया. उसके बाद बारी थी, महिला खिलाड़ियों की. हॉकी इंडिया ने उन्हें भी बकाया वेतन–भत्ता देने की बात कही थी. पुरुष खिलाड़ियों ने खेलने से मना कर दिया तो उन्हें उनकी बकाया राशि दे दी गई. लेकिन हॉकी इंडिया ने महिला खिलाड़ियों को बकाया के नाम पर झुनझुना थमाने का काम किया. बकाया हो लाख और आप दें हज़ार तो कोई भी नहीं लेगा. महिला खिलाड़ियों ने यही किया. उन्होंने पुरुष साथियों की तरह अभ्यास सत्र का पूरी तरह बहिष्कार तो नहीं किया. पर हाथों में काली पट्टियां बांध कर अभ्यास करने उतरीं. यह उनके विरोध करने का तरीक़ा था. पर हमें सोचना चाहिए यदि खिलाड़ियों के साथ इसी तरह बर्ताव किया जाता रहा तो हम कितने मेडल जीतेंगे.

जिस हॉकी ने कभी जीत के कई इतिहास रचे, आज वही हॉकी बीमार हो चुकी है. इलाज के नाम पर इसे जितनी दवा दी जाती है, इसकी हालत उतनी ही बिगड़ती जाती है. आज हम सभी हॉकी की बात कर रहे हैं तो उसके विवादों की वजह से. न विवाद होता और न हम उसका ज़िक्र करते. न ही मीडिया में हॉकी छाई रहती. इस तरह हॉकी का विश्वकप भी संपन्न हो जाता. कौन जीता, कौन हारा, किसी को कोई मतलब नहीं होता. शायद अब भी नहीं होगा. इसके बाद हर बार की तरह बहस शुरू होती कि भारत का राष्ट्रीय खेल क्या हो? हॉकी या क्रिकेट. अधिकांश लोगों का जवाब भी क्रिकेट ही होगा. उस क्रिकेट का, जो महज़ 8–10 देशों में खेली जाती है. चर्चा उस क्रिकेट को लेकर होगी, जिसमें हम अभी अव्वल हैं. पर ज़रा सोचिए, क्रिकेट में हमने कितने विश्वकप जीते हैं? विश्वकप नहीं तो कितने फ़ाइनल मुक़ाबले जीते हैं? दरअसल आज हॉकी की जो हालत है, ऐसे में अधिकारियों की सिर्फ़ लानत मलानत से कुछ होने वाला नहीं है. आज भारत में एक समुचित खेल संस्कृति पैदा करने की ज़रूरत है. ताकि हॉकी सहित सभी खेलों का विकास हो सके. पर लगता है, यह भी कई बार दोहराने से बेअसर हो चुका है. शायद हॉकी की क़िस्मत यही है कि हर कोई उसकी पस्त होती हालत पर मातम मनाए.

# आईपीएल पर राजनीति

मुंबई पर हमले के लिए पाकिस्तानियों को कसूरवार ठहराना ग़लत है और इसीलिए आईपीएल को हमारे खिलाड़ियों को नीचा नहीं दिखाना चाहिए था. यह कहना है मशहूर पाकिस्तानी खिलाड़ी इमरान ख़ान का. पिछले दिनों आईपीएल के तीसरे संस्करण के लिए खिलाड़ियों की बोली लगी. इस में 60 से भी ज़्यादा खिलाड़ियों की बोली लगाई गई. लेकिन किसी भी आईपीएल टीम ने पाकिस्तानी खिलाड़ियों के लिए बोली नहीं लगाई. बस क्या था? दो देशों के संबंध मुंबई पर हमले के बाद से भी ज़्यादा संवेदनशील हो गए. लेकिन इस बार बारी थी पाकिस्तान की. इस मसले ने जैसे पाकिस्तान को भारत पर दबाव बनाने का मौक़ा दे दिया. खिलाड़ियों की नीलामी में किसी भी पाक खिलाड़ी के न बिकने का मामला इतना तूल पकड़ लेगा और क्रिकेट के पिच पर दो देशों के संबंधों की राजनीति होने लगेगी, इसका अंदाज़ा शायद ही किसी को था.

पर्दे के पीछे की कहानी देखें तो सबकुछ तय नज़र आता है. भारत सरकार ने कुल 17 पाकिस्तानी खिलाड़ियों को वीज़ा जारी भी कर दिए थे. लेकिन मामला जितना आसान दिख रहा है, है नहीं. इस नीलामी की पूरी प्रक्रिया पर एक निगाह दौड़ाएं तो सारा माज़रा साफ़ हो जाता है. पहली बात यह कि आईपीएल एक प्राइवेट इवेंट है. प्रत्यक्ष तौर पर भारत सरकार का इससे कोई लेना देना नहीं है. टीम में किन खिलाड़ियों को लेना है और किन्हें नहीं, यह पूरी तरह टीम के मालिकों पर निर्भर करता है. सरकार इस मामले में कुछ नहीं कर सकती है. लेकिन टी 20 विश्वकप चैंपियन टीम पाकिस्तान के खिलाड़ियों के मुताबिक़, यह आईपीएल से पाकिस्तानी खिलाड़ियों को दूर रखने की साज़िश है. स्टार बल्लेबाज़ शाहिद अफरीदी की मानें तो यह खिलाड़ियों के साथ साथ पाकिस्तान का भी अपमान है.

शाहिद अफरीदी की बातों में बहुत दम भले ही न हो, लेकिन इस पूरे प्रकरण में कुछ न कुछ काला ज़रूर नज़र आ रहा है. यहां ध्यान देने वाली बात है कि राजस्थान टीम की मालकिन शिल्पा शेट्टी ने उस पाकिस्तानी तेज़ गेंदबाज़ सोहैल तनवीर के लिए बोली नहीं लगाई, जिसने पहला आईपीएल ख़िताब राजस्थान के नाम कराने में सबसे अहम किरदार निभाया था. अब शिल्पा का कहना है कि कुछ सनकी राजनीतिक दलों की वजह से हम पाकिस्तानी खिलाड़ियों की सुरक्षा का जोख़िम नहीं ले सकते थे. ज़रा सोचिए, शाहिद अफरीदी की धमाकेदार बल्लेबाज़ी कौन नहीं देखना चाहता? जिस खिलाड़ी ने पाकिस्तान को अपने बूते टी 20 चैंपियन बनवाया, उस अफरीदी को भला कौन नहीं टीम में शामिल करना चाहता होगा? या फिर यॉर्कर गेंद फेंकने में माहिर उमर गुल को. सभी 11 पाकिस्तानियों खिलाड़ियों को नहीं तो कम से कम इन खिलाड़ियों को शामिल करने के लिए तो टीम के मालिक भी ख्वाहिश रखते थे. लेकिन नहीं, एक भी पाकिस्तानी खिलाड़ी पर किसी ने बोली नहीं लगाई. मानों सबकुछ पहले से तय था. जैसे किसी ने हिदायत दे रखी हो कि आप किसी भी पाकिस्तानी खिलाड़ी पर बोली नहीं लगाएंगे. हुआ भी यही.

इसकी कड़ी प्रतिक्रिया भी पाक की ओर से देखने को मिली. भारतीय दौरे पर आनेवाले पाकिस्तान सांसदों के एक दल ने भारत न आने का फ़ैसला किया. पूर्व पाकिस्तानी खिलाड़ी ज़हीर अब्बास ने तो दिल्ली में होने वाले हॉकी विश्वकप का बहिष्कार तक करने की बात कह दी. पूरी बात दोनों मुल्कों के राजनयिक स्तर पर पहुंच चुकी है. मामला इतना संगीन हो चुका है कि भारतीय खेल मंत्री सहित विदेशमंत्री भी इस मामले में कूद पड़े हैं. वहीं पाकिस्तानी खेल मंत्री और गृहमंत्री यह आरोप लगा रहे हैं कि भारत आईपीएल के ज़रिए पाकिस्तान को नीचा दिखाने की कोशिश कर रहा है. जबकि हमारे विदेशमंत्री ने पाकिस्तान को फटकार वाले अंदाज़ में कहा है कि पाकिस्तान को भारत पर आरोप लगाने के बजाय इसकी वजहों पर ध्यान देना चाहिए. साथ ही, यह भी कि पाकिस्तान साबित करे कि इस मामले से भारत का कुछ भी लेना देना है.

बात चाहे जो हो. लेकिन एक बात तो बिल्कुल साफ़ है. क्रिकेट ने कभी दो देशों के संबंधों को मधुर किया था. आज यही दो देशों में दरार पैदा करने का काम कर रहा है. आईपीएल यानी इंडियन प्रीमियर लीग. क़ायदे से तो इसका नाम इंडियन पॉलिटिकल लीग ही होना चाहिए. जब से आईपीएल की शुरुआत हुई है, क्रिकेट कम और क्रिकेट के नाम पर किचकिच ज़्यादा हुई है. लेकिन ग़लती इस खेल की नहीं, इस खेल में घालमेल किए गए राजनीतिक खेल की है. और, इस खेल में दोनों ही देश एक-दूसरे की गेंदों पर जमकर राजनीति का चौका-छक्का लगा रहे हैं.

भारत या कोई देश यदि पाकिस्तान को सम्मान नहीं देगा, तो उसके साथ उसी तरह का व्यवहार किया जाएगा. अगर भारत पाक संबंधों में सुधार लाना है तो भारत को पाकिस्तानी खिलाड़ियों को सम्मान देना होगा.

*रहमान मलिक, पाकिस्तानी गृहमंत्री*

पाकिस्तान को उन वजहों पर ध्यान देना चाहिए, जिससे दोनों देश के रिश्तों में तनाव आया है. जहां तक आईपीएल का सवाल है, सरकार का न तो आईपीएल और न ही खिलाड़ियों के चयन से कुछ लेना देना है.

*एस.एम.कृष्णा, भारतीय विदेश मंत्री*



खेल में राजनीति का घालमेल नहीं होना चाहिए. शाहिद अफरीदी की बल्लेबाज़ी का हर कोई क़ायल है.

*नवजोत सिंह सिद्धू, पूर्व भारतीय खिलाड़ी*

पाकिस्तान को दिल्ली में होने वाले हॉकी विश्वकप सहित उन सभी खेल प्रतियोगिताओं का बहिष्कार करना चाहिए, जिसमें भारत की भागीदारी हो.

*ज़हीर अब्बास, पूर्व पाकिस्तानी क्रिकेटर*

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

चौथी दुनिया

दिल्ली, 1 फरवरी–7 फरवरी 2010

रिमी घोड़ों की रेस में वह बमुश्किल पांच सौ रुपये ही लगाएंगी. यहां तक कि जब वह अपने फेवरेट कैसिनो जाती हैं, तब भी तीन हज़ार रुपये से ज़्यादा दांव पर नहीं लगाती हैं.



# मां की लाडली

देव डी की पारो, *गुलाल* की आइटम डांसर और *आगे से राइट* में श्रेयस तलपड़े की हीरोइन माही गिल से आप वाक़िफ़ ही होंगे. अभी हाल में उन्होंने मशहूर फोटोग्राफर डब्बू रतनानी के साथ एक फोटो शूट किया है. वैसे तो वह अपने और परिवार के बारे में ज़्यादा बोलती नही हैं, पर इस बार उन्होंने काफ़ी खुलकर बात की. उनके मुताबिक़, उनकी मां भी फ़िल्मों में आना चाहती थीं, पर यह हो न सका. बेहतरीन डांसर होने के बावजूद माही की मां का दिल मजबूरियों ने तोड़ दिया और वह करियर पर ध्यान नहीं दे पाईं. इसलिए उन्होंने अपनी बेटी को बेहतरीन डांसर बनाकर पहले पंजाबी फ़िल्मों में उतारा और फिर बॉलीवुड में. उसके बाद अनुराग कश्यप जैसे बड़े फ़िल्मकार के साथ *देव डी* में काम करके माही की क़िस्मत का द्वार खुला. माही कहती हैं, उन्हें नाज़ है कि वह अपनी मां का सपना पूरा कर रही हैं और आगे भी फ़िल्मों में अच्छा काम करती रहेंगी, ताकि उनकी मां हमेशा ख़ुश रहें.

# विद्या की नई भाषा

आम तौर पर आदर्श एवं सभ्य किरदार निभाने वाली विद्या बालन के मुंह से फरटिदार गंवई बोली और गाली-गलौज सुनना आपको हैरत में डाल सकता है. निजी जीवन में विद्या धार्मिक विचारों वाली हैं और प्रति शुक्रवार मंदिर जाना पसंद करती हैं, लेकिन फ़िल्म *इश्किया* में विद्या ने बिंदास अंदाज़ में देहाती भाषा का इस्तेमाल किया है. निजी जीवन में उन्होंने कभी ऐसी भाषा नहीं बोली, लेकिन इस फ़िल्म में गंवई भाषा स्क्रिप्ट की मांग थी. दरअसल, यह फ़िल्म पूर्वी उत्तर प्रदेश के अपराधी प्रेमी जोड़े पर बनाई गई है. इसलिए किरदारों में जान डालने के लिए इस तरह की भाषा का प्रयोग किया गया. विद्या कहती हैं कि संवादों का रिहर्सल उन्होंने अपने घर पर ही किया. सेट पर पहुंच कर चारों तरफ़ मौजूद यूनिट के लोगों को भूल कर वह कैरेक्टर में खो जाती हैं, जिससे उन्हें झिझक महसूस नहीं होती है. अभिषेक चौबे द्वारा निर्देशित और विशाल भारद्वाज द्वारा निर्मित इस फ़िल्म में नसीरुद्दीन शाह एवं अरशद वारसी भी विद्या के साथ नज़र आ रहे हैं.

# प्रोडक्शन में टिस्का की दिलचस्पी

फ़िल्म *तारे जमीं पर* के लिए बेस्ट सपोर्टिंग एक्ट्रेस का अवार्ड जीतने वाली टिस्का चोपड़ा अब प्रोडक्शन में हाथ आज़माने की सोच रही हैं. कई दूसरे फ़िल्मी सितारों की तरह उन्हें भी निर्देशन का शौक़ चढ़ा है. इस शौक़ में वह दूसरों से एक क़दम आगे हैं. आगे कैसे? हम आपको बताते हैं. जिस फ़िल्म को वह प्रोड्यूस करेंगी, उसकी स्क्रिप्ट भी वह ख़ुद ही तैयार करेंगी. टिस्का की गिनती स्टाइलिश हीरोइनों में की जाती है, फिर भी उनका प्रोडक्शन से जुड़ने का निर्णय हैरान करता है. अब प्रोडक्शन में वह क्या गुल खिलाती हैं, यह तो आगे ही पता चल पाएगा. लेकिन एक बात और है कि वह थियेटर को अलविदा नहीं कहना चाहती हैं. उनके मुताबिक़ वह थियेटर से प्यार करती हैं. वैसे उनके एक इंडो-अमेरिकन फ़िल्म में भी नज़र आने की चर्चा ज़ोरों पर है. इसके अलावा ख़बर यह भी है कि टिस्का बहुत जल्द ही तिगमांशु धूलिया की फ़िल्म रंगीन और विनय शुक्ला की फ़िल्म *मिर्च* में भी नज़र आएंगी. यानी दर्शक कई बार उनसे रूबरू होंगे.

## प्रिंस चार्मिंग की तलाश

रिमी सेन अपने बारे में खुलकर बातें बहुत कम ही करती हैं. गत दिनों राजधानी दिल्ली आईं रिमी ने अपने दिल की कई बातों से पर्दा उठाया. वह कहती हैं कि वह पैसे यूं ही ख़र्च नहीं करतीं. अपने फेवरेट कसीनो में वह 3000 से अधिक नहीं लगाएंगी. हां, गाड़ियों पर वह दिल खोल कर ख़र्च करती हैं. अभी हाल में उन्होंने बीएमडब्ल्यू-5 सीरीज ख़रीदी है. रिमी कहती हैं कि उनकी ज़िंदगी में लड़कों की कमी है. उन्हें न कभी फर्स्ट क्रश डेवलप करने का मौक़ा मिला और न प्यार का. इसकी वजह यह है कि वह बचपन से गर्ल्स स्कूल और बड़े होकर गर्ल्स कॉलेज में पढ़ी हैं. ओह प्लीज़ रिमी, अब आप बड़ी हो गई हैं और अपने प्रिंस चार्मिंग को खोजने के लिए आपको किसी ऑर्गनाइजेशन की ज़रूरत नहीं है!

# मुझे शिकायत है

फ़िल्म *इंतेहा* से अपना करियर शुरू करने वाली विद्या मालवडे ख़राब शुरुआत के बावजूद अपनी उपलब्धियों से बेहद ख़ुश हैं. अपनी पहली फ्लॉप फ़िल्म के बाद वह आगे बढ़ीं और उन्होंने सारे गमों को चक दे कर दिया. फिर किडनैप हुईं विवाह के बंधन में संजय डायमा के साथ. अपनी उपलब्धियों से ख़ुश विद्या उदास अगर हों भी तो आख़िर किस बात पर? दरअसल फ़िल्मों में उन्हें सब कुछ बहुत अच्छा लगता है. बुरी लगती है तो बस निजी ज़िंदगी में मीडिया की दख़लंदाज़ी. अफ़वाहों से विद्या को परेशानी होती है और वह डिप्रेशन में चली जाती हैं. वह तनावमुक्त ज़िंदगी जीना चाहती हैं, जिससे काम के बाद घर जाकर चैन से आराम कर सकें. लेकिन, बॉलीवुड में इधर-उधर की बातें उनका पीछा नहीं छोड़ती हैं. उन्हें शिकायत है कि पूरी दुनिया एक्टर-एक्ट्रेस के काम को जज करने के लिए बैठ जाती है, जो कि उनके हिसाब से ग़लत है. लेकिन विद्या, यही मीडिया आपके काम को देखता है, पसंद करता है और आपको स्टार बनाता है. उसे पूरा हक़ बनता है कि वह आपके काम को जज करे. आप अगर इन बातों से बुरा मानने लगेंगी तो क्या होगा आपके भविष्य का?

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

# मीडिया एक अजगर है : अमिताभ बच्चन

अपने चालीस साल के करियर में किसी व्यक्ति विशेष को ध्यान में रखते हुए मैंने कोई भी फ़िल्म नहीं की. फिल्म *रण* में निभाया गया किरदार भी किसी व्यक्ति विशेष पर आधारित नहीं है, कहते हैं अमिताभ बच्चन.

फ़िल्म *रण* की प्रेस कांफ्रेंस के दौरान बिग बी ने कहा कि सामाजिक ज़िम्मेदारियों से लैस मीडिया एक ऐसा सशक्त माध्यम है, जिसे हर वक़्त नया खोज निकालने की पिपासा रहती है. मीडिया अपने आप में एक विवेकी अंत:करण भी है और व्यापार भी. जद्दोजहद इस बात की है कि इन दोनों का तारतम्य कैसे बैठाया जाए. हाल में रिलीज़ फ़िल्म *रण* में मीडिया की इन्हीं स्थितियों का वर्णन है, जिसमें मैं यानी विजय हर्षवर्द्धन मलिक फंसकर निकलता है. मेरे बाबू जी जब अस्वस्थ रहते थे, तब रोज़ शाम को एक हिंदी फ़िल्म देखते थे. मैं जब उनसे इसका कारण पूछता तो वह कहते थे कि हिंदी फ़िल्मों में ही सिर्फ़ पोएटिक जस्टिस देखने को मिलता है. इससे मन को सुकून पहुंचता है. 1969 में मैं फ़िल्म इंडस्ट्री में आया था, तब सिर्फ़ प्रिंट मीडिया हुआ करती थी. इन 40 सालों में मीडिया समेत जनसंचार के सारे माध्यम बदल गए हैं. फ़िल्म के दौरान मैं कई न्यूज़ चैनलों में गया और वहां काम करने का सलीका देखा. मैंने पाया कि मीडिया एक ऐसा अजगर है, जिसे 24 घंटे खाने के लिए कुछ न कुछ चाहिए. वह कहते हैं कि ब्लॉग्स में मीडिया के प्रति नाराज़गी जताना मेरा अधिकार है, पर इसका मतलब यह नहीं है कि मुझे मीडिया को गाली देनी है या भला-बुरा कहना है. हमने सिर्फ़ फ़िल्म में आम लोगों की राय को आधार बनाकर यह दिखाने की कोशिश की है कि आज मीडिया ब्रेकिंग न्यूज़ के दबाव में आकर किस-किस तरह के हथकंडे अपनाने लगा है.

## फिल्म रिव्यू

### वीर

एक अरब रुपये की लागत से बनी *वीर* बॉलीवुड की पहली ऐसी फ़िल्म है, जिसे लंदन के रॉयल पैलेस में शूट करने की इजाज़त मिल सकी. फ़िल्म उस दौर की कहानी कहती है, जब अंग्रेजों ने भारत में शासन के लिए फूट डालो और राज करो की नीति अपनाई थी. आज़ादी से पहले की इस कहानी में एक प्रेम कथा का समानांतर तरीक़े से चलना दर्शकों को बांधे रखता है. बॉलीवुड के पुराने लव स्टोरी पैटर्न की तरह हीरो को अपने पिता के दुश्मन की बेटी से प्यार हो जाता है और वह उसे पाने के लिए सारी जुगत भिड़ाता है. इस कहानी को थोड़ा अलग बनाने के लिए इसमें अंग्रेजों से लड़ाई का पुट दिया गया है.

फिल्म की शुरुआत राजस्थान के पिंडारी समूह और माधवगढ़ के बीच लड़ाई से होती है. माधवगढ़ का राजा जैकी श्रॉफ अंग्रेजों के साथ मिलकर पिंडारियों को धोख़े से हरा देता है. पिंडारियों का योद्धा मिथुन चक्रवर्ती माधवगढ़ के राजा द्वारा किए गए धोख़े से हार कर यह क़सम लेता है कि वह राजा और अंग्रेजों को पराजित करके इस धोख़े का बदला लेगा. तभी उसकी पत्नी मंगला (नीना गुप्ता) एक बेटे को जन्म देती है, जिसे नाम मिलता है वीर. मिथुन उस पर अपनी प्रतिज्ञा थोप देता है. उसके बाद बाप-बेटे की कर्म-धर्म की दास्तां चलती है, जिसे ख़ास बताने के लिए एक विशेष सीन फ़िल्म में डाला गया है. इसमें मिथुन अपने बेटे वीर से लड़ता है और उसे पानी के कुंए में फेंक देता है. इस पर वीर कहता है, दद्दा, एक दिन मैं भी तुम्हें पानी में फेंकूंगा. यह सीन बार-बार दोहराए जाने से बोरियत पैदा होती है. अपने दद्दा की प्रतिज्ञा पूरा करने के लक्ष्य से वीर अंग्रेजों के काम करने का तरीक़ा सीखने लंदन जाता है. वहां जाकर उसे एहसास होता है कि उसका देश राजाओं की आपसी रंजिशों की वजह से बंटा हुआ है और इसीलिए गुलामी के जंजीरों में जकड़ा है. फ़िल्म के माध्यम से युवाओं को संदेश दिया गया है कि पिता के जीने का तरीक़ा और सीख यदि सही हो, तभी उनकी आज्ञा माननी चाहिए और किसी भी हालत में उससे मुंह नहीं मोड़ना चाहिए. और, यदि पिता ग़लत हों तो उन्हें सही रास्ता दिखाना चाहिए, न कि उनकी बात मान लेनी चाहिए.

रॉयल पैलेस और राजभवन में शूट होने की वजह से फ़िल्म स्क्रीन पर काफ़ी ख़ूबसूरत नजर आती है. यही वजह है कि कुछ उबाने वाले दृश्यों के बावजूद दर्शक बंधे रहते हैं. ज़रीन ख़ान फ़िल्म में कुछ जगहों पर बढ़िया अभिनय न कर पाने के बावजूद सुंदरता से दर्शकों को अपने पक्ष में कर लेती हैं. फ़िल्म के कई दृश्यों में कड़ियां टूटी हुई सी लगती हैं, जिन्हें चालाकी से ढंक दिया गया है. सलमान के सगे भाई सोहेल खान फ़िल्म में भी उनके भाई का किरदार निभा रहे हैं. मिथुन चक्रवर्ती अरसे बाद इस फ़िल्म में दर्शकों को ख़ुश कर पाएंगे. जैकी श्रॉफ और अन्य ने भी अपना रोल ठीक से अदा किया है. कुल मिलाकर फ़िल्म एक बार देखने लायक ज़रूर है. फिल्म सलमान खान के प्रशंसकों को निश्चित तौर पर निराश नहीं करेगी.

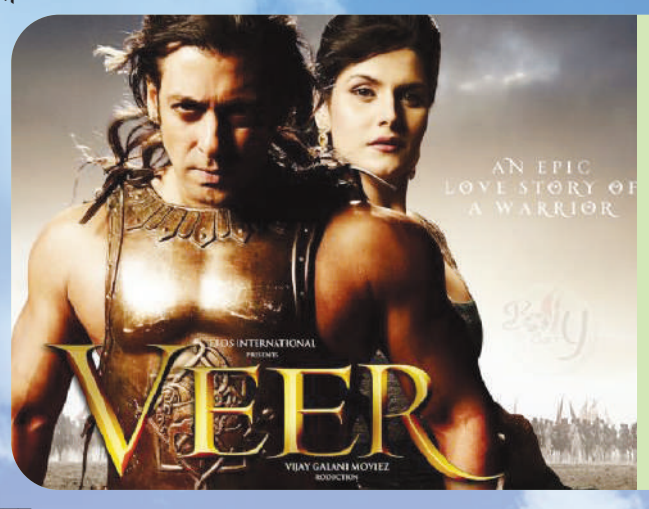


| | | |
|---|---|---|
| निर्माता | : | विजय गिलानी, सुनील ए. लूला |
| निर्देशक | : | अनिल शर्मा |
| कलाकार | : | सलमान खान, जरीन खान सोहेल खान, मिथुन चक्रवर्ती नीना गुप्ता और जैकी श्रॉफ |
| संगीतकार | : | साजिद-वाजिद |
| गीतकार | : | गुलजार |
| सिनेमेटोग्राफी | : | गोपाल शाह |
| अवधि | : | 155 मिनट |
| वितरण | : | इरोज़ इंटरनेशनल |

## फिल्म प्रीव्यू

### माई नेम इज़ ख़ान

9/11 के हादसे के बाद फ़िल्मकारों में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मुस्लिम समुदाय को केंद्र में रखकर फ़िल्म बनाने की होड़ सी लग गई है. ग्लोबल वार्मिंग और ग्लोबल मार्केट के दौर में इस विषय को ख़ूब बेचा जा रहा है. द पैथ टू 9/11, कुर्बान, वेलडन अब्बा, द काइट रनर आदि ऐसी ही फ़िल्में हैं. जो इसी विषय पर केंद्रित हैं. इस बार करण और शाहरुख़ आए हैं माई नेम इज़ ख़ान लेकर. दोनों सफल फ़िल्मकार और चतुर व्यवसायी हैं. चतुर इसलिए, क्योंकि उन्होंने फ़िल्म के ओवरसीज डिस्ट्रीब्यूशन राइट फॉक्स प्रोडक्शन हाउस को असल लागत से दोगुने-तिगुने में बेचकर रिलीज़ से पहले ही मुनाफ़ा कमा लिया है. अर्से बाद शाहरुख़ और काजोल को साथ काम करने के लिए राजी करना करण जौहर की व्यक्तिगत और व्यवसायिक सफलता है. फ़िल्म में रिज़वान ख़ान एस्पर्जर्स बीमारी से पीड़ित है जो अपने व्यक्तित्व, घटनाक्रमों से जुड़ नहीं पाता. उसके मुताबिक़ मैं मूर्ख नहीं हूं. लोग कहते हैं कि आप मेरे घर कभी भी आ सकते हैं, लेकिन जब मैं आधी रात को उनके घर पहुंचता हूं तो वे कहते हैं कि यह कोई आने का समय है? दरअसल, इस बीमारी का नाम डॉ. हेंस एस्पर्जर्स के नाम पर रखा गया है, जिन्होंने इस बीमारी के लक्षण को सबसे पहले पहचाना था. रिजवान हिंदू लड़की मंदिरा से शादी करता है. लेकिन 9/11 के बाद परिस्थितिवश रिज़वान और मंदिरा अलग हो जाते हैं. बस यहीं से रिज़वान अपने प्यार को दोबारा हासिल करने के लिए एक लंबे सफ़र पर निकल पड़ता है, जो अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा के पास जाकर इस संदेश पर ख़त्म होता है कि हर मुस्लिम आतंकवादी नहीं होता. बराक के किरदार में उनके हमशक़्ल क्रिस्टोफर डंकन हैं. फिल्म में जिमी शेरगिल, केटी कीन, बेनी नीव्स, विनय पाठक और ज़रीना वहाब भी नज़र आएंगे. संगीत शंकर- एहसान-लॉय की तिकड़ी का है, गीत रचे हैं निरंजन आएंगर ने. फ़िल्म काफ़ी हाइप पकड़ चुकी है. यही वजह है कि 12 फरवरी को रिलीज़ होने वाली यह इकलौती फ़िल्म है. शाहरुख के साथ एयरपोर्ट पर हुए विवाद से मिलता-जुलता दृश्य फ़िल्म में भी रखा गया है. इसे कहते हैं, पब्लिसिटी फंडा.

# चौथी दुनिया

बिहार झारखंड





दिल्ली, 1 फरवरी–7 फरवरी 2010

www.chauthiduniya.com

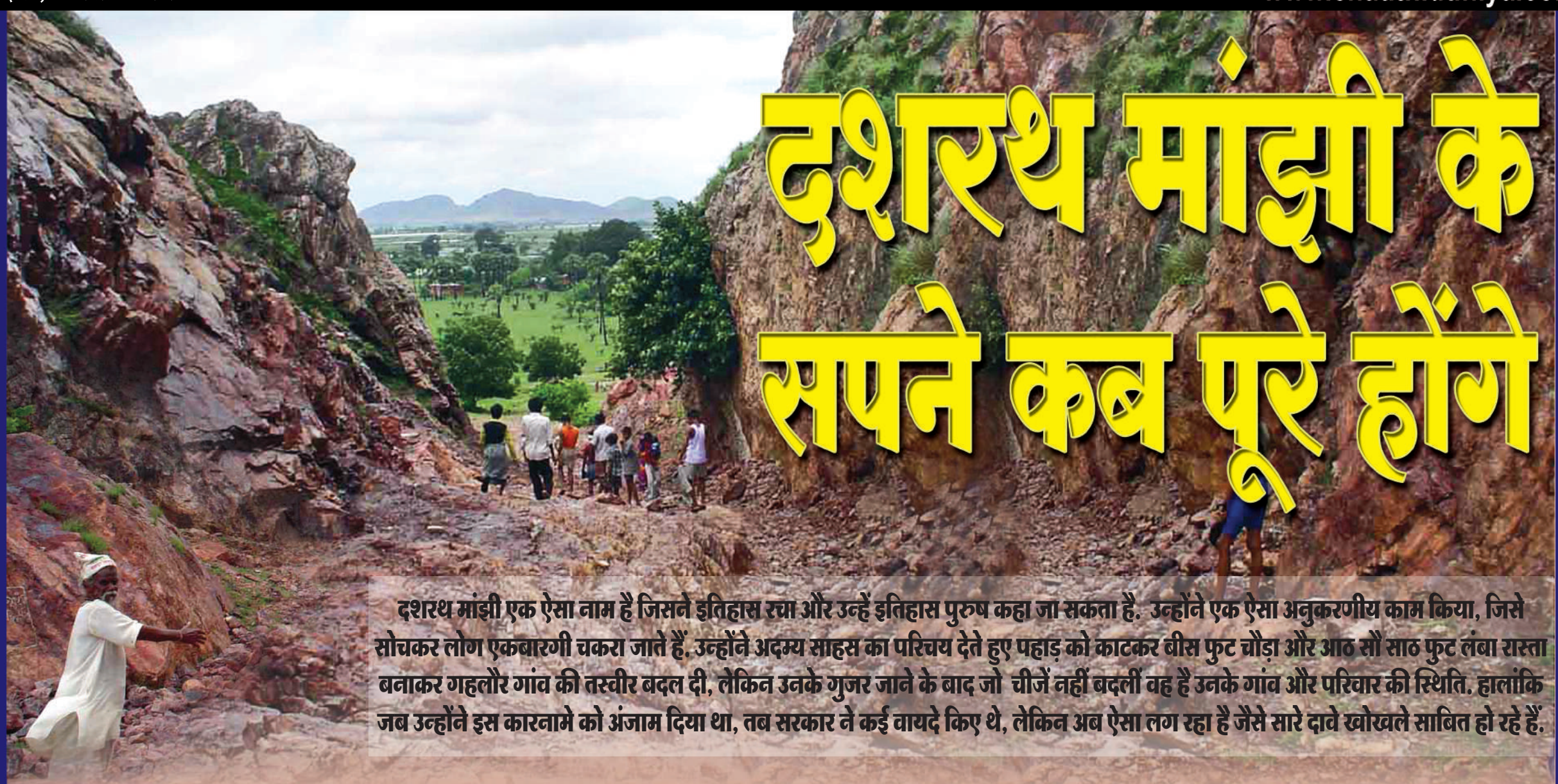




# दशरथ मांझी के सपने कब पूरे होंगे

**दशरथ मांझी एक ऐसा नाम है जिसने इतिहास रचा और उन्हें इतिहास पुरुष कहा जा सकता है. उन्होंने एक ऐसा अनुकरणीय काम किया, जिसे सोचकर लोग एकबारगी चकरा जाते हैं. उन्होंने अदम्य साहस का परिचय देते हुए पहाड़ को काटकर बीस फुट चौड़ा और आठ सौ साठ फुट लंबा रास्ता बनाकर गहलौर गांव की तस्वीर बदल दी, लेकिन उनके गुजर जाने के बाद जो चीजें नहीं बदलीं वह है उनके गांव और परिवार की स्थिति. हालांकि जब उन्होंने इस कारनामे को अंजाम दिया था, तब सरकार ने कई वायदे किए थे, लेकिन अब ऐसा लग रहा है जैसे सारे दावे खोखले साबित हो रहे हैं.**

सुनील सौरभ


पहाड़ का सीना चीर कर बीस फुट चौड़ा और आठ सौ साठ फुट लंबा रास्ता बनाने वाले दशरथ मांझी के परिवार एवं उनके गांव गहलौर की तस्वीर सरकार के लाख आश्वासनों–दावों के बावजूद आज भी वैसी है, जैसी तब थी, जब माउंटेन मैन ने अंतिम सांस ली. महादलितों की हमदर्द इस सरकार में कुछ नहीं बदला. न तो गांव की तस्वीर और न ही दशरथ मांझी के परिवार की क़िस्मत. सरकारी आश्वासन, घोषणा और वायदे सब कुछ इस महादलित बस्ती के लिए खोखले साबित हुए हैं. माउंटेन मैन दशरथ मांझी के विकलांग पुत्र भगीरथ मांझी एवं विकलांग पुत्रवधू बसंती देवी आम महादलित परिवारों की तरह काफ़ी कठिनाई में छोटे से परिवार के साथ किसी तरह जीवनयापन के लिए मजबूर हैं.

इस गांव में आने पर नहीं लगता है कि यह वही गांव है, जहां मज़दूर मंगरू मांझी एवं पतिया देवी की संतान दशरथ मांझी ने पहाड़ का सीना चीरकर इतिहास रच दिया. बिहार के विभिन्न क्षेत्रों में स्थित अन्य दलित और महादलित बस्तियों की तरह है, गया ज़िले के मोहड़ा प्रखंड के गहलौर गांव का महादलित टोला दशरथ नगर. सुविधाओं के नाम पर दशरथ मांझी के निधन के बाद यहां एक चापाकल लगा और एक छोटे से सामुदायिक भवन का निर्माण शुरू किया गया, जिसमें सामुदायिक भवन आज भी अधूरा पड़ा है. सरकारीकर्मियों की लूटखसोट और लापरवाही का नमूना है यह गांव. नरेगा में गड़बड़ी, बीपीएल सूची अनाज वितरण में अनियमितता, प्राथमिक विद्यालय में सप्ताह में सिर्फ़ दो–तीन दिन ही शिक्षकों का आना, आंगनबाड़ी केंद्र का न होना आदि शिकायतें पूर्व की तरह ही विद्यमान हैं. इसी माहौल में जी रहे हैं दशरथ मांझी के विकलांग पुत्र एवं पुत्रवधू अपनी एकमात्र संतान लक्ष्मी कुमारी के साथ. आठवीं कक्षा में पढ़ने वाली लक्ष्मी ही उनके जीवन का एकमात्र सहारा है. वह मेहनत–मज़दूरी कर कमाती है, तो उसके विकलांग मां–बाप को रोटी नसीब होती है. सरकारी योजनाओं के अनुसार भगीरथ मांझी को दशरथ मांझी के जीवित रहने के समय से ही विकलांग होने के कारण सामाजिक सुरक्षा पेंशन मिल रही है, लेकिन उनकी विकलांग पत्नी बसंती देवी को तमाम प्रयासों के बावजूद आज तक पेंशन नहीं मिल सकी. किसी तरह इंदिरा आवास मिला, जो उनके रहने का सहारा है. दशरथ मांझी के घर के बगल में स्थित प्राथमिक विद्यालय में भगीरथ मांझी एवं उनकी पत्नी बच्चों के लिए खिचड़ी बनाने का काम कर लेते हैं, जिससे प्रतिदिन दोनों को पचास रुपये मिल जाते हैं. बसंती देवी बताती हैं कि सप्ताह में तीन दिन ही मास्टर जी आते हैं, जिसके कारण तीन दिन ही खाना बन पाता है. भगीरथ मांझी बताते हैं कि सभी सरकारी घोषणाएं हवा–हवाई हो गईं. विकलांग होने के कारण वे लोग बहुत अधिक दौड़धूप नहीं कर पाते हैं. जब कभी भी सरकारी अधिकारियों से मुलाक़ात होती है, तो वह बाबा दशरथ मांझी के अधूरे सपने को पूरा करने के सरकार के वायदे के बारे में पूछते ज़रूर हैं, लेकिन उन्हें सही जवाब नहीं मिल पाता. वैसे भी सुदूर पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण कभीकभार ही सरकारी कर्मचारियों का वहां आना–जाना होता है. नतीजतन, इस गांव के मुखिया और जन वितरण प्रणाली दुकानदार मनमानी कर महादलित परिवारों के इन ग़रीबों का शोषण करने से नहीं चूकते हैं.

इसी गांव में रहता है दशरथ मांझी की विधवा पुत्री लौंगी देवी का परिवार. दशरथ मांझी के घरवालों के मतदाता पहचान पत्र आज तक नहीं बन पाए हैं. जबकि प्राथमिक विद्यालय की शिक्षा समिति की सचिव बसंती देवी ही हैं. वह बताती हैं कि इस विद्यालय में डेढ़ सौ बच्चों को पढ़ाने वाले एकमात्र शिक्षक स्थानीय गहलौर के मुरली मनोहर पांडेय हैं. उन्हें 2006 से अब तक शिक्षा समिति के खाते से दो लाख से अधिक रुपये निकालकर दे चुकी हूं, लेकिन आज तक विद्यालय में विकास का कोई काम नहीं हुआ और न ही शिक्षक ने कोई हिसाब–किताब शिक्षा समिति को दिया है. वह बताती हैं कि दशरथ मांझी की पुत्री लौंगी देवी को अब तक इंदिरा आवास का दस हज़ार रुपया नहीं मिला है. इस गांव के अन्य महादलित परिवार बताते हैं कि जन वितरण प्रणाली का दुकानदार गहलौर गांव के एक संपन्न परिवार के दरवाजे पर दो–तीन महीने में एक महीने का अनाज बांटने आता है और तीन–चार महीने के कूपन ले लेता है. कुल मिलाकर दशरथ मांझी के परिवार और उनके महादलित टोले के लोग आज भी बदहाल हैं और काफ़ी मशक़्क़त से जीवन जी रहे हैं.

> **दशरथ मांझी का सपना था कि जिस पहाड़ी को तोड़कर उन्होंने वजीरगंज और अतरी प्रखंड की दूरी अस्सी किलोमीटर से घटाकर चौदह किलोमीटर कर दी, उस रास्ते का सरकार पक्कीकरण कर दे.**

अब बात दशरथ मांझी के सपनों की. उनका सपना था कि जिस पहाड़ी को तोड़कर उन्होंने वजीरगंज और अतरी प्रखंड की दूरी अस्सी किलोमीटर से घटाकर चौदह किलोमीटर कर दी, उस रास्ते का सरकार पक्कीकरण कर दे. गांव में चिकित्सा सुविधा के लिए अस्पताल और एक अच्छे विद्यालय की व्यवस्था हो. साथ ही आरोपुर गांव में यातायात की सुविधा के लिए मुंगरा नदी पर पुल बनाया जाए. अपने इन्हीं सपनों को पूरा करने के लिए दशरथ मांझी अनेक जनप्रतिनिधियों से गुहार लगाते हुए मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के यहां पहुंचे थे, जहां मुख्यमंत्री ने अपनी कुर्सी पर बैठाकर इस महान पुरुष को सम्मान दिया था. आज दशरथ मांझी को गुज़रे ढाई वर्ष से अधिक हो गए, पर अभी तक कोई मुक़म्मल कार्य नहीं हुआ. अभी गहलौर घाटी से कुछ दूरी पर रइदी मांझी, सुकर दास, विश्वंभर मांझी द्वारा दी गई भूमि पर प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र के निर्माण के लिए काम शुरू किया गया है, लेकिन घाटी की पहाड़ी पर सड़क निर्माण के बारे में किसी को कोई जानकारी नहीं है. गांव के एकमात्र प्राथमिक विद्यालय की स्थिति काफ़ी ख़राब है. डेढ़ सौ बच्चों पर केवल एक शिक्षामित्र है. इतना ज़रूर हुआ है कि दशरथ मांझी द्वारा पहाड़ तोड़कर बनाए गए रास्ते के प्रवेश स्थल पर उनके स्मारक का काम पूरा हो चुका है. गहलौर होकर अतरी की ओर जाने वाली मुख्य सड़क में काम मंथर गति से हो रहा है. मुंगरा नदी पर पुल बनाने का काम अब तक शुरू नहीं हुआ है.

इस प्रकार दशरथ मांझी के सपनों का गहलौर आज भी उपेक्षित और बदहाल है. अब दशरथ मांझी की संवेदनशीलता का भी उदाहरण देखिए, जब भारतीय स्टेट बैंक की वजीरगंज शाखा ने दशरथ मांझी को 2005 में सम्मानित करते हुए उपहार स्वरूप एक कंप्यूटर भेंट किया, तब दशरथ मांझी ने यह कहकर कंप्यूटर वापस कर दिया कि मैं इसका क्या करूंगा? इसके बदले हमारे गांव में रिंग बोरिंग करवाकर सार्वजनिक चापाकल लगवा दीजिए, जिससे लोगों और जानवरों को पेयजल की सुविधा मिल सके. कंप्यूटर आज भी बैंक की शोभा बढ़ा रहा है, लेकिन बैंक ने चापाकल लगाना उचित नहीं समझा. दशरथ मांझी ने मज़दूरी करके परिवार की जीविका चलाते हुए जिस बिहारी आत्मसम्मान, कर्मठता, सहजता, विनम्रता और गरिमा का परिचय दिया, वह किसी भी व्यक्ति के लिए अनुकरणीय है.

रेल पटरी के सहारे गया से पैदल दिल्ली यात्रा कर जगजीवन राम और तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी से मिलने का अद्भुत कार्य भी दशरथ मांझी ने किया था. मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने उनके निधन के बाद राजकीय सम्मान देकर एक मिसाल क़ायम तो की, लेकिन बिहार की तस्वीर बदलने का दावा करने वाले मुख्यमंत्री नीतीश कुमार दशरथ मांझी के गांव गहलौर की तस्वीर बदलने में अभी तक कामयाब नहीं हो पाए.

पहाड़ को तोड़कर रास्ता बनाने वाले दशरथ मांझी.

दशरथ मांझी का नवनिर्मित स्मारक.


feedback@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया



तत्कालीन रेलमंत्री लालू प्रसाद के जाने के बाद वर्तमान रेलमंत्री ममता बनर्जी के कार्यकाल में सिर्फ़ हरनौत रेल कोच फैक्ट्री के निर्माण कार्य में तेजी आई है.



आज़ादी के पूर्व इस शहीद सराय का नाम पक्की सराय था. इसके पीछे भी एक कहानी है. शेख बीबी सहदानी नामक एक उदार महिला ने वर्ष 1885 में जनता की भलाई के लिए 9 एकड़ ज़मीन दान में दी.

चौथी दुनिया



# हथियार तस्करी में बच्चों का इस्तेमाल

**पेट की आग शांत करने की गरज अक्सर सही-ग़लत के फ़ैसले पर भारी पड़ जाती है. उस वक़्त नज़र सिर्फ पेट भरने के मक़सद पर ही टिकी रहती है. और, इसी दौरान कभी-कभी कुछ ऐसा भी हो जाता है, जो दुनिया और क़ानून की नज़रों में अपराध है. खगड़िया में यही हो रहा है. यहां हथियारों की तस्करी करने वाले राष्ट्र विरोधी तत्व मासूम बच्चों को अपनी ढाल बना रहे हैं. यानी एक तरह से दोहरा अपराध, लेकिन शासन-प्रशासन ख़ामोश है. आख़िर क्यों?**



पुलिस हिरासत में दस वर्षीय बच्ची शबनम उर्फ चांद

यह जानकर आपके माथे पर निश्चित तौर बल पड़ जाएंगे कि जिस उम्र में बच्चों को सलीके से चलना और बोलना नहीं आता, उस उम्र के बच्चों से बड़े पैमाने पर हथियारों की तस्करी कराई जा रही है. तस्करों ने बच्चों को बाकायदा इस धंधे में सुरक्षित मोहरा बना लिया है. वे बच्चों को पेट भरने लायक पैसा देकर ख़ुद मालामाल हो रहे हैं. उन मासूमों को यह भी पता नहीं होता कि वे जो कर रहे हैं, उसका अंजाम क्या होगा. लेकिन उन्हें इतना ज़रूर पता है कि इस काम के बदले में मिलने वाले पैसों से उन्हें और उनके घरवालों को भरपेट भोजन मिल सकता है. हालांकि कम जोखिम पर अधिक मुनाफा कमाने की चाहत में इस धंधे में अनपढ़ महिलाएं भी शामिल होती जा रही हैं. इसलिए लोगों के मुंह से यह बरबस निकलने लगा है कि पेट के ख़ातिर शबनम बनने लगी है शोला. बेरोकटोक चल रहे इस धंधे का ख़ौफ़नाक सच तब सामने आया, जब खगड़िया ज़िले के महेशखूंट स्टेशन से एक दस वर्षीय बच्ची को तीन देसी कट्टों और ज़िंदा कारतूसों के साथ धर दबोचा गया. पुलिस के हत्थे चढ़ी शबनम उर्फ चांद ने बताया कि उसकी ग़रीबी देखकर एक फरिश्ते को दया आ गई. उसके घर में रोज चूल्हा नहीं जल पाता था. जलता भी था तो किसी तरह सिर्फ शाम को. उस शाम किसी तरह पेट भर जाता था, लेकिन दूसरी शाम भोजन के लिए सोचना पड़ता था. इस स्थिति से उबरने के लिए उसने हथियारों का थैला मंतव्य तक पहुंचाने का काम शुरू कर दिया. इसकी एवज में उसे बंधी-बंधाई रकम मिलने लगी और घर की बदहाली दूर होने लगी. उसे यह भी पता नहीं होता था कि जिस थैले को वह बताए गए स्थान तक पहुंचाती है, उसमें रखा सामान आख़िर है क्या. उसने कभी थैले को खोलकर देखा ही नहीं. उसे तो बस इस बात से मतलब रहा कि वह जितनी बार थैले को पहुंचाएगी, प्रति खेप दो सौ रुपये उसे मिलेंगे. वह इस धंधे में मुख्य सरगना के बारे में तो नहीं बता पाई, लेकिन उसने इतना ज़रूर बताया कि वह पिछले दस माह से यह काम कर रही है. एक बार भी पकड़ी नहीं गई. शबनम अकेली बच्ची नहीं है, जिसने ऐसे ख़तरनाक काम से अपना नाता जोड़ रखा था. ऐसी कई बालिकाएं और बालक हैं, जिनके लिए इस धंधे में बने रहना अब मजबूरी बन गई है. जानकार बताते हैं कि बिहार के मुंगेर ज़िले में निर्मित विभिन्न तरह के हथियार देश के कोने-कोने में बेचे जाते हैं. पुलिस की सतर्क नज़रों से बचने के लिए तस्करों ने छोटे-छोटे बच्चों को इस धंधे में झोंक दिया. पुलिस बच्चों पर शक नहीं करती. शबनम उर्फ चांद की पचपन वर्षीय मां असीमा ख़ातून ने बताया कि वह अपने दामाद के माध्यम से उक्त हथियार उत्तर प्रदेश में खपाती है. इसकी एवज में उसे अच्छी-ख़ासी कमाई हो जाती है. असीमा ने भी मुख्य सरगना का नाम बताने से इंकार कर दिया. इस काम में अपनी बच्ची की संलिप्तता पर उसने बेबाकी से साफ कहा कि शबनम उर्फ चांद पर पुलिस को शक नहीं होता था. इसलिए उसी के हाथों हथियार भेजे जाने लगे. मुंगेर की एक अवैध मिनीगन फैक्ट्री के कारीगर ने बताया कि यहां निर्मित विभिन्न हथियारों की गुणवत्ता इतनी अच्छी होती है कि विदेशी हथियार बताकर उन्हें मोटी क़ीमत पर बेच दिया जाता है. ख़रीदार को इस तरह के हथियार मेड इन अमेरिका, मेड इन जापान सहित अन्य जगहों की फ़र्जी मुहर लगाकर बेचे जाते हैं. हथियार इस तरह बनाए जाते हैं कि शक होने का सवाल ही पैदा नहीं होता. कारीगर के मुताबिक मुंगेर ज़िले के विभिन्न इलाक़ों में अवैध तरीक़े से हथियार बनाने का काम कुटीर उद्योग का रूप ले चुका है. कई बार मुंबई या अन्य शहरों में हथियार बरामदगी के बाद मुंगेर का नाम जब सामने आया, तब कुछ दिनों के लिए धंधे पर विराम लग गया. बाद में फिर धीरे-धीरे यह धंधा परवान चढ़ने लगा. इस धंधे में मुंगेर, खगड़िया एवं बेगूसराय के लगभग दस हज़ार लोग जुड़े हुए हैं. बच्चों के प्रति समाज और पुलिस की नरमी के कारण व्यापक पैमाने पर उन्हें इस धंधे से जोड़ा जाने लगा है.

**लोगों के मुंह से यह बरबस निकलने लगा है कि पेट के ख़ातिर शबनम बनने लगी है शोला. बेरोकटोक चल रहे इस धंधे का ख़ौफ़नाक सच तब सामने आया जब खगड़िया ज़िले के महेशखूंट स्टेशन से एक दस वर्षीय बच्ची को तीन देसी कट्टे तथा ज़िंदा कारतूस के साथ दबोचा गया. पुलिस के हत्थे चढ़ी शबनम उर्फ चांद ने बताया कि ग़रीबी को देखकर एक फ़रिश्ते को दया आ गई.**

महेशखूंट के रेल थानाध्यक्ष पी के दास ने भी माना कि ग़रीब और लाचार बच्चों द्वारा अवैध हथियारों को बाज़ार में खपाए जाने का मामला कई बार सामने आया, लेकिन प्रयासों के बाद भी इस तरह के बच्चे हथियारों के साथ गिरफ्त में नहीं आए. समाजसेवी नागेंद्र सिंह त्यागी का कहना है कि संगठित गिरोहों द्वारा बच्चों को अपराध के दलदल में ढकेला जा रहा है. ग़रीबी और विवशता के कारण बच्चे इस धंधे से नाता जोड़ बैठे हैं. कहने को तो बच्चों के भविष्य निर्माण के नाम पर सरकार द्वारा तरह-तरह की योजनाएं चलाई जा रही हैं, लेकिन अफसरों और भ्रष्ट जन प्रतिनिधियों के कारण उक्त योजनाएं पूरी तरह ज़मीन पर उतर नहीं पाती हैं. इस धंधे में बच्चों की संलिप्तता तभी रोकी जा सकती है, जब हर हाथ को काम और भरपेट भोजन नसीब हो सके. बच्चों द्वारा हथियार तस्करी का मामला बहुत गंभीर है. अगर समय रहते सरकार, प्रशासन एवं समाज के ज़िम्मेदार लोग सचेत न हुए तो आने वाले समय में उनके सामने पछताने के अलावा और कोई चारा शेष नहीं रहेगा.

राजेश सिन्हा
feedback@chauthiduniya.com

# समस्तीपुर में चुनावी सरगर्मी बढ़ी



विकास कुमार

झारखंड में संपन्न हुए विधानसभा चुनाव एवं सरकार गठन के बाद अब बिहार में भी आगामी विधानसभा चुनाव की सरगर्मी दिखने लगी है. उत्तर बिहार के प्रमुख राजनीतिक केंद्र समस्तीपुर में आगामी विधानसभा चुनाव की सुगबुगाहट तेज़ हो गई है. सभी प्रमुख राजनीतिक दलों के कार्यालयों में संभावित उम्मीदवारों की आवाजाही तेज़ हो चली है. ज़िले के सभी दस विधानसभा क्षेत्रों में राजद–लोजपा, भाजपा–जदयू के अलावा कांग्रेस के संभावित उम्मीदवारों की चहलकदमी देखकर ऐसा लगता है कि प्राय: सभी दलों में टिकट को लेकर सिर फुटौव्वल की स्थिति रहेगी, क्योंकि चुनाव लड़ने वालों की फेहरिस्त काफी लंबी है.

बिहार कांग्रेस प्रभारी जगदीश टाइटलर के प्रभाव से प्रदेश अध्यक्ष अनिल कुमार शर्मा द्वारा प्रदेश कमेटी एवं पदाधिकारियों की सूची जारी करने के बाद ज़िले के पूर्व कांग्रेस विधान पार्षद हरिनारायण चौधरी एवं पूर्व बिहार युवा कांग्रेस अध्यक्ष तरुण कुमार के समर्थक फूले नहीं समा रहे हैं. कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी ने जैसे ही सूची को हरी झंडी दी, वैसे ही बिहार कांग्रेस विधानमंडल के नेता डॉ. अशोक कुमार के समर्थकों में ख़ुशी की लहर दौड़ गई. अभी से ही विधानसभा चुनाव 2010 के लिए ज़िले के विभिन्न विधानसभा क्षेत्रों से संभावित उम्मीदवारों के नामों की चर्चा शुरू हो गई है. ज़िले के कांग्रेसियों का दावा है कि बिहार में एकला चलो की नीति राजनीतिक रूप से कारगर साबित हुई है. इतना ही नहीं, पल–पल कांग्रेस समर्थकों की संख्या में इजाफा हो रहा है. ज़िले के सभी विधानसभा क्षेत्रों में अभी से संभावित उम्मीदवारों को ज़िला कमेटी की ओर से बूथ कमेटी के गठन का निर्देश दे दिया गया है.



तरुण कुमार

ग़ौरतलब है कि ज़िले की राजनीति पिछले संसदीय चुनाव से ही बदल रही है, क्योंकि पूर्व कांग्रेसी विधायक चंद्रबली ठाकुर, जो पिछला चुनाव विभूतिपुर विधानसभा क्षेत्र से भाजपा के चुनाव चिन्ह पर लड़े थे, वह पुन: कांग्रेस में वापस आ गए हैं. वहीं पूर्व लोजपा विधायक प्रो. शील कुमार राय ने भी रामविलास पासवान का दामन छोड़कर राहुल गांधी का दामन थाम लिया और उन्होंने गत संसदीय चुनाव भी ज़िले के नवगठित उजियारपुर संसदीय क्षेत्र से लड़कर कांग्रेस में जान फूंक दी. पूर्व विधायक चंद्रबली ठाकुर की कांग्रेस में पुनर्वापसी को लेकर ज़िला कांग्रेस कमेटी में खलबली मची है. मौजूदा नेतृत्व भविष्य में इसे खतरे की घंटी के रूप में देख रहा है, क्योंकि पूर्व विधायक ज़िला कांग्रेस कमेटी के कार्यकारी अध्यक्ष पद को सुशोभित कर चुके हैं और फिलहाल पूरे ज़िले में भ्रमण कर राहुल गांधी का संदेश पहुंचा रहे हैं. इसका सकारात्मक परिणाम भी खुलकर सामने आने लगा है. पिछले दिसंबर में कांग्रेस द्वारा जारी सदस्यता अभियान में बड़ी संख्या में भूले–भटके कांग्रेसजन फिर से अपने पुराने घर लौटे हैं. जबकि ज़िले में कांग्रेस की सुधरती स्थिति से सबसे ज़्यादा परेशान ज़िला भाजपा के अध्यक्ष प्रो. विजय कुमार शर्मा हैं और उन्होंने प्रखंडों का दौरा तेज़ कर दिया है.



प्रो. शील कुमार राय

जैसे–जैसे समय बीत रहा है, वैसे–वैसे मौजूदा विधायक से लेकर पूर्व विधायक एवं पार्टियों के संभावित उम्मीदवारों का दौरा विभिन्न क्षेत्रों में बढ़ता जा रहा है. आगामी विधानसभा चुनाव नए परिसीमन के अंतर्गत होगा, जिसमें कल्याणपुर एवं रोसड़ा विधानसभा क्षेत्र सामान्य से सुरक्षित और वारिसनगर विधानसभा क्षेत्र सुरक्षित से सामान्य हो जाने से वहां के मौजूदा विधायक निकट के विधानसभा क्षेत्रों में डेरा डालने लगे हैं. ज़िले में राजद के छह और लोजपा, कांग्रेस, सीपीएम एवं जदयू के एक–एक विधायक हैं, जिनमें कल्याणपुर, रोसड़ा, वारिसनगर, दलसिंहसराय, सिंघिया विधानसभा क्षेत्रों के विधायकों को नया क्षेत्र पकड़ने के लिए ज़िले से लेकर राज्य के पार्टी कार्यालयों में नियमित रूप से हाजिरी देनी पड़ रही है. नए परिसीमन के अतंर्गत सिंघिया एवं दलसिंगसराय क्षेत्र को खत्म कर कुशेश्वरस्थान, मोरबा एवं उजियारपुर विधानसभा क्षेत्रों का गठन किया गया है. कांग्रेस बिहार विधानमंडल के नेता डॉ. अशोक कुमार के कुशेश्वरस्थान से चुनाव लड़ने की चर्चा काफी ज़ोरों पर है. वहीं दलसिंहसराय विधानसभा क्षेत्र समाप्त हो जाने से मौजूदा राजद विधायक रामलखन महतो नवगठित उजियारपुर विधानसभा क्षेत्र से चुनाव लड़ने की बात अपने समर्थकों से कह रहे हैं. इसी तरह कल्याणपुर एवं वारिसनगर विधानसभा क्षेत्र का स्वरूप बदल जाने से वहां के राजद विधायक क्रमश: अशोक वर्मा एवं लोजपा विधायक विश्वनाथ पासवान परेशानी में हैं कि आख़िर अगला चुनाव वे किस क्षेत्र से लड़ेंगे? रोसड़ा विधानसभा क्षेत्र सुरक्षित हो जाने से वहां के मौजूदा राजद विधायक गजेंद्र प्रसाद सिंह वारिसनगर क्षेत्र से चुनाव लड़ने की तैयारी करते दिख रहे हैं. जदयू के पूर्व विधायक अशोक कुमार उर्फ मुन्ना भी रोसड़ा छोड़कर वारिसनगर की ओर मुखातिब हो चुके हैं. यदि पूर्व जदयू विधायक अशोक कुमार उर्फ मुन्ना वारिसनगर क्षेत्र से किस्मत आजमाएंगे तो रोसड़ा सुरक्षित सीट पर भाजपा कोई दमदार प्रत्याशी देकर चुनाव में सरगर्मी पैदा करेगी. आगामी विधानसभा चुनाव में ज़िले में एक बार फिर पूर्व सांसदों के चुनाव लड़ने की चर्चा जोरों पर है, जिसमें राजद के पूर्व सांसद पीतांबर पासवान एवं भाजपा के पूर्व सांसद डॉ. संजय पासवान के नाम सामने आ रहे हैं.



अशोक वर्मा

ज़िले की राजनीति में रोसड़ा सुरक्षित सीट राजद, कांग्रेस, लोजपा, जदयू एवं भाजपा के लिए राजनीतिक प्रतिष्ठा वाली मानी जा रही है. इस सीट को लेकर दोनों गठबंधनों के दलों में रस्साकशी होने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता. वामपंथियों के लेनिनग्राद के रूप में विख्यात विभूतिपुर विधानसभा क्षेत्र से सीपीएम विधायक दल के नेता रामदेव वर्मा लगातार चार बार से चुनाव जीतते आ रहे हैं. हर बार उनका सामना पूर्व विधायक चंद्रबली ठाकुर से हुआ. इस बार फिर रामदेव वर्मा और चंद्रबली ठाकुर आमने–सामने होंगे. वाम मोर्चा यदि आगामी विधानसभा चुनाव अकेले लड़ती है तो इस क्षेत्र से पूर्व लोजपा प्रत्याशी रामबालक सिंह एक बार फिर बंगला निशान लेकर मैदान में निश्चित रूप से उतरेंगे, क्योंकि पिछले चुनाव में वह मामूली अंतर से हार गए थे. ज़िले के अन्य राजद विधायक रामचंद्र सिंह निषाद सरायरंजन विधानसभा क्षेत्र एवं मोहिउद्दीनगर के राजद विधायक अजय कुमार बुल्गानिन क्षेत्र के बदले हुए मिजाज को भांपते हुए किसी दूसरे विधानसभा क्षेत्र में पलायन की रणनीति में जुटे हैं. नवगठित मोरबा एवं उजियारपुर विधानसभा क्षेत्रों में भी रोज–रोज नए संभावित प्रत्याशियों की चर्चा होती है, जिसमें उजियारपुर के पूर्व प्रखंड प्रमुख दुर्गा प्रसाद सिंह एवं मोरबा के वर्तमान प्रखंड प्रमुख भाजपा नेता सुरेश राय के नाम प्रमुखता से लिए जा रहे हैं. लोजपा से कांग्रेस में आने के बाद से पूर्व विधायक प्रो. शील कुमार राय की निगाहें मोरबा विधानसभा पर टिकी हैं. इस विधानसभा क्षेत्र से राजद के टिकट पर जननायक कर्पूरी ठाकुर के पुत्र डॉ. विरेंद्र ठाकुर के नाम की भी चर्चा है. कर्पूरी ठाकुर के प्रतिनिधित्व वाले समस्तीपुर विधानसभा क्षेत्र से बिहार सरकार के मौजूदा विधि सूचना एवं जनसंपर्क मंत्री रामनाथ ठाकुर लगातार तीन बार से चुनाव जीत रहे हैं. इस बार वहां से पूर्व विधायक एवं शिक्षा मंत्री अशोक सिंह की भी चर्चा हो रही है. पिछले संसदीय चुनाव में पूर्व शिक्षा मंत्री ने लोजपा प्रमुख रामविलास पासवान को छोड़कर मुख्यमंत्री नीतीश कुमार का दामन थाम लिया है. इस क्षेत्र से कई दमदार नेता चुनाव लड़ने की सोच रहे हैं, जिनमें राजद के प्रो. शाहिद अहमद, ज़िला पार्षद शकुंतला वर्मा, कांग्रेस के प्रांतीय सचिव तरुण कुमार, वरीय कांग्रेसी नेता विश्वनाथ साह एवं विशेश्वर राय प्रमुख हैं.



रामबालक सिंह

उत्तर बिहार का प्रमुख राजनीतिक केंद्र होने के कारण समस्तीपुर में अक्सर विभिन्न दलों के वरिष्ठ नेताओं का दौरा होता रहता है. हर दिन किसी न किसी राजनेता के यहां अगवानी में हज़ारों लोग जुटे रहते हैं और संभावित उम्मीदवारों को टिकट मिलने की चर्चा जोर–शोर से होती रहती है. हर गठबंधन की ओर से सभी क्षेत्रों में प्रत्याशी उतारे जाने की संभावना है. संभावना यह भी है कि हर क्षेत्र में कांग्रेस मुख्य मुकाबले में होगी.



प्रो. शहिद अहमद

feedback@chauthiduniya.com

# दाल के कटोरे की चमक फीकी पड़ी



कृषि आधारित राज्य बिहार के किसान बड़े ही अजीबोगरीब दौर से गुज़र रहे हैं. सूबे की भौगोलिक बनावट और आपदाओं की मार ने किसानों की कमर तोड़ दी है. उनके जख्मों पर मरहम लगाने का दावा करने वाली सरकारी एवं गैर सरकारी एजेंसियों के कारनामे किसानों के नाम पर हो रही हीलाहवाली साफ बयां करते हैं. पूर्वोत्तर ज़िले का अधिकांश भू–भाग हर साल बाढ़ की चपेट में आ जाता है. गंगा, गंडक, कोसी और कमला बलान किसानों को ख़ून के आंसू रूलाती हैं. वहीं दक्षिण बिहार का अधिकांश भू–भाग पठारी है या फिर नक्सल प्रभावित. इस वजह से इलाक़े के किसानों के लिए खेती अब निर्भरता का जरिया नहीं रह गई है. कुल मिलाकर मध्य बिहार के मैदानी इलाक़े ही राज्य की अर्थ व्यवस्था यानी कृषि का मूल आधार रह गए हैं. इनमें बाढ़, बड़हिया और टाल क्षेत्र राज्य के सबसे बड़े कृषि फार्म हैं. लगभग 1064 वर्ग मील में फैले टाल क्षेत्र की सीमा पटना, नालंदा, शेखपुरा और लखीसराय ज़िलों तक फैली है. दलहन फसल के उत्पादन में टाल क्षेत्र देश में पहला और एशिया में दूसरा स्थान रखता है. इस कारण इसे दाल का कटोरा भी कहा जाता है. इस विस्तृत भू–भाग में मसूर, चना, मटर और अरहर जैसी फसलें बड़े पैमाने पर होती हैं. टाल क्षेत्र में बसने वाली क़रीब दस लाख से अधिक आबादी पूरी तरह दलहन की फसल पर ही निर्भर करती है. यह अत्यंत छिछला इलाक़ा है. काली मिट्टी पाए जाने के कारण टाल की भूमि अत्यंत उर्वर मानी जाती है. इस इलाक़े के किसान खेतिहर ज़मीन की जुताई के बाद केवल बीज का छिड़काव करते हैं और तय अवधि के बाद वे अपनी फसलों को काटने के लिए ही खेत पर जाते हैं. इस दौरान न तो सिंचाई करने की ज़रूरत होती है और न उर्वरक डालने की. इस वजह से टाल को सोना उगाने वाली धरती भी कहा जाता है. मगर, हाल के वर्षों में प्राकृतिक आपदाओं के कारण देश के सबसे बड़े दलहन उत्पादक क्षेत्र के किसानों की कमर कमज़ोर हो चली है. दीगर बात यह है कि प्रदेश सरकार ने कृषि का विकास करने के लिए क़रीब साढ़े छह हज़ार करोड़ रुपये का नया कृषि रोड मैप तैयार किया है, लेकिन टाल क्षेत्र में सरकार की इस योजना की परछाई अब तक नहीं पड़ी है. टाल के किसान अब भी परंपरागत और दशकों पुराने ढर्रे पर खेती करने को विवश हैं. देश भर में कृषि तकनीक को बढ़ावा देने के लिए गठित कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंध अभिकरण यानी आत्मा का कारनामा भी कम रोचक नहीं रहा. देश भर में जो इलाक़ा दाल की खेती के लिए मशहूर रहा और जहां की जलवायु, मिट्टी एवं आबोहवा दलहन की खेती को बढ़ावा देती है, वहां की स्थिति चिंताजनक है. आत्मा इस क्षेत्र में सब्ज़ी उत्पादन को बढ़ावा देने की योजना चला रही है. आत्मा द्वारा अनुसंशित अधिकांश योजनाएं सब्ज़ी उत्पादन से जुड़ी हैं. इनमें रेड कैवेज, चुकंदर, टमाटर एवं प्याज की उन्नत किस्मों की फसल शामिल है. इसके तहत किसानों को एक से लेकर पांच दिनों तक प्रशिक्षण दिया जा रहा है. जबकि असलियत यह है कि धान की खेती के मौसम में टाल का पूरा इलाक़ा बाढ़ के पानी से जलमग्न रहता है. किसानों की बदहाली दूर करने के नाम पर ऐसे प्रशिक्षणों के माध्यम से हर माह करोड़ों रुपये के वारे–न्यारे किए जा रहे हैं. ऐसे में इन किसानों के हिस्से कितना पैसा आता होगा, यह कहने की ज़रूरत नहीं है.

**वैसे टाल के किसानों की बदक़िस्मती यहीं ख़त्म नहीं होती. बारिश के दिनों में चार माह तक यह इलाक़ा पूरी तरह जलमग्न हो जाता है, जो यहां के किसानों के लिए अभिशाप है. नतीजतन, साल भर में वे महज़ एक ही फसल उगा पाते हैं. टाल के किसान दशकों से इस समस्या को झेलते आ रहे हैं, लेकिन आज़ादी के छह दशक गुज़रने के बाद भी केंद्र और राज्य सरकार टाल के किसानों को दोहरी फसल का लाभ दिलाने में नाकाम रही हैं.**

वैसे टाल के किसानों की बदकिस्मती यहीं खत्म नहीं होती. बारिश के दिनों में चार माह तक यह इलाक़ा पूरी तरह जलमग्न हो जाता है, जो यहां के किसानों के लिए अभिशाप है. नतीजतन, साल भर में वे महज़ एक ही फसल उगा पाते हैं. टाल के किसान दशकों से इस समस्या को झेलते आ रहे हैं, लेकिन आज़ादी के छह दशक गुज़रने के बाद भी केंद्र और राज्य सरकार टाल के किसानों को दोहरी फसल का लाभ दिलाने में नाकाम रही हैं. दरअसल इसी टाल की राजनीति के जरिए संसद की गलियों तक पहुंचने वाले पूर्व सांसद नीतीश कुमार ने क्षेत्र के लोगों को भरोसा दिलाया था कि केंद्र में उनकी सरकार बनी तो टाल का विकास किया जाएगा. केंद्र में उनकी सरकार भी बनी. नीतीश कुमार कुछ समय के लिए कृषि मंत्री भी बनाए गए, लेकिन इस क्षेत्र का ज़्यादा विकास नहीं हुआ. हां, इस दरम्यान उन्होंने बाढ़ में कृषि विज्ञान केंद्र की स्थापना जरूर कराई. उनके कार्यकाल में टाल के विकास को लेकर एक योजना भी बनाई गई, जिसके तहत प्रमुख इलाक़ों में बड़े बांध बनाकर बाढ़ के पानी को रोकना था, ताकि बाढ़ के दिनों में पानी खेतों के बजाय नहरों और नदियों से होकर निकल जाए. लेकिन, इस योजना के लिए जारी करोड़ों रुपये का बंदरबांट हो गया. इस काम को कराने का जिम्मा उठाने वाले एक बाहुबली राजनेता और उनके गुर्गों ने किसानों के अरमानों को तोड़ डाला. नतीजतन, देश भर को दाल की आपूर्ति करने वाले टाल के किसान आज भी फटेहाल हैं. तत्कालीन सांसद अब सूबे के निजाम बन चुके हैं. बावजूद इसके टाल क्षेत्र के विकास के लिए पायलट परियोजना अभी तक लागू नहीं हो सकी है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

## पायलट परियोजना क्या है?

टाल क्षेत्र के विकास के लिए छोटी–छोटी योजनाओं के बजाय विशेषज्ञों ने एक पायलट परियोजना को मूर्त रूप देने की वकालत दशकों पूर्व की थी. चूंकि टाल की मिट्टी फसल उत्पादन के लिए क्षमता से ज़्यादा उर्वर है. उसकी उर्वरता के पीछे हर साल आने वाला बाढ़ का पानी है. जानकारों की राय में काली–चिकनी मिट्टी में फसल की जड़ों को कसने और भरपूर पोषण देने की क्षमता होती है. यही वजह है कि टाल की खेती में किसानों को न तो खाद देने की ज़रूरत पड़ती है और न ही सिंचाई करने की. बस बीज डालो और फसल काटो. लेकिन चार माह तक पानी में डूबे रहने के कारण टाल के किसान अपने खेतों में एक ही फसल का लाभ उठा पाते हैं. इसी को ध्यान में रखकर अस्सी के दशक में विशेषज्ञों ने पायलट परियोजना के जरिए टाल विकास की वकालत की थी. इस परियोजना के तहत फतुहा से लेकर बड़हिया तक फैले टाल क्षेत्र को सीमित जोन में बांटकर बाढ़ के पानी से बचाव करना था, ताकि बरसात के दिनों में भी फसलें महफ़ूज रह सकें. विशेषज्ञों ने इस बात पर भी जोर दिया कि टाल में योजनाबद्ध तरीक़े से नहरों का जाल बिछाया जाए. इन नहरों को टाल में बहने वाली महाने, बाड़ी, डगराइन समेत अन्य छोटी नदियों से जोड़ दिया जाए, ताकि बाढ़ का पानी खेतों में जाने के बजाय नहरों से होता हुआ इन नदियों में जा मिले. हालांकि इस योजना का दूसरा पहलू यह था कि गर्मी के दिनों में जब नहरों में पानी जमा होगा, तब इलाक़े के किसान नहरों से सिंचाई कर अच्छी उपज हासिल कर सकेंगे. योजना के क्रियान्वित हो जाने के बाद टाल क्षेत्र में दोहरी फसल की संभावना बन सकती है. योजना के साकार होने में अरबों रुपये खर्च आने का अनुमान है. लेकिन, यह योजना महज़ राजनीतिक गलियारों में चर्चा तक सिमट कर रह गई और केंद्रीय कृषि मंत्री के ओहदे से उतरने के बाद तत्कालीन सांसद नीतीश कुमार भी इस मुद्दे को भूल गए.

# नालंदा का विकास अधर में लटका

विकास का मुद्दा किसे रास नहीं आता और कौन ऐसा राजनेता होगा, जो इसे भुनाना नहीं चाहेगा, लेकिन सरकार की आपसी खींचतान के कारण नालंदा की कई बड़ी परियोजनाएं अधर में लटकी हैं. यह खींचतान बदस्तूर जारी है. केंद्र में राजग सरकार के कार्यकाल में नालंदा में शुरू हुई कई परियोजनाएं ख़राब दौर से गुजर रही हैं. अगर राजगीर के आयुध कारखाने की ओर नज़र डालें तो निराशा ही हाथ लगती है. इस चिर–प्रतीक्षित कारखाने में उत्पादन अभी तक शुरू नहीं पाया है. विश्व का दूसरा अत्याधुनिक कारखाना बनने का ख्वाब संजोए हुए यह तीन समय सीमाओं पर खरा नहीं उतर सका है. 1998 में तत्कालीन रक्षा मंत्री एवं नालंदा लोकसभा से पहली बार चुनाव लड़कर रिकॉर्ड मतों से जीतने वाले जॉर्ज फर्नांडीस ने कारखाने की नींव रखी थी. उन्होंने नालंदा की जनता को आयुध फैक्ट्री, सैनिक स्कूल और केंद्रीय बीड़ी श्रमिक अस्पताल तोहफे में दिए थे. नालंदा सैनिक स्कूल और केंद्रीय बीड़ी श्रमिक अस्पताल तो काम रहे हैं, लेकिन आयुध कारखाना अभी तक अधूरा है. नींव रखते समय इसे वर्ष 2002 में पूरा कर उत्पादन शुरू करने की घोषणा हुई थी, लेकिन 2002 में इस कारखाने की चाहरदीवारी का निर्माण कार्य ही शुरू हो सका. एक बार फिर 2004 में इसे पूरा करने का लक्ष्य तय हुआ, लेकिन नतीजा सिफर रहा.

आयुध निर्माणी बोर्ड राजगीर के अनुसार, कारखाने की उत्पादन यूनिट का निर्माण इस वर्ष से शुरू हो जाने की उम्मीद है. हालांकि कारखाने की चाहरदीवारी, टाउनशिप एरिया, प्रशासनिक भवन, रिजर्व स्टोर गोदाम, जलमीनार, आवासीय कॉलोनी, बाजार प्रांगण और सड़क आदि का निर्माण कर लिया गया है. 3,300 एकड़ भूमि में बन रहे इस कारखाने पर साढ़े तीन हज़ार करोड़ रुपये व्यय हुए हैं. यहां बोफोर्स के बारूद–गोले का उत्पादन होगा. दरअसल, इस आयुध कारखाने की उत्पादन यूनिट के निर्माण में देरी होने की एक वजह यह भी बताई जा रही है कि इस यूनिट को वर्तमान रक्षा मंत्री प्रणब मुखर्जी पश्चिम बंगाल में बन रहे दूसरे आयुध कारखाने में ले जाना चाहते थे, लेकिन कुछ राजग सांसदों द्वारा विरोध करने और मुख्यमंत्री नीतीश कुमार की मुखर्जी से निजी भेंट के बाद मामला ठंडा पड़ा. बाद में रक्षा मंत्री ने फरवरी 2006 में एक टीम राजगीर भेजकर जांच कराई. टीम ने रिपोर्ट में कहा था कि इस कारखाने में 500 करोड़ रुपये से अधिक राशि व्यय हो चुकी है, ऐसे में कारखाने को बंद करना मुनासिब नहीं है. आयुध कारखाने के महाप्रबंधक अशोक कुमार के अनुसार, राजगीर आयुध कारखाना बनकर तैयार हो चुका है. यहां सिर्फ़ उत्पादन शुरू होना है. वैसे उत्पादन के लिए प्लांट की व्यवस्था युद्धस्तर पर की जा रही है.



निर्माणधीन हरनौत कोच फैक्ट्री.




अब बात रेल परियोजनाओं की. केंद्र में राजग सरकार और पूर्व रेल मंत्री नीतीश कुमार के कार्यकाल में चार बड़ी रेल परियोजनाएं यहां शुरू की गई थीं, जिसमें फतुहा–इस्लामपुर रेल लाइन निर्माण कार्य को नीतीश ने रेल मंत्री रहते हुए पूरा करा लिया था, लेकिन शेष परियोजनाएं इतनी खुशकिस्मत नहीं रहीं. ऐसी ही परियोजनाओं में एक नाम हरनौत रेल कोच फैक्ट्री का भी है. पूर्व राष्ट्रपति डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम ने वर्ष 2003 में 100 करोड़ रुपये की लागत से बनने वाली रेल कोच फैक्ट्री का शिलान्यास किया था, जिसका निर्माण 2007 तक पूरा हो जाना था, लेकिन अभी तक यह फैक्ट्री बनकर तैयार नहीं हुई है. हालांकि तत्कालीन रेलमंत्री लालू प्रसाद के जाने के बाद वर्तमान रेलमंत्री ममता बनर्जी के कार्यकाल में सिर्फ़ हरनौत रेल कोच फैक्ट्री के निर्माण कार्य में तेजी आई है. फिर भी इसे पूरा होने में अभी एक वर्ष और लग सकता है. कोच फैक्ट्री के इपील के उपाध्यक्ष अश्विनी कुमार का कहना है कि निर्माण कार्य युद्धस्तर पर जारी है और उम्मीद है कि साल के अंत तक यह पूरा हो जाएगा. कोच फैक्ट्री की चाहरदीवारी, भवन, पुल और सड़क के काम लगभग पूरे होने को हैं. मुख्यमंत्री नीतीश कुमार बार–बार दावा कर रहे हैं कि उनके रेल मंत्री कार्यकाल के रेल बजट 2003–04 में ही इस फैक्ट्री के निर्माण को स्वीकृति प्रदान की गई थी. बावजूद इसके पूर्व रेलमंत्री लालू प्रसाद ने इस फैक्ट्री को पूरा नहीं होने दिया. इस बाबत लालू प्रसाद भी अपनी सफाई दे चुके हैं कि नीतीश हरनौत रेल कोच फैक्ट्री को अपने बजट में नहीं रखना चाहते थे. सिर्फ़ उन्होंने लोकसभा चुनाव में फायदे के लिए आनन–फानन में इसका शिलान्यास करा दिया था. इसी प्रकार इस्लामपुर से नटेशर, दनियावां से शेखपुरा रेल लाइन निर्माण कार्य वर्षों से रुका पड़ा है. इस्लामपुर के पान अनुसंधान केंद्र और चंडी के जैविक खाद कारखाने का काम भी अभी तक शुरू नहीं हुआ है. इन परियोजनाओं का हश्र देख नालंदा की जनता में अन्य योजनाओं को लेकर संशय है, क्योंकि मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के चार वर्षों के कार्यकाल में नालंदा में शुरू की गई डेंटल कॉलेज, मेडिकल कॉलेज और चीनी मिल सहित कई बड़ी परियोजनाएं अभी तक शुरू नहीं हुई हैं. राजगीर के छबिलापुर में प्रस्तावित नालंदा विश्वविद्यालय की स्थापना की दिशा में अभी तक कोई ठोस कार्य नहीं हुआ है. ज़िला प्रशासन का कहना है कि विश्वविद्यालय की स्थापना का जिम्मा बिहार सरकार पर है. निर्माण कार्य शुरू हो चुका है. इसके लिए 450 एकड़ ज़मीन अधिग्रहित कर उस पर झंडा गाड़ दिया गया है.

अनिल तनेजा
feedback@chauthiduniya.com

# शहीद स्थल बाज़ारू संस्कृति की भेंट चढ़ा

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान सीवान के अनेक युवा क्रांतिकारी शहीद हुए थे. उन्होंने आने वाली पीढ़ी के लिए अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया. लेकिन, विडंबना देखिए कि उन वीर सपूतों के बलिदान को भुला कर उनके स्मारकों को बाज़ारू संस्कृति की भेंट चढ़ा दिया गया. इस काम को अंजाम दिया है सीवान नगरपालिका ने. उसने शहीद सराय परिसर को मार्केट कांप्लेक्स में तब्दील कर दिया है, जहां कई शहीदों के स्मारक हैं. नगरपालिका के अधीन इस परिसर में सफाई की समुचित व्यवस्था नहीं है, जबकि इस मार्केट से नगरपालिका को सालाना लाखों रुपये की आमदनी होती है. फिर भी किसी अधिकारी ने इसे दुरुस्त करने की जहमत नहीं उठाई. मार्केट कांप्लेक्स बनने के बाद नगर के संभ्रांत एवं प्रबुद्ध लोगों ने इस बात को कई बार प्रमुखता से उठाया, लेकिन प्रशासन के कानों पर जूं फिर भी नहीं रेंगी. लोगों का कहना है कि सीवान शहर में आज भी कोई सुंदर एवं व्यवस्थित पार्क नहीं है, जिसमें गार्डेन, औषधि पौधे, पुस्तकालय, विद्यालय और देसी चिकित्सालय हो. इसके लिए शहीद सराय उपयुक्त स्थान था.

हालांकि शहीद सराय परिसर में पहले वह सब कुछ था, जो अब नहीं है. मगर, यहां पर मार्केट कांप्लेक्स बन जाने से इसका स्वरूप बिगड़ गया है. लोगों का कहना है कि शासन–प्रशासन को चाहिए कि वह इस शहीद सराय को अपने अधीन करके इसे नवजीवन दे, ताकि आने वाली पीढ़ियां इन वीर शहीदों को स्मरण और नमन कर स्वयं में भी देशप्रेम का जज्बा पैदा करती रहे. आज़ादी के पूर्व इस शहीद सराय का नाम पक्की सराय था. इसके पीछे भी एक कहानी है. शेख बीबी सहदानी नामक एक उदार महिला ने वर्ष 1885 में जनता की भलाई के लिए 9 एकड़ ज़मीन दान में दी. इसके दक्षिण–पूरब भाग में अपने ख़र्च से उसने एक सराय बनवाई थी. बाद में लोगों की मांग पर बीबी सहदानी ने 1901 में सराय के विशाल परिसर में बच्चों के लिए एक प्राथमिक विद्यालय एवं दो धर्मार्थ औषधालयों का निर्माण कराया. सराय के आगे एक हिस्से में कुछ दुकानों का निर्माण भी करा दिया गया, ताकि उसके किराए से विद्यालय एवं औषधालयों का ख़र्च चलता रहे. यह सराय पक्के भवन में होने के कारण पक्की सराय के नाम से प्रसिद्ध हो गई. यह नाम स्वतंत्रता आंदोलन के समय तक प्रचलित था. इस सराय में तब यात्री और विशेषत: अंग्रेज व्यापारी ठहरा करते थे. 1942 के स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान सराय के विशाल प्रांगण में कई अवसरों पर आज़ादी के दीवानों ने जनसभा का आयोजन किया था. ऐसी ही एक सभा में ठेपहां गांव निवासी एवं स्थानीय डीएवी उच्च विद्यालय के दसवीं कक्षा के छात्र बच्चन ने एसडीओ कार्यालय भवन पर तिरंगा झंडा फहराने का निर्णय लिया और वह लोगों को लेकर निकल पड़े. पुलिस ने लाठीचार्ज कर लोगों को खदेड़ दिया. मगर, इसके बावजूद संकल्पबद्ध आज़ादी के दीवानों का हौसला पस्त नहीं हुआ. पुलिस ने उन पर अंधाधुंध फायरिंग की, जिसमें कितने हताहत हुए, इसका कोई अधिकारिक विवरण आज तक उपलब्ध नहीं है. लेकिन, ठेपहां गांव के पल्टू गिरि के मौके पर ही मारे जाने, किशोर छात्र बच्चन के बुरी तरह जख्मी होने और सुखदेव राय को गोली लगने की बात यहां आज भी पुराने लोगों को याद है. बच्चन ने छह महीने तक जीवन–मृत्यु के बीच संघर्ष करते हुए आखिर में दम तोड़ दिया. तभी से पक्की सराय शहीद सराय में तब्दील हो गई. आज़ादी मिलने के बाद शहीद सराय के प्रवेश द्वार पर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की स्मृति में एक सार्वजनिक पुस्तकालय एवं वाचनालय की स्थापना की गई. बाद में सराय के लिए दान में दी गई ज़मीन और भवन पर नगरपालिका ने क़ब्ज़ा कर लिया. जानकारों का यह भी कहना है कि इससे संबंधित एक वाद 4/92 सभापति सिंह बनाम नगरपालिका, न्यायालय में विचाराधीन है. 1989 में ज़िला प्रशासन एवं नगर पालिका ने शहरी विकास के नाम पर बाज़ार परिसर बनाने के लिए शहीद सराय के भवन को गिरा दिया. उसके बाद यह आश्वासन दिया गया कि शहीद स्मारक स्थल पर अमर शहीद बच्चन एवं पल्टू गिरि की प्रतिमा स्थापित की जाएगी और उनके चारों ओर एक सुंदर पार्क बनाया जाएगा, लेकिन प्रशासन आज तक अपना आश्वासन पूरा नहीं कर सका. शहीद स्मारक स्तंभ आज भी अमर शहीदों की प्रतिमा की स्थापना का इंतजार कर रहा है. यही नहीं, इसके लिए शहरी विकास मंत्रालय से नक्शा स्वीकृत कराकर केंद्र सरकार से अनुदान भी लिया गया था, लेकिन निर्माण के समय नक्शे को बदल दिया गया. वर्तमान में नगरपालिका ने इस शहीद स्थल को पूरी तरह व्यवसायिक परिसर में तब्दील कर दिया है. यहां सौ से अधिक दुकानें चल रही हैं.



मार्केट कॉम्पलेक्स में तब्दील शहीद सराय.

**मार्केट कांप्लेक्स बनने के बाद नगर के संभ्रांत एवं प्रबुद्ध लोगों ने इस बात को कई बार प्रमुखता से उठाया, लेकिन प्रशासन के कानों पर जूं फिर भी नहीं रेंगी.**

धनंजय मिश्र
feedback@chauthiduniya.com

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

चौथी दुनिया

दिल्ली, 1 फरवरी–7 फरवरी 2010

कतरास कोयलांचल के विभिन्न स्थानों पर डोजरींग के बाद कोयला तस्कर दोबारा सक्रिय हो जाते हैं. उनके सक्रिय होते ही प्रबंधन और प्रशासन की आंखें बंद हो जाती हैं.



# क़िस्मत हो तो नम्रता जैसी

बात चाहे बॉलीवुड फ़िल्मों की हो या भोजपुरी फ़िल्मों की, दोनों में अभिनेत्रियों को शुरुआत में काफ़ी संघर्ष करना पड़ता है, तब जाकर उन्हें वह मुक़ाम हासिल हो पाता है, जिसके लिए वे दिन-रात पसीना बहाती हैं. लंबे संघर्ष के बाद ही उन्हें बड़े बैनरों के साथ काम करने का मौक़ा मिलता है. लेकिन, कुछ अभिनेत्रियां बहुत भाग्यशाली होती हैं. वे अपनी शुरुआत से ही बड़े बैनरों से जुड़ जाती हैं. ऐसी ही एक भाग्यशाली नायिका हैं नम्रता थापा. उन्होंने हाल ही में भोजपुरिया सिनेमा में पदार्पण किया है. पदार्पण करते ही फ़िल्म *विजय बिहारी माफ़िया* में उनके हुस्न के जलवों की कुछ ऐसी चर्चा हुई कि वह हर बड़े निर्माता-निर्देशक की पहली पसंद बन गई हैं. *विजय बिहारी माफ़िया* में वह भोजपुरिया किंग रवि किशन की प्रेमिका की भूमिका में हैं. रवि के अपोजिट काम करने का मौक़ा हर अभिनेत्री को इतनी जल्दी नहीं मिलता, लेकिन करियर के शुरुआती दौर में ही नम्रता की मादक अदाओं का जादू कुछ ऐसा चला कि अपने रवि भाई भी क्लीन बोल्ड हो गए. चर्चा यह भी है कि रवि अपने होम प्रोडक्शन महादेव *प्रोडक्शन प्राइवेट लि.* की अगली फ़िल्म में भी नम्रता के साथ ही इश्क लड़ाते नज़र आएंगे. ग़ौरतलब है कि *विजय बिहारी माफ़िया* के निर्माता भी रवि किशन थे. अब इसे नम्रता की किस्मत ही कहेंगे कि उनके सारे प्रोजेक्ट बड़े बैनरों के हैं. चाहे उनकी ब्लॉक बस्टर उड़िया फ़िल्में हों या *राजश्री, सिनेवेस्टा* और *सागर आर्ट* के बैनर तले निर्मित धारावाहिक. आपको बता दें कि *नम्रता रावण, नागिन, महिमा शनिदेव की* और *यहां मैं घर घर खेली* जैसे धारावाहिकों में काम कर चुकी हैं. उनकी लोकप्रियता का आलम यह है कि लोग उन्हें अब बिग बैनर वाली अभिनेत्री कहते हैं. नम्रता कहती हैं कि वह सिर्फ़ अपने रोल पर ध्यान देती हैं, बैनर्स पर नहीं. और उम्मीद है कि आगे भी वह अभिनय प्रतिभा के साथ ख़ूबसूरती का दीदार कराती रहेंगी. चलिए आप अपनी एक्टिंग और हुस्न का खेल जारी रखिए, बड़े बैनर्स तो ख़ुद-ब-ख़ुद पीछे आते रहेंगे.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

# मोतीझील का कायापलट कब होगा?

बदहाल मोतीझील

मनोज कुमार राव

पूर्वी चंपारण ज़िले के मुख्यालय मोतिहारी स्थित ख़ूबसूरत मोतीझील के सौंदर्यीकरण के लिए निर्धारित लगभग तीन करोड़ रुपये की धनराशि पिछले कई वर्षों से अधिकारियों और बुद्धिजीवियों के बीच विचार-विमर्श के मायाजाल में फंसी हुई है. अधिकारी ज़िले की कमान संभालने तो आते हैं, मामले से अवगत होते हैं, बैठकों का दौर चलता है, नई योजनाएं बनती हैं, फिर भी मोतीझील की हालत जस की तस है. लाख कोशिशों के बाद भी उसकी तस्वीर नहीं बदल पाई है. आख़िर मोतीझील की ख़ूबसूरती के लिए आवंटित तीन करोड़ रुपये कब ख़र्च किए जाएंगे?

दो किलोमीटर लंबी और लगभग 400 एकड़ क्षेत्र में फैली यह मोतीझील कभी सफ़ेद एवं क्रीमसन कमल के फूलों और साफ़ पानी के लिए मशहूर थी, लेकिन अतिक्रमण की शिकार इस झील के चप्पे-चप्पे पर अब मच्छरों का साम्राज्य क़ायम है. धनौती नदी से होती हुई अंतत: गंडक नदी में मिलने वाली इस झील को गंडक प्रोजेक्ट के अंतर्गत गंडक नदी के मुख्य केनाल से जोड़ने की योजना सरकार ने बनाई थी, लेकिन उसके लिए निर्धारित स्थान भी अतिक्रमण का शिकार हो गया और योजना धरी की धरी रह गई. 1985 में सिंचाई विभाग ने भी इस झील में पानी का बहाव बरक़रार रखने के लिए एक योजना बनाई थी, लेकिन वह भी टांय-टांय फिस्स हो गई. मोतिहारी के एडिशनल कलक्टर हरिशंकर सिंह और बीडीओ विद्यानंद सिंह ने मोतीझील को अतिक्रमण से मुक्त कराने के प्रयास ज़रूर किए, लेकिन वे सफल नहीं हो सके.

पूर्व ज़िलाधिकारी प्रेम सिंह मीणा ने इस झील की ख़ूबसूरती के लिए कमेटी का गठन किया, जिसमें ज़िले के प्रबुद्ध लोगों और मीडिया को भी शामिल किया गया. योजना के हिसाब से आर्किटेक्ट अरशद हाशमी से पूरी रिपोर्ट भी मांगी गई. प्रत्येक मद के लिए पांच से सात लाख रुपये तक की राशि तय की गई. झील के बीच में रिवाल्विंग रेस्तरां, किनारों पर घाट एवं विदेशी स्टीमर के लिए अलग-अलग राशि निर्धारित की गई. प्रेम सिंह मीणा के इस प्रयास से शहरवासियों को ऐसा लगा कि अब मोतीझील वाकई ख़ूबसूरत हो जाएगी, लेकिन इससे पहले कि काम आगे बढ़ता, अचानक मीणा का तबादला हो गया.

उसके बाद जीवन कुमार ज़िलाधिकारी बनकर आए. इस दरम्यान मोतीझील को अतिक्रमण मुक्त बनाने के लिए प्रशासन ने अपने शिकंजे कसे. आर्किटेक्ट अरशद हाशमी फिर याद किए गए. फाइलें बनाई गईं. प्रत्येक मद के लिए अलग-अलग राशि तय की गई, लेकिन जीवन कुमार के समय में फाइलों पर विचार-विमर्श का दौर कुछ इतना लंबा हो गया कि अंतत: उनका भी तबादला हो गया. फिर बतौर ज़िलाधिकारी नर्मदेश्वर लाल ने ज़िले की क़मान संभाली. उनके कार्यकाल में नई उम्मीदों के साथ कार्य को आगे बढ़ाया गया. शहरी विकास योजना के तहत इस कार्य को अमलीजामा पहनाने की पहल की गई. कई बैठकें हुईं, लेकिन जो योजना बनाई गई, उसे महज़ तीन करोड़ रुपये में समेटना संभव नहीं लगा. इसलिए एक बार फिर मोतीझील के सौंदर्यीकरण के काम में तेज़ी नहीं आ सकी. लेकिन, इस ज़िला मुख्यालय में कुछ ऐसे भी काम हुए हैं, जिन्हें अगर आधार बनाया जाए तो शायद विकल्प मिल सकता है और मोतीझील ख़ूबसूरत हो सकती है.

पूर्वी चंपारण के उप विकास आयुक्त शैलेंद्र पांडे के निवास के सामने पतौरा पंचायत स्थित नरेगा पार्क ख़ुद एक मिसाल है. यह पार्क भी मोतीझील के उस किनारे पर स्थित है, जहां कुछ माह पहले तक सुअरों का बसेरा था. इस जगह पर आठ फीट गहरा गड्ढा था और यहां बच्चे बेरोकटोक खेलते थे. उप विकास आयुक्त के प्रयास से महज़ छह माह में केवल 41 लाख रुपये ख़र्च कर इस स्थान पर नरेगा पार्क बनवाया गया. संभवत: यह सूबे में अपनी तरह का पहला नरेगा पार्क है. यहां शहर के लोग सुकून से दो पल गुज़ारते हैं और मोतीझील का भी नज़ारा देखते हैं. डीडीसी शैलेन्द्र पांडे ने बताया कि इस कार्य को अंजाम देने के लिए किसी भी आर्किटेक्ट का सहारा नहीं लिया गया. पार्क में ऐसे कैचपीट लगाए गए हैं, जिससे बारिश का पानी पार्क में जमा न होकर सीधे मोतीझील में चला जाता है. ज़िलाधिकारी नर्मदेश्वर लाल ने बताया कि मोतीझील के सौंदर्यीकरण के लिए जो योजना बनाई गई है, उसके लिए तीन करोड़ रुपये की राशि कम पड़ रही है. इसलिए काम में फ़िलहाल तेज़ी नहीं आ सकी है. शीघ्र ही इस काम को आगे बढ़ाया जाएगा, ताकि मोतीझील ख़ूबसूरत और अतिक्रमण मुक्त हो सके.

चमकता नरेगा पार्क

feedback@chauthiduniya.com

# अवैध उत्खनन : भूख के आगे ज़िंदगी हारी

कोयलांचल के तेतुलमारी एवं निरसा में पेट की आग शांत करने के लिए अवैध कोयला खनन में लगे तीन और मज़दूर काल के गाल में समा गए. इस तरह अकाल मौत के इस अंतहीन सिलसिले में कुछ और कड़ियां जुड़ गईं. कोयलांचल में काल और इंसान के बीच लुकाछुपी का यह खेल अरसे से चला आ रहा है. इसे रोकने की कवायद तो शुरू होती है, लेकिन प्रशासनिक हीलाहवाली के चलते सारे प्रयासों पर पानी फिर जाता है.

सुनसान बंद पड़ी खदानों में रह-रहकर काल चीते की तरह इंसान को झपट लेता है. इस दरम्यान चीख़ पुकार गाहे-बगाहे बाहर तक पहुंचती है तो हंगामा मचता है. परिजन एवं साथी आंसू बहाते हैं और शव उठाकर ले भागते हैं. इतना ही नहीं, उसके बाद चुपचाप उनका अंतिम क्रियाक्रर्म कर दिया जाता है. फिर सब कुछ पुराने ढर्रे पर लौट जाता है.

हालांकि उनके दिलों में अपनों से बिछुड़ने का दर्द तो होता है, मगर आंखों में आंसू नहीं होते. वे सन्नाटे में सिसक तो सकते हैं, मगर खुलेआम रो नहीं सकते. मौत की इन खानों में दो जून की रोटी तलाशने उतरे लोग यह भी जानते हैं कि भाग्य के देवता का ज़रा सा रूठना उन्हें दुनिया से दूर कर सकता है. यूं तो बीसीसीएल का सुरक्षातंत्र और पुलिस-प्रशासन के साथ-साथ समाज के संभ्रांत लोग इन्हें मौत के मुंह में न उतरने की हिदायत देते हैं, लेकिन आएदिन अवैध उत्खनन के दौरान हो रही मौतें इस बात की गवाह हैं कि खदानों में उतरना इन बदक़िस्मतों की मजबूरी है. नतीजतन, किसी के तिज़ोरी में पैसों का ढेर लग रहा है, तो किसी का आंगन सूना हो रहा है, किसी का सुहाग उजड़ रहा है. कई घरों के चिराग मौत की आगोश में समा चुके हैं. सवाल यह उठता है कि मरने वाले करें तो क्या करें, उनकी भूख के आगे ज़िंदगी हार रही है. जब-जब ऐसी घटना होती है, तब-तब प्रशासन और बीसीसीएल प्रबंधन हरकत में आता है और अवैध उत्खनन स्थलों की भराई का ढोंग रचता है.

कतरास कोयलांचल के विभिन्न स्थानों पर डोजरिंग के बाद कोयला तस्कर दोबारा सक्रिय हो जाते हैं. उनके सक्रिय होते ही प्रबंधन और प्रशासन की आंखें बंद हो जाती हैं. इलाक़े का तेतुलिया, मोहूदा, तेतुलमारी, गजलीटांड़, सिजुआ, अकाशकिनारी आदि के अवैध खनन स्थल किसी से छुपे नहीं हैं. इन स्थानों से अच्छे क़िस्म के कोयले को बोरों एवं टबों में भरकर बाहर की मंडियों में भेजा जाता है. सबसे बड़ी बात यह है कि जिन्हें इस काले धंधे पर लगाम लगाने की ज़िम्मेदारी मिली है, वही अप्रत्यक्ष रूप से इसके संरक्षक बने हुए हैं. नतीजतन, रोटी की तलाश कर रहे लोग गहरी काली खदानों में फंसकर मौत के मुंह में समा जाते हैं. क़िस्मत का खेल देखिए कि शवों को अंतिम संस्कार भी नसीब नहीं हो पाता है. मौत का यह खेल हमेशा जारी रहता है, बदलता है तो सिर्फ़ मंच.

झारखंड में कोयले की काली दुनिया का पहली बार पर्दाफ़ाश व्यवस्थित और वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन के बाद एक्सएलआरआई जमशेदपुर और आईएसएम धनबाद की संयुक्त रिपोर्ट में किया गया. रिपोर्ट में इस पर अंकुश लगाने के साथ ही इस काम में लगे ग़रीब लोगों को मुख्यधारा में लाने के उपाय भी सुझाए गए हैं. ग़ौरतलब है कि झारखंड सरकार ने एक्सएलआरआई जमशेदपुर एवं आईएसएम धनबाद को इसके सभी पहलुओं का अध्ययन कर उपाय सुझाने की ज़िम्मेदारी सौंपी थी. यह रिपोर्ट वर्ष 2008 में ही झारखंड सरकार, केंद्र सरकार के कोयला मंत्रालय और कोल इंडिया को सौंप दी गई थी, मगर हादसों पर चिंता जताने वाली केंद्र और राज्य सरकारों ने इसे अमल में लाने की कोई पहल नहीं की.

मालूम हो कि संसद और विधानसभा में कई बार इस संदर्भ में सवाल भी उठे, सरकार ने प्रभावशाली कदम उठाने का भरोसा भी दिलाया, मगर स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया. राष्ट्रपति शासन के दौरान मुख्य सचिव की अध्यक्षता में पुलिस, खुफ़िया विभाग, खनन विभाग एवं कोल कंपनियों के आला अधिकारियों की बैठक हुई थी. मुख्य सचिव ने अवैध खनन के ख़िलाफ़ एनसीए, सीसीए जैसी धाराएं लागू करने की बात कही थी. राज्य भर में संयुक्त चेक पोस्ट को सक्रिय करने और अवैध कोल खनन स्थलों पर छापेमारी की बातें तय हुई थीं, मगर नतीजा सिफर ही रहा.

राजीव रंजन
feedback@chauthiduniya.com

## रिपोर्ट के निष्कर्ष

1. सूबे में अवैध कोयले से हर वर्ष 2.75 अरब रुपये की काली कमाई होती है.
2. बीसीसीएल, ईसीएल और सीसीएल को सालाना 106 करोड़ रुपये का नुक़सान होता है.
3. 107 करोड़ रुपये की मलाई खा रहे हैं अवैध कोयले के ख़रीदार.
4. झारखंड 34 करोड़ रुपये की रायल्टी से वंचित रह जाता है.
5. हर वर्ष क़रीब 13,68,000 टन कोयले का अवैध धंधा होता है.
6. सिर्फ़ साइकिल वालों से हर वर्ष 5.50 करोड़ रुपये की रिश्वत वसूली जा रही है.
7. इस धंधे में कोयला काटने और ढोने वाले लोग सबसे अधिक शोषित हैं.
8. ग़रीबी और बेकारी ही निर्दोष लोगों को काली दुनिया में खींच लाती है.
9. कोल कंपनियां यह कोयला ख़रीदें, ताकि अवैध खनन को वैध बनाया जा सके.
10. केंद्र एवं राज्य सरकार और कोल कंपनियां संयुक्त रूप से खदान क्षेत्र के 5-10 किलोमीटर की परिधि में सामाजिक, शैक्षणिक एवं आर्थिक विकास के कार्यक्रम चलाएं.
11. उद्योगों, घरों, दुकानों, होटलों और ढाबों में अवैध कोयले के उपयोग पर कड़ाई से पाबंदी लगे.